सन्दर्भ ग्रन्थसूची
(BIBLIOGRAPHY)

आहुजा, राम, (1987). *महिलाओं के अधिकार,* जयपुर : रावत पब्लिकेशन.

अग्रवाल, आर. एस.(1979). *ह्यूमन राइट्स इन मॉड़र्न वर्ड़,* नई दिल्ली : चेतना पब्लिकेशन.

अग्रवाल, एच. ओ.,(2002). *अन्तर्राष्ट्रीय कानून और मानवाधिकार,* इलाहबाद : सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन.

बिताई, आन्द्रे,(1977). *द ड़ेफीनेशन ऑफ ट्राईब, ट्राईब कास्ट एण्ड़ रिलीजन,* अहमदाबाद : मेकमिलन एण्ड़ कम्पनी.

दास, गुप्ता, अर्जुन एवं देवेत,(1996). *ह्यूमन राइट्स : ए सोर्स बुक,* नई दिल्ली : एन सी ई आर टी पब्लिकेशन.

दारूवाला, माया,(सम्पा.), (2005). *मानवाधिकार और गरीबी उन्मूलन, राष्ट्र मण्डल के लिए एक सूत्र,* नईदिल्ली : कॉमनवेल्थ ह्यूमन राइट्स इनिशिएटिव.

दास, आर. के. व दास, एस. आर., (1955). इंड़ियाज सबमर्ज्ड़ ह्यूमैनिटी' कलकत्ता : *मॉर्ड़न रिव्यू* पब्लिकेशन

दीवान, पारस एवं दीवान, पियुषी, (1996). ह्यूमन राइट्स इन इण्डिया, नईदिल्ली : दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स.

देसाई, एस. आर.,(1951). *रुरल इंड़िया इन ट्रांजिशन,* बॉम्बे : पोप्युलर पब्लिकेशन.

दोशी, एस. एल. व व्यास, एन. एन.,(2001). *ट्राईब्स ऑफ राजस्थान,* उदयपुर : हिमान्शु पब्लिकेशन.

गुप्ता, आशा, (2004). *जनजातीय सांस्कृतिक अस्मिता (राजस्थान की लोक कला एवं लोक संगीत),* उदयपुर : हिमांशु पब्लिकेशन.

गौतम, रमेशप्रसाद, (2003). *मानवाधिकार : विविध आयाम,* मध्यप्रदेश : विश्वविद्यालय प्रकाशन.

जणवा, मांगीलाल, (2003). *ग्रामीण राजस्थान में भूमि–हस्तान्तरण, जाति–वर्ग सम्बन्ध एवं सामाजिक परिवर्तन : एक सामाजशास्त्रीय अध्ययन,* उदयपुर : समाजशास्त्र विभाग, एम.एल.एस.यू..

जाखड़, दिलीप, (2001). *मानवाधिकार,* जयपुर : यूनिवर्सिटी बुक हाऊस.

जोशी, के.सी., (2010). *अन्तर्राष्ट्रीय विधि और मानव अधिकार,* नई दिल्ली : ईस्टर्न बुक पब्लिकेशन.

जोशी, विचरीक (2002). *आदिवासीयों में मौताणा प्रथा*, उदयपुर : आस्था पब्लिकेशन.

जोशी, आर.पी., (2009). *मानवाधिकार एवं कर्त्तव्य*, अजमेर : अभिनव प्रकाशन.

केवल, रमानी, (1993). *चाईल्ड़ एब्युज*, जयपुर : रावत पब्लिकेशन.

कोठारी, अनिता, (2010). *भारतीय समाज और मानवाधिकार*, जयपुर : आदी प्रकाशन.

कौशिक, आशा संपादित, (2004). *मानव अधिकार और राज्य (बदलते संदर्भ उभरते आयाम)*, जयपुर : पोईन्टर पब्लिकेशन.

लावसान, एड़वर्ड़, (1991). *मानवअधिकार विश्लेषण*, लन्दन : यू. के. टेलर तथा फ्रान्सिस लिमिटेड़.

माथुर, बिनीता, (2004). *ट्राईबल सोसायटी एण्ड़ मेड़िकल केयर : चेन्जिग पेटर्न ऑफ ट्रीटमेन्ट*, उदयपुर : हिमान्शु पब्लिकेशन.

माथुर, कृष्णमोहन, (2000). *स्वातंत्र्योत्तर भारत में मानवाधिकार*, नईदिल्ली : ज्ञान पब्लिशिंग हाऊस.

मीणा, आालोक कुमार, (2014). *भारत में मानव अधिकार : अवधारणा*, जयपुर : पोईन्टर पब्लिशर्स.

नागदा, बी. एल., (2004). *रिप्रोड़क्टीव चाईल्ड़ हेल्थ ऑफ ट्राईब्स ऑफ राजस्थान*, नईदिल्ली : सोशियल वेलफेयर.

पलाट, अरूण कुमार, (1999). *भारत का राष्ट्रीय मानवअधिकार आयोग*, नईदिल्ली : राधा पब्लिकेशन्स.

राय, अरूण, (2009). *भारत में जनहित याचिका और मानव अधिकार*, आगरा : राधा पब्लिकेशन.

राम, विजय कुमार, (2007). *दलित अधिकार चेतना, स्वर्ग लोग पर कब्जा*, नईदिल्ली : गौतम बुक सेन्टर.

शर्मा, राजीब लोचन, (1956). *जनजातीय जीवन और संस्कृति*, कानपुर : सहचारी प्रकाशन.

शर्मा, एस. पी., (1990). *चाईल्ड़ लेसनेस : बेनऔरबुन, वुमेन्स ऐरा*, 1990

श्रीवास्तव, सुजित, (2012). *भारत में मानव अधिकार एवं शोषण*, दिल्ली : नेहा पब्लिशर्स एण्ड़ डिस्ट्रीब्यूटर्स.

सिंह, धर्मेन्द्र, (2012). *भारत में मानवअधिकार*, जयपुर : रावत पब्लिकेशन.

यादव, पूरणमल, (2002). *दलित संघर्ष और सामाजिक न्याय,* जयपुर : आविष्कार पब्लिशर्स.

1

प्रस्तावना : मानव अधिकार एवं जनजाति समाज

विश्व जहां एक ओर इक्कीसवीं सदी में प्रवेश करके विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में बढ़ोतरी हासिल कर रहा है, वहीं दूसरी ओर गरीबी, तनाव, शोषण, अलगाव, अज्ञानता, युद्ध का डर, अशान्ति, स्वतन्त्रता का हनन, सामाजिक न्याय पर कुठाराघात जैसी अनेकानेक समस्याएं चुनौती स्वरूप मुंह फाड़े खड़ी हैं। इन चुनौतियों का सामना कैसे किया जाए? यह एक ज्वलन्त प्रश्न है। साथ ही विश्व युद्धों के दौरान मनुष्य ने जो गिरावट दर्ज की उसे देखकर मानवीय गरिमा के पक्षधरों को लगा कि इस पैशाचिकता के विरूद्ध यदि कोई कदम नहीं उठाया गया तो मानव अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है। इसी के फलस्वरूप मानवाधिकारों की घोषणा को आवश्यक समझा गया **(बाथम, 2006)**।

मानव एक बुद्धिमान व विवेकशील प्राणी है और इसी के कारण उसे अपने विकास के लिए कुछ मूलभूत अधिकार स्वतः ही प्राप्त रहते हैं और चूंकि ये अधिकार उसे अपने अस्तित्व के कारण स्वतः ही प्राप्त होते हैं, इसलिए ये अहरणीय अर्थात् किसा के भी द्वारा छिने भी नहीं जा सकते, जिन्हें हम सामान्यतः प्राकृतिक अधिकार कहते हैं। इन्हीं प्राकृतिक अधिकारों व राज्य द्वारा प्रदत्त अधिकारों को हम मानव अधिकार कहते हैं, जिनका सभी व्यक्तियों के लिए समान महत्व होता है, चाहे वह किसी भी जाति, धर्म, लिंग, भाषा तथा राष्ट्रीयता के हों। ये अधिकार न केवल व्यक्तियों की स्वतन्त्रता समानता तथा सामाजिक कल्याण की गरिमा के रक्षक तथा पोषक होते हैं वरन् ये भौतिक तथा नैतिक कल्याण की वृद्धि में भी सहायक होते हैं अर्थात् इन अधिकारों के अभाव में कोई भी व्यक्ति अपना सर्वांगीण विकास नहीं कर सकता है और इसी कारण इन अधिकारों को मूल

अधिकार, प्राकृतिक अधिकार और जन्मसिद्ध अधिकार भी कहा जाता है **(सैनी, 2009)**।

अधिकारों का एक स्पष्टीकरण भारतीय संविधान है। ये संविधान में निहित अधिकार राष्ट्र के लिए महत्वपूर्ण समझे जाते हैं और किसी भी नागरिक के लिये ये सुरक्षा कवच भी हैं। ये वे अधिकार हैं जिनके उल्लघंन पर व्यक्ति या समूह न्यायालयों में जा सकते हैं। ये नागरिक अधिकार हैं जिनके प्रति राज्य सजग है। यहां यह कहना उचित होगा कि संविधान के इन अधिकारों के मूल स्त्रोत विश्वस्तरीय स्वीकृत मानव अधिकारों के साथ जुड़े हुए हैं। कईं समाज ऐसे हैं जो अधिकारों के साथ कर्त्तव्यों को भी जोड़ते हैं। प्रायः राजनीति शास्त्री इन दोनों को पूरक मानकर चलते हैं। कानूनों की विभिन्न विधाएं इस बात का प्रतीक हैं। विश्व स्तर पर पिछले बीस वर्षों से मानव अधिकार निवारण तथा मांगों के केन्द्र रहे है **(धंगमवाल, 1996)।** लेकिन अधिकारों के प्रश्न समता मूलक सामाजिक व्यवस्था के साथ भी जुड़े हैं। समाज के प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार का अर्थ है समता। आधुनिक समाजों में मानव अधिकारों का एक बड़ा मुद्दा समता है जो समान अधिकारों से निर्मित है **(गुप्ता, 1998)**।

मानवाधिकार की अवधारणा

प्रश्न यह उठता है कि आखिर मानव अधिकार क्या है ? यह समझना चाहिये कि शब्द के प्रसंग केवल भारत के लिये ही नहीं हैं। शब्द वैश्विक है और मानव अधिकारों के प्रसंग विश्व स्तर के प्रसंग हैं। यह कहना भी उचित होगा कि सामान्यतः लोग इस शब्द से अनभिज्ञ हैं। मानव अधिकार के प्रसंगों की चर्चा भी कम है, यद्यति पिछले कुछ दशकों मे इसके प्रति जागरूकता और प्रयोग दोनों बढ़े हैं।

भूमण्डल के विभिन्न भागों में मानव एवं उनके समाजों व सभ्यताओं का उदय व विकास हुआ और साथ ही प्रत्येक स्तरों पर इन समाजों में आंतरिक व परस्पर विभेद तथा वैमनस्य भी उत्पन्न हुए। इसके फलस्वरूप प्रत्येक मानव समाज में कई स्तर पर कई तरह के विभेद मौजूद हैं। भाषा, रंग, मानसिक, प्रजातीय आदि स्तरों पर मानव समाज में भेदभाव का बर्ताव किया जा रहा है। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिंसा, तोड़फोड़, आगजनी, आन्तक, उग्रवाद, भ्रष्टाचार, शोषण एवं अत्याचार आदि अनेक घटनाओं से सम्पूर्ण मानव समाज कंलकित हो रहा है। इन समस्याओं का निराकरण मानव अधिकारों के समुचित पालन से ही संभव है।

मानव समान अधिकारों और प्रतिष्ठा के साथ पैदा होता है। मानवीयता की दृष्टि से ये अधिकार नैतिकता बिना किसी भेदभाव के सभी के लिये अपरिहार्य है, ऐसे अधिकारों को निर्मित भी किया गया है और स्वाभाविक आधार पर स्वीकार

लिये गये हैं। ऐसे सभी अधिकार जो मानवीय अस्तित्व, मानवीय गरिमा और मानवीय समता के साथ जुड़े हैं–सभी मानव अधिकार के अंग हैं। सभी समाजों में इन आंकाक्षाओं को कानून में सम्मिलित करने के लियेऔर सभी समाजों के लिये ये प्रस्ताव है। ये कानूनी अधिकार भी हैं और मानवीय अधिकार भी**(लैह, 1998)**।

मानव अधिकारों की अवधारणा को समझने के लिये हमें अधिकारों के विभिन्न पक्षों को भी समझना आवश्यक है। यह सकारात्मक अधिकार भी हो सकता है जो नैतिकता के साथ जुड़ा हुआ है। कुछ अधिकार ऐसे भी होते हैं जो सामान्य हैं। यदि ऐसे अधिकारों की अवहेलना की जाये तो लोग सरकार के खिलाफ अदालतों में जा सकते हैं। मानव अधिकार वे नैतिक अधिकार हैं जिन्हें वापस नही लिया जा सकता, दुनिया की कोई भी अधिकृति वापस नहीं ले सकती। मानव अधिकार मानव के अपने अस्तित्व के अधिकार हैं। मानव के स्वतन्त्र अस्तित्व के लिये ये आवश्यक हैं**(कन्नमा, 1998)**।

अतः मानव के जन्म सिद्ध अधिकार ही मानव अधिकार कहे जा सकते हैं। मूलरूप में इन अधिकारों को स्वीकार करने से ही मानव सभ्यता का जन्म और विकास होना संभव हुआ है। जीवन की मुख्य आवश्यकताओं में मानव का सम्मान एवं रोटी, कपड़ा और मकान का महत्त्व सर्वाधिक है। ये अधिकार मानवता के वृक्ष से स्वतः ही प्रस्फुटित होने वाले वे अंकुर हैं, जिन्हें स्वस्थ वातावरण ही आगे बढ़ाने में सहायक होता है।

मानव अधिकार एक ऐसी अवधारणा है जिसमें दो तथ्य निहित हैं। ये दोनों ही प्रक्रियाएं हैं। पहली, न्याय प्रक्रिया या न्याय व्यवस्था को कैसे जन्म दिया जाय ! और दूसरा उसका सत्यापन कैसे किया जाये इनमें से पहले का सम्बन्ध प्राकृतिक अधिकारों से है और दूसरे का नये कानून निर्माण से। वस्तुतः इन दोनों का ही सम्बन्ध अधिकारों से है जो नागरिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक अधिकारों को अपने में सम्मिलित करता है **(बक्षी, 1998)**।

मानव अधिकार कानूनी एवं एवं सामाजिक तथा नैतिक रूप से परिभाषित किये गये है**(तलेसरा एवं पंचोली, 2003)। विन्सेन्ट (1987)** के अनुसार मानव अधिकार वे अधिकार है, जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव होने के नाते प्राप्त हैं। इन अधिकारों का आधार मानव स्वभाव में निहित है। **सईद (2012)** के अनुसार मानव अधिकार का सम्मान व्यक्ति की गरिमा से है, आत्म सम्मान का भाव जो व्यक्ति की पहचान को रेखांकित करता है तथा मानव समाज को आगे बढ़ाता है। वही उसके अधिकार है। **बैरिक(1978)** के अनुसार मानव अधिकार विशेष को हम पूर्ण रुप से आंके तो इनकी परिभाषा इस प्रकार से करनी होगी कि वे दावे, जो व्यक्ति द्वारा स्वयं की तरफ से या अन्य व्यक्तियों की ओर से किये जाते हैं, जिन्हें किसी सिद्धान्त द्वारा, जो मानव की मानवता पर केन्द्रित हो कि मानव, मानव मात्र है, मानव समाज के सदस्यों पर केन्द्रित हो, जो नीति शास्त्रीय सिद्धान्त के ऊपर हो।''

विभिन्न विद्वानों ने मानव अधिकारों को अपनी ही तरह परिभाषित किया है। उनके विशिष्ट स्पष्टीकरण भी हैं। मानव अधिकारों के स्पष्टीकरण वस्तुतः इतिहास में लिखित प्राकृतिक अधिकारों की आलोचनाओं से ही जन्में। प्राकृतिक अधिकारों की सबसे बड़ी आलोचना यही थी कि इसके आधार वैज्ञानिक नहीं हैं। एडमण्ड वर्फ जो एक प्रसिद्ध राजनीतिक शास्त्री थे ने कहा था कि मानव अधिकारों का प्राकृतिक कानूनों से प्राप्त नहीं किया जा सकता। यूरोप के बहुत से राजनीतिक विचारक इस बात को मानते थे कि दार्शनिक दृष्टि से प्रकृति द्वारा निमित विधियां न तो स्पष्ट है और न मजबूत। साम्यवाद के जनक कार्लमार्क्स का विश्वास भी यही था। पूंजीवाद से निर्मित अहंवादी समाज पूंजीवादी समाज मानवीय आधारों को समझने में असमर्थ है। पूरी उन्नीसवीं ओर बीसवीं सदी के प्रारंभ तक जब व्यक्तिवाद पर अधिक जोर दिया जाने लगा। धीरे–धीरे मानव अधिकारों की चर्चा भी बढ़नी प्रारंभ हुई। एक ओर दृष्टिकोण जो उभरना प्रारंभ हुआ था कि राष्ट्र स्वायत्त होने चाहिये और उनके अधिकारों और कर्त्तव्यों का सामंजस्य होना चाहियें।

मानव अधिकार का यह भी अर्थ है कि समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति समाज का सदस्य है और सामाजिक प्राणी है। यहां व्यक्तिगत हितों का प्रश्न भी है जो सामूहिक हितों के साथ तिरोहित है। मानव अधिकारों का संबंध मानवीय प्रतिष्ठा तथा उनके अधिकारों के साथ रहा है। सांस्कृतिक तथा धार्मिक परम्पराओं और मानवीय उत्पीड़न, शोषण तथा वेदनाओं का क्रम ऐतिहासिक रहा है। मानव अधिकारों को स्थापित करने के जो कानून बन रहे थे अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर प्रतिमानों को स्थापित करने का प्रयास कर रहे थे। मानव अधिकार इसी लिये मानवीय प्रतिष्ठा का केन्द्र है।

वैश्विक स्तर पर कुछ आंकाक्षाओं और अपेक्षाओं को मानव अधिकारों में संजोया गया है वे निम्न है (भार्गव 2014)

- आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक निर्धारण
- सामाजिक तथा आर्थिक विश्वास
- विश्व शान्ति
- स्वास्थ्य दर तथा संतुलित पर्यावरण
- आपातकाल में मानवीय सहायता
- सभ्यता के धरोहरों की रक्षा
- मानवीय विकास की सुरक्षा

इसीलिए मानव अधिकार मात्र विधि नहीं है – सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक धरोहरों की मानवीय सुरक्षा है।

मानव अधिकारों की परिभाषाएं को देखने पर स्पष्ट होता है कि, इनमें तीन बातों का मुख्यतया विवेचन है (1) मानव स्वभाव, (2) मानव गरिमा एवं (3) मानव समाज। स्पष्ट है कि मानव अधिकार मानवीय स्वभाव में ही अन्तर्निहित है। इन अधिकारों की अनिवार्यता मानव व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए सदैव से रही है**(तलेसरा एवं पंचाली, 2003)**। अतः मानवाधिकार के बारे में यह कहना तर्क संगत होगा कि ये ऐसे अधिकार हैं जिनके बिना मानव अपने व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के बारे में सोच भी नहीं सकता जो कि मानव में मानव होने के फलस्वरूप अन्तर्निहित हैं।

'मानवाधिकार' शब्द का प्रयोग इसकी सार्वभौम घोषणा होने के साथ ही किया गया जो मूलतः अठारवी शताब्दी के 'मानव का अधिकार' का पुनः प्रवर्तन कर बनाया गया।इससे पूर्व परम्परागत रूप से मानवाधिकार को अहस्तान्तरणीय अधिकार, अन्य को अपरिवर्तित अधिकार, प्राकृतिक अधिकार या मानव के अधिकार कहा जाता था**(नेमा एवं शर्मा, 2006)**। धीरे–धीरे इसका रूप स्पष्ट हुआ और वर्तमान स्वरूप सामने आया। मानव अधिकार तथा मौलिक स्वतंत्रताएं हमें अपने गुणों, ज्ञान प्रतिभा तथा अन्तर्विवेक का विकास करने में सहायक होती हैं, जिससे हम अपनी भौतिक, आध्यात्मिक तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति एवं संतुष्टि कर सकें। मानव अधिकार मनुष्य की एक ऐसे जीवन की ओर बढ़ती हुई मांग पर आधारित है जिसमें मानव की अन्तर्निहित गरिमा एवं गुणों का सम्मान हो तथा उसे संरक्षण प्रदान किया जाए।

बक्षी (1998) का कहना है कि मानव अधिकार समानता के सिद्धान्त की उत्पत्ति है। न्यायिक व्यवस्थाओं से इसका संबंध है। उत्पन्न विचारों के आधार पर निर्मित नियमों के कानूनी आधार भी भिन्न हैं। समता की वैद्यानिकता की बहस में मानव अधिकारों के दृष्टिकोणों को देखा जा सकता है। राज्य इन अधिकरों को अपने कानूनों में सम्मिलित करते हैं और मानव अधिकारों को व्यापक रूप से देते हैं। इनका संबंध उन अधिकारों से है जो मानव को समाज की सदस्यता और सामाजिक समानता के आधार पर मिलने चाहिये।

लेविन (1998) के अनुसार अपने अधिकारों और सम्मान की दृष्टि से समाज का प्रत्येक व्यक्ति समानता के आधार पर पैदा होता है। मानवता के आधार पर प्रत्येक व्यक्ति में ये अधिकार निहित हैं और उनके प्रयोग का उन्हें अधिकार है। जिन्हें हम मानव अधिकार कहते हैं वे अब कानूनी अधिकारों में सम्मिलित कर लिये गये हैं। इन कानूनी अधिकारों की एक बड़ी विशेषता यह है कि ये जन द्वारा स्वीकार किये गये हैं, जो किसी राष्ट्र की प्रजा भी हैं। दूसरे शब्दों में जिन लोगों के लिये ये अधिकार निर्मित हैं उनकी सहमति तथा विश्वास इन अधिकारों के साथ जुड़े हुए हैं। **गुप्ता (1999)** के अनुसार सार्वभौमिक रूप में यह स्वीकार किया गया है कि मानव अधिकार वे अधिकार हैं जिनका संबंध स्वतन्त्रता, समानता और मानव सम्मान के साथ है। ये सभी अधिकार मानव समाज के अधिकार हैं। ऐसी

परिस्थिति में चाहे कोई व्यक्ति युवा हो या वृद्ध, स्त्री हो या पुरूष, कार्य कर रहा हो या नहीं कर रहा हो, चाहे वह कितना भी अशक्त हो, मानव अधिकारों से वंचित नहीं है। मानव अधिकार आधुनिक कानूनों के अंग है और किन्हीं भी प्रगतिशील आधारों के स्तंभ है।

मानव अधिकारों की अवधारणा के प्रमुख तत्वों की चर्चा की जा सकती है **(रमन, 1993)**

1. मानव अधिकार न्यायोचित एवं पूर्ण अस्तित्व के योग्य हैं क्योंकि ये अधिकार निर्मित नहीं किये गये हैं पर मानवीय धरोहरों के साथ संबद्ध है। ये अधिकार सामत्र व्यक्ति हैं। हम ऐसे अधिकारों के पात्र हैं।
2. व्यवस्था उपलब्ध है और वैद्य है।
3. शब्द का अर्थ सही प्रतिबद्धताएं हैं। यह एक ऐसे समुदाय को दिये हैं जो अर्न्तनिर्भर हैं।

मानवाधिकार : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

इस बात मे कोई सन्देह नहीं है कि मानव अधिकारों की उत्त्पति प्राकृतिक कानूनों के सिद्धान्त से हुई है। मानव अधिकारों का स्त्रोत यूरोपियन संस्कृति के स्टोइक और जुडाइक दर्शनों के साथ जुड़ा हुआ है। ग्रीक नगरों और राज्यों में समान रूप में स्वतंत्रता (ISO GORIA) प्रचलित थी। इसका अर्थ था बोलने का समान अधिकार। कानून के सामने सभी समान है (ISO MONIA) भी प्रचलित था। बाद में बहुत कुछ लोप हो गया। स्टोइक दर्शन ने उन मूलभूत सिद्धान्तों की चर्चा की जिसका सम्बन्ध प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार की स्थापना के साथ था। ग्रीक साहित्य में एन्डीगोन इसका उदाहरण है। मध्य युग में प्राकृतिक कानून का आधुनिक स्वरूप सामने आया। सेंट थॉमस, सेंट एक्वीनार्स ने कहा कि प्राकृतिक कानून संपूर्ण रूप से ईश्वरीय कानून है। हाब्स मध्य युग में प्रमुख व्यक्ति थे जिन्होंने मानवों के बीच समानता पर बहुत अधिक ज़ोर दिया। जॉन लॉक ने दो बातों पर ज़ोर दिया पहला मनुष्य स्वतंत्र है और दूसरा उसे सम्पत्ति का अधिकार है। राजनीतिक समाज में इन अधिकारों का होना जरूरी है। सत्रहवीं शताब्दी में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी रूचि के धर्म, व्यवहार की इज़ाजत थी।

1776 में यह अवधारणा सामने आई कि सभी लोग जन्म से समान ही पैदा होते हैं। अमेरिका तथा फ्रांस की क्रांतियों ने भी अपनी अलग अवधारणा प्रस्तुत की थी। अठ्ठाहरवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में अधिकारों की यह चर्चा अधिकांशतः राजनीतिक थी, पर बीसवीं शताब्दी में ये संदर्भ मानवीय अधिकारों में बदल गये। बीसवीं शताब्दी में इन अधिकारों ने नागरिक स्वातन्त्रय, सम्पत्ति का अधिकार, न्याय का अधिकार और वैद्य समझौते के स्वरूप को स्वीकार कर लिया। इसका सम्बन्ध

आर्थिक और सभ्य जीवन से था। राजनीतिक अधिकारों की मांग के संदर्भ भी इन्हीं आकांक्षाओं के साथ जुड़े हुए थे। इक्कीसवीं सदी में मानव अधिकार वैश्विक आन्दोलन बन गये। बीसवीं सदी में मानव अधिकार की आकांक्षाओं और उद्देश्यों में भी परिवर्तन हुए राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक निर्धारण, सामाजिक तथा आर्थिक विकास, विश्व शांति, स्वस्थ्य पर्यावरण, मानवीय सहायता, धरोहरों की सुरक्षा और मानवीय विकास इसकी आवश्यकता बने **(भार्गव, 2014)**।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद गठित राष्ट्रसंघ (1919) के कारण मानव अधिकार की अवधारणा का विकास अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हुआ। यद्यपि राष्ट्रसंघ की प्रसंविदा में मानव अधिकारों का स्पष्ट उल्लेख नहीं था, फिर भी राष्ट्रसंघ ने इस दिशा में अल्पसंख्यकों एवं युद्ध प्रभावी लोगों के बारे में विशेष ध्यान दिया। राष्ट्र संघ ने श्रमिकों के अधिकारों एवं बालश्रम पर भी ध्यान दिया। यही कारण था कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का गठन हुआ, जो वर्तमान मे संयुक्त राष्ट्र संघ की एक स्वायत्त संस्था के रूप मे कार्य कर रहा है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय नागासाकी एवं हिरोशिमा में विध्वंस के बाद मानव जीवन की रक्षा तथा राष्ट्रों की मर्यादाएं निश्चित करने हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ अस्तित्व में आया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों को प्राथमिकता दी और 1945 में अमेरिका के सेन फ्रांसिस्को नगर में इसके द्वारा मानवाधिकार आयोग की स्थापना की गई। उसने मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा का मसौदा तैयार किया **(तलेसरा एवं पंचोली, 2003)**।

1941 के अटलांटिक चार्टर में सभी देशों के नागरिकों के लिए शांति के आश्वासन की बात कही गई थी। 1941 में ही अमेरिकी कांग्रेस को दिए गए सन्देश में राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने 4 स्वतंत्रताओं पर बल दिया था– भाषण तथा विचार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, धर्म तथा विश्वास की स्वतंत्रता, अभाव से स्वतंत्रता तथा भय से स्वतंत्रता। उनका कहना था कि ये सभी स्वतंत्रताएं विश्व के सभी राष्ट्रों में सभी व्यक्तियों को प्राप्त होनी चाहिए। 1942 का वाशिंगटन सम्मेलन और 1943 का मस्कवा सम्मेलन इसी तरह की भावनाओं के प्रतीक थे। उनमें कहा गया था कि जब तक मानवाधिकारों का उल्लंघन होता रहेगा, मानव पिसता रहेगा। अटलांटिक चार्टर से लेकर द्वितीय विश्व युद्ध के समाप्त होने के पूर्व तक अनेक सम्मेलनों में मित्र–राष्ट्रों के द्वारा मानवीय अधिकारों तथा आधारभूत स्वतंत्रताओं पर बार–बार बल दिया गया।

विश्व शान्ति एवं सुरक्षा हेतु एक अन्तर्राष्ट्रीय संघ बनाने के प्रारंभिक सुझाव, 1944 में ड़म्बर्टन ओक्स सम्मेलन में स्वीकार किए गए थे। संयुक्त राष्ट्र संघ की रूपरेखा तैयार करने हेतु मित्र–राष्ट्रों की बैठक सेन फ्रांसिस्को में 25 अप्रैल से 26 जून, 1945 तक चली। 26 जून, 1945 को सभी मित्र राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने एक चार्टर पर हस्ताक्षर किए।

कमीशन ने निर्णय किया कि विधिक दायित्वों वाले विनिर्दिष्ट अधिकारों के अभिसमय के साथ–साथ एक सामान्य सिद्धान्तों की घोषणा का प्रारूप तैयार किया जाएगा। इसके साथ–साथ यह भी निर्णय लिया गया कि क्रियान्वयन के प्रश्न पर भी विचार किया जाएगा और इसी आधार पर तीन दस्तावेज हैं–

(i) मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा

(ii) मानवीय अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा तथा

(iii) कार्यान्वयन के उपाय जिनसे मिलकर मानवीय अधिकारों का अन्तर्राष्ट्रीय बिल होगा **(कपूर, 2004)**।

कमीशन ने इन दस्तावेजों को तैयार करने के लिए तीन कार्यकारी दल नियुक्त किए। कार्यकारी दलों ने अपनी रिपोर्ट कमीशन को प्रस्तुत की तथा कमीशन उक्त रिपोर्टों को संयुक्त राष्ट्र के सदस्य राज्यों की सरकारों को टीका–टिप्पणी हेतु भेज दी। राज्य सरकारों द्वारा की गई टीका–टिप्पणियों पर प्रारूपण समिति ने 3 मई से 21 मई, 1948 को हुए द्वितीय सत्र में विचार किया। प्रारूपण समिति ने पूर्ण प्रारूप घोषणा का पुनः प्रारूप तैयार करके कमीशन को प्रेषित कर दिया। समय की कमी के कारण मानवीय अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा का प्रारूप पूर्ण नहीं हो सका तथा कार्यान्वयन के प्रारूप पर विचार नहीं किया जा सका। कमीशन ने जून, 1948 में अपने तीसरे सत्र में प्रारूपण समिति की रिपोर्ट पर विचार किया किया तथा अन्ततः सामान्य सिद्धान्तों के प्रारूप घोषणा को स्वीकार कर लिया तथा उसे आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् के पास भेज दिया। आर्थिक व सामाजिक परिषद् ने बिना मतदान के प्रारूप घोषणा को एक प्रस्ताव द्वारा स्वीकार करके उसे महासभा के पास भेज दिया।

महासभा ने मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को अन्ततः एक प्रस्ताव द्वारा स्वीकार कर लिया। इस प्रस्ताव के पक्ष में 48 सदस्य राष्ट्रों ने मतदान किया। किसी भी राज्य सरकार ने इसका विरोध नहीं किया, परन्तु 8 सदस्य राज्यों – बाईलोरसियन, एस.एस.आर.,चेकोस्लोवाकिया, पौलेण्ड, साउथ अरेबिया, दक्षिणी अफ्रीका, युकेरेनियन, रूस तथा युगोस्लोवाकिया, ने मतदान से अपने आपको अनुपस्थित रखा। मानवीय अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा का स्वागत एक अत्यधिक महत्व की ऐतिहासिक घटना एवं संयुक्त राष्ट्र की महानतम उपलब्धियों के रूप में किया गया है **(गुप्त एवं शाह, 2011)**।

संयुक्त राष्ट्र संघ (1948) के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय संगठित हुआ और 24 अक्टूम्बर, 1945 को इसके चार्टर के रूप में मानवाधिकारों एवं आधारभूत स्वतंत्रताओं को प्रत्येक के लिये बिना किसी भेदभाव के लागू करने हेतु अपनाया गया।संयुक्त राष्ट्र संघकी स्थापना चार्टर में मानव अधिकार एवं मूल स्वतंत्रताओं का समावेश, मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा का अंगीकार किया जाना तथा उक्त घोषणा के क्रियान्वयन हेतु मानवीय अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा

को अंगीकार किया जाना, मानव अधिकारों के संयुक्त राष्ट्र कमीशन का स्थापित किया जाना आदि महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों ने क्रांतिकारी परिवर्तन किए।

अब यह सामान्यतया स्वीकार किया जाता है कि अपने नागरिकों के साथ व्यवहार के मामलों में भी प्रत्येक राज्य की कुछ परिसीमाएं हैं। यदि कोई नागरिक यह महसूस करता है कि वह अपने राज्य द्वारा मानव अधिकारों के उल्लंघन का शिकार है या उससे पीड़ित है तो वह संयुक्त राष्ट्र के महासचिव के माध्यम से अपनी याचिका मानव अधिकारों के संयुक्त राष्ट्र कमीशन को भेज सकता है। अतः यह सार्वभौमिक रूप से (क्योंकि संयुक्त राष्ट्र अब लगभग सार्वभौमिक हो चुका है) स्वीकार किया जाता है कि मानव अधिकार एवं मूल स्वतंत्रताएं अन्तर्राष्ट्रीय चिंता का विषय हैं, अतएव वह आवश्यक रूप से राज्य की घरेलू अधिकारिता का विषय नहीं हो सकता। लेकिन वर्तमान परिदृश्य में मानव अधिकारों का संज्ञान व उनकी जानकारी न सिर्फ नागरिकों अपितु राज्यों के विकास व उनके नागरिकों के जीवन मूल्यों के लिये आवश्यक हो गया है। अतः विभिन्न समूहों, राज्यों में इसकी स्थिति के मूल्यांकन का विश्लेषण तथा उसके सुधार की विवेचना की आवश्यकता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र में कहा गया है ''हम संयुक्त राष्ट्र संघ के लोग संकल्प करते हैं कि आने वाली सन्तति को उस युद्ध की भंयकरता से बचाएंगे, जिसने हमारे जीवन काल में दो बार मानवता पर अकथनीय दुःख बरसाए हैं। मूल अधिकारों, मानव की प्रतिष्ठा एवं मूल्यों, स्त्री–पुरूष एवं छोटे बड़े राष्ट्रों के समान अधिकारों के प्रति पुनः निष्ठा स्थापित करेंगे तथा ऐसी स्थिति उत्पन्न करेंगे, जिसमें सन्धियों और कानूनों से उत्पन्न कर्त्तव्यों के प्रति न्याय व आदर स्थापित किया जा सके।

संयुक्त राष्ट्र संघकी साधारण सभा के अनुसार ''प्रत्येक मानव, सम्मान और अधिकारों की दृष्टि से समान है। किसी के भी साथ कोई भेदभाव नही किया जाएगा, चाहे वह किसी भी राजनीतिक, क्षेत्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति वाले राष्ट्र का नागरिक हो और वह स्वतन्त्र निगम के अधीन परतंत्र या अन्य किसी भी शासन प्रणाली के अधीन हो **(गुप्त एवं शाह, 2011)**।''

10 दिसम्बर 1948 को मानव अधिकारों की सर्वभौमिक घोषणा की गई। इस घोषणा के समय अमेरिका के राष्ट्रपतिरूजवेल्ट ने कहा था–''विश्व में अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं, जो अपने मूलभूत अधिकारों से वंचित हैं, जिन्हे विश्व व्यक्ति के परम्परागत अधिकारों के रूप में स्वीकार कर चुका है और इनके बिना कोई भी सम्मान एवं स्वतंत्रता के साथ नहीं रह सकता है **(चन्द्रा, 2010)**।'' इसके पश्चात् संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों की रक्षा के लिए निम्नांकित दस्तावेज विश्व के सामने प्रस्तुत किए **(नेमा एवं शर्मा, 2006)**

(i) नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों का प्रतिज्ञा पत्र, 1966

(ii) आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों का प्रतिज्ञा पत्र, 1966

(iii) अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सी को याचिका देने हेतु वैयक्तिक अधिकारों के लिए ऐच्छिक पूर्व संधि, 1966

(iv) कैदियों के साथ व्यवहार के लिए मानक नियम, 1971

(v) कानून प्रवर्तन अधिकारियों के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ की आचार संहिता, 1979

(vi) किशोर अपचारिता के संबंध में न्याय के प्रशासन हेतु मानक नियम, 1985

(vii) शक्ति के दुरूपयोग व अपराध के शिकार व्यक्तियों के लिए मूलभूत न्यायिक सिद्धान्तों की घोषणा, 1985

(viii) न्यायिक स्वतंत्रता के मूलभूत सिद्धान्त, 1985

(ix) क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार अथवा दण्ड की यातना के खिलाफ कन्वेंशन, 1985

मानव अधिकारों की घोषणा के बाद से ही इनके प्रति जागरूकता बढ़ी है। प्रायः यह देखा गया है, कि व्यक्ति अपने क्रियाकलापों के द्वारा मानव अधिकारों के प्रति सक्रिय हैं जब– (i) व्यक्ति सरकार या निजी संगठन की नीतियों की खुली आलोचना करते हैं, (ii) अपनेअनुसार आराधना, प्रार्थना करते हैं, (iii) इच्छानुसार संघ या संगठन की सदस्यता ग्रहण करते हैं तथा, (iv) अपने राष्ट्र में बिना किसी रोक–टोक के एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा करते हैं, तो वे अपने अधिकारों को बराबर अभ्यास में लाते हैं। लेकिन साथ ही जब कभी व्यक्ति दूसरों के अधिकारों को अनदेखा करते हैं, तो उनकी स्वयं की स्वतंत्रता का स्वतः ही कुठाराघात हो जाता है। इस तरह की परिस्थितियों से बचने के लिए हर व्यक्ति के साथ कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व जुड़ा हुआ है **(कपूर, 2004)**।

मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा, 1948

संयुक्त राष्ट्र चार्टर के मानव अधिकारों संबंधित प्रावधानों को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र की महासभा ने मानवीय अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय बिल को तैयार करने का निर्णय लिया। अतः इसे ध्यान में रखते हुए संयुक्त राष्ट्र महासभा ने आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् से 29 जनवरी, 1946 को कहा कि वह इस संबंध में मानवीय अधिकारों के कमीशन से अध्ययन करवायें। इस कार्य हेतु कमीशन ने जनवरी, 1947 को एक प्रारूपण समिति नियुक्त की। 19 जनवरी से 25 जनवरी, 1947 को हुए अपने पहले सत्र में प्रारूपण समिति ने मानवीय अधिकारों के एक अन्तर्राष्ट्रीय बिल का प्रारंभिक प्रारूप तैयार किया। 2 दिसम्बर से 17 दिसम्बर, 1947 को हुए अपने दूसरे सत्र में मानवीय अधिकारों के कमीशन ने इस प्रारूप पर विचार किया तथा पाया कि इसके विषय वस्तु के बारे में विभिन्न मत हैं।

मानव अधिकारों के क्षेत्र में सार्वभौमिक घोषणा विश्व शान्ति रूपी मन्दिर के विशाल प्रवेश द्वार के समान है। 10 दिसम्बर 1948 को स्वीकार की गई सार्वभौमिक घोषणा के अन्तर्गत प्रस्तावना के अलावा कुल 30 अनुच्छेद हैं। जिसमें मानव समाज के गरिमायुक्त जीवनयापन के सभी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक बिन्दुओं का समावेश किया गया है **(गौतम, 2003)**।

सार्वभौमिक घोषणा का प्रमुख महत्व मानवाधिकारों को सार्वभौमिकता प्रदान करना है। जिसके अन्तर्गत किसी व्यक्ति या राष्ट्र तक मानवाधिकरों को सीमित न करके इन्हें विश्व के सभी व्यक्तियों एवं सभी राष्ट्रों में लागू करने के लिए प्रयास करने की अपेक्षा की गई है। यह घोषणा समाज को कानूनी एवं नैतिक आधार प्रदान करने का आधारभूत प्रयास है जो मानव द्वारा किया गया सबसे बड़ा प्रयत्न है।यह विभाजित विश्व को एक करने का प्रथम चरण है। यह घोषणा मानवाधिकारों को बढ़ावा देने और उनके संरक्षण हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ के लिए मील का पत्थर साबित हुई है। विश्व में सभी न्यायालयों द्वारा दिये जाने वाले निर्णय भी मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को ध्यान में रखते हुए दिये जाने लगे हैं **(कपूर, 2004)**।

मानवाधिकारों के संरक्षण के लिये विश्व स्तर की संस्था के रूप में संयुक्त राष्ट्र संघ को देखा जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के इस संगठन के अन्तर्गत विभिन्न अन्य अंग स्थापित किये गये हैं, जो विश्व में शान्ति एवं व्यवस्था बनाये रखने में अपना योगदान देते हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ के सभी सदस्य देशों को **महासभा** की सदस्यता प्रदान की गई है। महासभा के कार्यों की प्रकृति मुख्य रूप से निरीक्षणात्मक एवं अन्वेषणात्मक है। **सुरक्षा परिषद्** संयुक्त राष्ट्र संघ की कुंजी होती है। जिसका मुख्य दायित्व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शान्ति को बनाये रखना है। **आर्थिक व सामाजिक परिषद्** संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रमुख अभिकरणों में से एक है, जो आर्थिक, सामाजिक व मानवतावादी विषयों में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के लिए प्रयत्नशील रहती है। **न्याय परिषद्** के माध्यम से परिषद और न्यास प्रदेशों की जनता के मध्य सीधा सम्पर्क स्थापित होता है। **अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय** अपने निर्णयों तथा सलाहकारी मतों से अन्तर्राष्ट्रीय कानून के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। **सचिवालय** का महासचिव संघ के अन्य पदाधिकारियों और कर्मचारियों की नियुक्ति करता है**(बाजवा,1995)**।

यह घोषणा पत्र ऐसी खान या खदान है जिसमें से इन अधिकारों के संरक्षण करने वाले अन्य अभिसमयों तथा राष्ट्रीय संविधानों ने इन अधिकारों को निकाला है। जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया गया है कि मानवीय अधिकारों की कमीशन द्वारा 1947 तथा 1948 में तैयार की गई मानवीय अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को महासभा ने एक प्रस्ताव द्वारा स्वीकार किया। जब सार्वभौमिक घोषणा के प्रस्ताव को महासभा ने पारित किया था, यह एक ऐसी,

विश्व की वाकपटु अभिव्यक्ति थी जो मानव जाति के इतिहास में सबसे विनाशकारी युद्ध के पश्चात् उभर रहा था।

इस अनुभव ने सार्वभौमिक घोषणा को एक ऐसी गति प्रदान की जिसकी अभिव्यक्ति दस्तावेज के साहस से होती है तथा जिसका लक्ष्य एक ऐस शांति के विश्व की ओर है, जहाँ सभी के लिए शांति से रहना एक वास्तविकता बन गई है। 10 दिसम्बर, 2008 को मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा की 60वीं वर्षगांठ पूर्ण विश्व में मनाई गई **(अंसारी, 2000)**।

मानवाधिकार की उत्पति के विभिन्न चरण

मानवाधिकारों का विकास चरणबद्ध हुआ जिसे **बाथम (2006)** ने निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया है–

प्रथम चरण

इस चरण में उस काल का समावेश होना चाहिए जिसमें यह अधिकार अस्तित्व में थे, मानव इनका सीमित दायरों और भौगोलिक सीमाओं में उपयोग करता था पर उनके लिए सचेत नहीं था। दया के तौर पर इन्हें अधिकार दिया जाता और शक्ति के बल पर इनसे छीन लिया जाता था। उस काल में मानवाधिकार के स्वरूप नकारात्मक ज्यादा और सकारात्मक कम थे। अपने कुछ अधिकारों का इस्तेमाल मानव बिना यह जाने करता रहा कि यह उसका हक है। यह समय मानव की विकास यात्रा के शुरूआती दिनों के बारे में था।

द्वितीय चरण

धीरे–धीरे मनुष्य सभ्य हुआ, परिवार नाम की छोटी इकाई को विस्तार मिला और कौटुम्बिक संबंधों के आधार पर धीरे–धीरे कबीले बने और उनके मुखिया या प्रधान बनने पर एक छोटी सामूहिक व्यवस्था शुरू हुई। भारतीस सन्दर्भ में पहले वर्ण व्यवस्था और फिर जाति व्यवस्था विकसित हुई। इस दौरान मुखिया का निर्धारण या तो उम्र के हिसाब से होता यानि सबसे बुजर्ग को मुखिया बनाया जाता था या समूह में शारीरिक रू‍प से सबसे शक्तिशाली व्यक्ति को। अपने–अपने समूह विशेष के लिए कुछ मापदण्ड प्रतिमान और तौर–तरीके विकसित हुए जिन्होंने आगे चलकर रीति–रिवाजों और परम्पराओं का रूप ले लिया जो कई वर्षों तक चलती रहीं। कर्त्तव्यों के मामले में यह उल्टा था। जितना छोटा ओहदा या स्तर, उतने ज्यादा कर्त्तव्य। लेकिन इतना जरूर है कि अधिकारों की थोड़ी बहुत समझ और 'कर्त्तव्यों के बंधन' एक आकार ले चुके थे लेकिन प्रत्यक्ष या परोक्ष शोषण व्यवस्था मौजूद रही। जो परम्पराएं और नियम–कानून बने, उनका स्वरूप प्राकृतिक, अनौपचारिक और अलिखित था जिनसे प्राकृतिक अधिकारों ने जन्म लिया। **'धर्म'** कर्त्तव्य का दूसरा नाम है। धर्म अपने कायदे–कानूनों से चलता

है और जब दूसरे कायदे–कानून नहीं थे तो धार्मिक अनुशासन ही सब पर लागू होता था जो परिवार से लेकर मुखिया, सरदारों और प्रधानों तक के लिए था।

तृतीय चरण

इस चरण तक छोटे–छोटे कबीले और गांव और बड़े सामाजिक समूह में परिवर्तित होने लगे थे। अलग–अलग प्रकार की शासन प्रणालियों की शुरूआत भी इस चरण में देखने को मिलती है। किन्तु यह एक राजा या शासक के व्यक्तित्व और विचारधारा पर निर्भर था कि कौन–सी शासन प्रणाली हो और कितने अधिकार किसे मिलें। सामन्ती या तानाशाही व्यवस्थाएं अधिकारों को देने की बजाय उनके हनन और आम नागरिक के राजा या शासक के प्रति कर्त्तव्यों में ज्यादा विश्वास करती थी जिससे कई विद्रोह भी उपजे।

यह चरण सबसे महत्वपूर्ण इसलिए भी है क्योंकि इसी में आधुनिक मानवाधिकारों का जन्म खोजा जा सकता है। अधिकारों के लिए मानव समाज में पर्याप्त सजगता और जागरूकता पनप चुकी थी। मनुष्य अपने अधिकारों की मांग करने लगा था और जब ये अधिकार उसे नहीं दिए गए तो उसने संघर्ष किया जिसमें हिंसा का भी उपयोग हुआ। कई दार्शनिक और विचारकों ने इस हिंसा को अपने हक की लड़ाई कहकर जायज भी करार दिया। इसी चरण में ब्रिटेन में 1215 में मैग्ना कार्टा का जन्म, सन् 1628 में पिटीशन ऑफ राइट्स, 1689 में बिल ऑफ राइट्स द्वारा अधिकारों की माँग की गई और कई सकारात्मक कदम उठाए गए। इसके साथ ही सन् 1676 में अमेरिकी और सन् 1789 में फ्रांस की क्रांति का भी वह क्रांतिकारी इतिहास उपलब्ध है जिसने मानवाधिकारों को एक सम्मानीय स्थान और नई पहचान दी। एक और दृष्टि से यह चरण उल्लेखनीय है क्योंकि अब तक प्राकृतिक अधिकार वाला स्वरूप परिवर्तित होने लगा था और मानवाधिकार शब्द प्रचलन में आ चुका था।

चतुर्थ चरण

इस चरण तक पहुंचते–पहुंचते मानवाधिकारों का एक अलग दर्शन जन्म ले चुका था। प्राकृतिक अधिकार परिवर्तित स्वरूप में (व्यक्तिगत और सामूहिक) राजनीतिक अधिकारों की शक्ल अख्तियार कर रहे थे। विश्व के अलग–अलग देशों मे मानवाधिकारों के प्रति आदर और सम्मान की वकालत होने लगी थी जिसमें विश्व के कई महान दार्शनिकों का बहुत योगदान रहा। जिन्होंने अपने दर्शन से मानवाधिकारों के बारे में नई बहस को जन्म दिया और मानव समाज में नई चेतना और जागृति पैदा की। इन विचारकों और दार्शनिकों में कई आपसी मतभेद भी थे किन्तु इन मतभेदों ने मानवाधिकारों के हनन के विरूद्ध संघर्ष की आहुति में घी का काम किया। मानवाधिकारों के बारें में इनकी अपनी–अपनी विशिष्ट सोच थी। पर एक बात जो सबसे सामान्य थी वह थी मानव कल्याण की भावना।

पांचवां चरण

विभिन्न क्रांतियों के बाद और प्रथम विश्वयुद्ध के बीच का समय इस चरण में रखा जाना उपयुक्त है। जहां एक तरफ मानवाधिकारों के प्रति सजगता अपनी चरम सीमा पर थी वहीं अब इन्हें प्राकृतिक वरदान के रूप में स्वीकार करने के आगे का मार्ग खुल चुका था। बेन्थम और ब्रक आदि को छोड़ दें तो बाकी कई विचारक और दार्शनिक नागरिक अधिकारों को तरजीह दे रहे थे। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहयोग और भाईचारे की आवाजें बुलन्द हो रही थीं। रंगभेद, दासप्रथा, बालश्रम आदि कुप्रथाओं की खिलाफत जोरों पर थी। यही वह समय था जब मजदूर आन्दोलन अपनी चरम सीमा पर था। समान कार्य के लिए समान वेतन, मजदूर शोषण और बालश्रम का विरोध आदि परिवर्तन इस चरण मेंदेखने को मिले।

छठा चरण

अन्तर्राष्ट्रीय कानून या मानवाधिकारों के पूर्ण औपचारिक स्वरूप की बात करें तो यह वह चरण है जिसमें विश्व ने एक शान्तिपूर्ण क्रांति देखी। इस चरण को मानवाधिकारों को परिभाषित करने, उन्हें प्राकृतिक अधिकारों से पूर्णतः मूल अधिकारों में परिवर्तित करने, उन्हें संवैधानिक वैद्यता दिलाने और इनके पालन के लिए राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय कानून बनाने की पहल के लिए जाना जायेगा। आधुनिक मानवाधिकारों का यह युग मानव इतिहास का स्वर्णयुग कहलाना चाहिए क्योंकि इसमें विभिन्न विभेदों को मिटाकर जो घोषणाएं और संधियां हुई, जो अन्तर्राष्ट्रीय संगठन बने और जो पहल की गई उनका उद्देश्य विश्व शान्ति, आपसी सहयोग और विश्व बन्धुत्व था। मानवाधिकारों को इतना बड़ा फलक पहले कभी नहीं प्राप्त हुआ था। यह चरण मानवाधिकारोंके संबंध में संहिता निर्माण (Condification) का काल भी था। मूल अधिकारों का नामकरण, राज्य और राष्ट्र की इनके प्रति जिम्मेदारियों का निर्धारण, इनका वर्गीकरण आदि ऐसे कदम थे जो दूरदर्शी थे और उनका सकारात्मक प्रभाव आज भी देखा जा सकता है। संयुक्त राष्ट्र की स्थापना, मानवाधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा, विभिन्न प्रासंविदाओं और प्रोटोकाल का निर्माण, सैकड़ो संधियां आदि वे मील के पत्थर हैं जो आने वाले भविष्य की पीढ़ियों को मार्गदर्शन ही नहीं देंगे उन्हें मानवाधिकारों के लिए सचेत और उनके कर्त्तव्यों के लिए आगाह भी करते रहेंगे।

अतः संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि मानव अपने अधिकारों के प्रति चेतन या अवचेतन रूप से हमेशा सोचता रहा और उन्हें भोगता रहा। समाज के विभिन्न कालों में जो विकास हुआ उसका प्रभाव मानव चेतना पर भी पड़ा। इस चेतना के विकास का परिणाम अपने अधिकारों की मांग में परिलक्षित होता है। अधिकार न मिलने या शोषण की अवस्था ने संघर्षो को जन्म दिया। अन्ततः एक लम्बा सफर तय करते हुए, विभिन्न शासन व्यवस्थाओं और नामों से गुजरकर यह अधिकार मानवाधिकारों के नाम से प्रसिद्ध हुए। मानवाधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय

घोषणा आधुनिक इतिहास की एक ऐसी घटना है जिसने मानव जाति की चिरायु की गारण्टी दी हैं।

मानव अधिकारों की विशेषताएं

मेल्फारलेन (1985) ने मानव अधिकारों की पांच विशेषताएं बताई हैं–

(1) **सार्वभौमिकता :** ये अधिकार सभी व्यक्तियों, सभी समयों पर तथा सभी स्थितियों में प्राप्त होते हैं

(2) **व्यक्तिगतता :** मानव अधिकारों की अवधारणा की व्युत्पत्ति मानव के स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में जन्म लेने से सम्बन्धित है

(3) **सर्वोच्चता :** राज्य द्वारा जनहित के आधार पर इन अधिकारों का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता है;

(4) **व्यावहारिकता :** मानव अधिकार सभी व्यक्तियों के लिये होते हैं। केवल कानून एवं नियमों तक सीमित नहीं होते और

(5) **क्रियान्वयन योग्य :** ये अधिकार राष्ट्रीय एवं स्थानीय मानव संरक्षण एजेन्सियों द्वारा क्रियान्वयन किया जाना संभव है।

मानव अधिकारोंकी सम्पूर्ण विवेचना के आधार पर इनकी निम्न महत्वपूर्ण विशेषताओं की चर्चा की जा सकती है –

(i) मानव अधिकारों का औचित्य इसलिये है क्योंकि इसका सम्बन्ध मानवीय प्रतिष्ठा में अर्न्तनिहित है। ये वे कानून नहीं हैं, जिन्हें किसी राज्य या राष्ट्र ने आज्ञा कर स्थापित कर दिये हों। ये सामाजिक सम्बन्धों के आधारों पर आधरित हैं और समाज की प्रतिष्ठा को बढ़ाने वाले प्रावधान हैं। ये अधिकार सामाजिक प्रतिष्ठा तथा व्यक्ति की प्रतिष्ठा के समन्वय का प्रतीक हैं।

(ii) मानव अधिकारों के प्रति प्रतिबद्धता के कारण ये सामाजिक हैं। समुदाय अथवा राज्य से स्वतंत्र होकर लोग मानव अधिकारों के बारे में सोचते हैं।

(iii) मानव अधिकारों की व्यवस्था वैधानिक है और मानवीय आचरण तथा व्यवहार मे अपेक्षित सामंजस्य इनके है।

मानव अधिकारों का सम्बन्ध समाज में कुछ स्वतन्त्रताओं की मांगों के साथ जुड़ा हुआ है। मानव अधिकार राज्य की शक्ति को सीमित करते हैं और सार्वजनिक हितों को सुरक्षित करते हैं।

मानव अधिकारों के प्रकार

दो आधारों पर मानव अधिकारों का वर्गीकरण किया जा सकता है–प्रथम जीवन के विविध क्षेत्रों के आधार पर दूसरा इन अधिकारों के बनाए रखने वाले संविधानिक या कानूनी आधार पर।

(i) **प्राकृतिक अधिकारः** ये वे अधिकार हैं जो मानव समाज में ही निहित हैं। स्वप्रज्ञा का अधिकार, मानसिक स्तर का अधिकार, आदि इसी कोटि में आते हैं।

(ii) **मौलिक अधिकार :** ये वे अधिकार हैं जिनके बिना मनुष्य का विकास नहीं हो सकता है। जैसे जीवन का अधिकार मानव जीवन का मूलभूत अधिकार है। इन अधिकारों की रक्षा करना प्रत्येक समाज का मूल कर्त्तव्य है।

(iii) **नैतिक अधिकार :** नैतिक अधिकार निष्पक्षता और न्याय के सामान्य सिद्धान्तों पर आधारित है। समाज में मानव इन अधिकारों को प्राप्त करने का आदर्श रखता है।

(iv) **नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार :** नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार राज्य द्वारा स्वीकार किया जाता है। यह सामाजिक जीवन के लिए आवश्यक है। प्रत्येक देश के राजनीतिक क्रिया–कलापों में जिम्मेदारी एवं भागीदारी निभाना इस तरह के अधिकारों का सर्वाधिक मुख्य लक्षण है।

(v) **कानूनी अधिकार :** कानूनी अधिकार का अर्थ है कि, प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी भेदभाव के कानून के समक्ष समान समझा जायेगा तथा साथ ही कानूनों का समान संरक्षण भी दिया जाना चाहिए।

(vi) **आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकारः** इस प्रकार के अधिकार अत्यंत व्यापक होते हैं। प्रत्येक राज्य में अपनी परम्परा व सभ्यता के अनुसार इन अधिकारों को लागू किया जाता है। जैसे समाजवादी राज्यों में काम का अधिकार, समानता का अधिकार महत्त्वपूर्ण है तो दूसरी तरफ पूंजीवादी राज्यों में स्वतंत्रता का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार महत्त्वपूर्ण है।

यह निर्धारण करना आसान नहीं है कि कौन–सा अधिकार महत्त्वपूर्ण है और कौन सा कम। मानव अधिकारों के सम्बन्ध में वैश्विक घोषणा के बाद मानव अधिकारों पर विशेष ध्यान दिया गया है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि मानव जीवन के समग्र विकास के लिए सभी अधिकारों की सुरक्षा एवं लागूकरण अनिवार्य है।

यह सब होने पर भी मानवाधिकारों को उल्लंघन होता आ रहा है। करीब–करीब सब देशों में और सब युगों में सरकारें और अपराधी दोनों ही इस दुनिया में मानवाधिकारों का उल्लंघन करते आये हैं। अतः मानव अधिकारों के साथ–साथ महत्त्वपूर्ण अवधारणा मानव कर्त्तव्यों की है। अधिकार और कर्त्तव्यों में अन्योयाश्रित संबंध है। मानव अधिकारों का संरक्षण मानव कर्त्तव्यों के पालन के

स्तर पर निर्भर करता है। जिस समाज में जितना अधिक मानव कर्त्तव्यों का पालन किया जाता है उस समाज में मानव अधिकारों के हनन के उतने ही कम मामले सामने आते हैं। प्रत्येक नागरिक अपने अधिकारों से दूसरें के कर्त्तव्य तथा अपने कर्त्तव्य से दूसरे व्यक्ति के अधिकारों को समझता है। इस प्रकार अधिकार व कर्त्तव्य साथ–साथ चलते हैं **(अंसारी, 2002)**।

मानव परिवार के सभी सदस्यों की अन्तर्निहित गरिमा और सम्मान तथा अखिल विश्व में स्वतंत्रता, न्याय और शांति मानवाधिकारों के आधार हैं। मानव अधिकारों की उपेक्षा और अवमानना के परिणामस्वरूप ऐसे बर्बर कार्य हुए हैं, जिन्होंने मानव की अन्तर्रात्मा पर आघात किया है और ऐसे विश्व के निमार्ण को, जिसमें सभी मानव वाक् स्वातंत्र्य और विश्वास की स्वतंत्रता का तथा भय और अभाव से मुक्ति का उपभोग करेंगे, जिसे जनसामान्य की उच्चतम आकांक्षा घोषित किया गया है : यदि मनुष्य को अत्याचार और उत्पीड़न के विरूद्ध अंतिम अस्त्र के रूप में विद्रोह का अवलम्बन लेने के लिए विवश नहीं किया जाता है तो यह आवश्यक है कि मानव अधिकारों का संरक्षण विधि सम्मत शासन द्वारा किया जाना चाहिए **(गोस्वामी, 1998)**।

संयुक्त राष्ट्र के लोगों ने चार्टर में मूल अधिकारों में मानव की गरिमा और महत्व तथा पुरुषों और स्त्रियों के समान अधिकारों में अपने विश्वास की पुनः पुष्टि की है और सामाजिक प्रगति करने तथा अधिकाधिक स्वतंत्रता के साथ उत्कृष्ट जीवन स्तर की प्राप्ति का निर्णय किया है **(नेमा एवं शर्मा, 2006)**।

सदस्य राज्यों ने यह प्रतिज्ञा की है कि, वे संयुक्त राष्ट्र के सहयोग से मानव अधिकारों और मूल स्वतंत्रताओं के प्रति सार्वभौम सम्मान जाग्रत करेंगे और उनका पालन करायेंगे।

इन अधिकारों और स्वतंत्रताओं के प्रति एक ही दृष्टि इस प्रतिज्ञा को पूरी सफल बनाने के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए महासभा मानव अधिकारों की इस सार्वभौम घोषणा को सभी लोगों और सभी राष्ट्रों के लिए, इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक सामान्य मानव के रूप में उद्घोषित करती है कि प्रत्येक व्यक्ति और समाज का प्रत्येक अंग, इस घोषणा को निरन्तर ध्यान में रखते हुए शिक्षा और संस्कार द्वारा इन अधिकारों और स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान जाग्रत करेगा और राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रगामी उपायों के द्वारा सदस्य राज्यों के लोगों के बीच और उनकी अधिकारिता के अधीन राज्य क्षेत्रों के लोगों के बीच इन अधिकारों की विश्वव्यापी और प्रभावी मान्यता और उनके पालन को सुनिश्चित करने के लिए प्रयास करेगा **(अंसारी, 2000)**।

भारत में मानवाधिकार

भारत की सभ्यता एवं संस्कृति पांच हजार वर्षों से भी अधिक प्राचीन है। प्राचीन भारत में धर्म की अवधारणा में ही व्यापक मानवीय सामाजिक व्यवस्था के रूप में मानव अधिकारों पर विचार किया गया था। प्राचीन भारत में धर्म का विधान (सनातन धर्म का) न केवल धार्मिक एवं नैतिक विधान था, अपितु राजा के व्यवहार, दण्ड विधान आदि को भी नियंत्रित करता था। वह भी साधारण नागरिक की भाँति कानून के प्रति उत्तरदायी था। राजा परम्परा एवं प्रथाओं का भी सम्मान करता था।

मध्यकालीन भारत में भी मानव अधिकार किसी न किसी रूप में विद्यमान थे। मुगलकालीन भारत में अकबर और जहांगीर की न्यायप्रियता प्रसिद्ध रही है। अकबर ने अपनी धार्मिक नीति और 'दीन–ए–इलाही' के द्वारा जनता को धार्मिक सहिष्णुता की प्रेरणा दी। भारत का आधुनिक युग नये भारत के उदय का युग है। मध्यकालीन सामाजिक बुराईयां जैसे सती प्रथा, बाल–विवाह, जाति प्रथा तथा अन्य अमानवीय कुप्रथाओं के विरूद्ध इस युग में मानवतावादी आन्दोलन शुरू हुए। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, ज्योतिबा फूले, नारायण गुरू, भीमराव अम्बेड़कर एवं महात्मा गांधी जैसे धार्मिक एवं समाज सुधारकों ने मानव की गरिमा को स्थापित करने के लिए सतत् संघर्ष किया।

विश्व के सुधारवादी आन्दोलनों से प्रेरित होकर भारत के नेताओं ने 1928 में नेहरू रिपोर्ट तथा कराची प्रस्ताव (कांग्रेस अधिवेशन) में मानवाधिकारों की आवाज उठाई। भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन ने सदैव शोषण के विरूद्ध संघर्ष किया। यह संघर्ष मानव अधिकारों और मानवता के लिए संघर्ष था। इसमें केवल राजनीतिक आजादी की मांग ही नहीं अपितु सामाजिक और आर्थिक आजादी की मांगे भी थीं। स्वतंत्र भारत के नीति–निर्माता ने देश में मानवाधिकारों का समर्थन करते हुए राज्य के लोक–कल्याणकारी सिद्धान्त को अपनाया है **(नेमा एवं शर्मा, 2006)**।

भारतीय शासन व्यवस्था में लोकतंत्र को अपनाया गया है। एक व्यवस्था के रुप में लोकतंत्र व्यक्ति को आत्म सम्मान एवं जीवन–यापन का अवसर प्रदान करता है। यह लोगों को आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सहित सभी प्रकार के मानव अधिकारों के उपयोग का अवसर प्रदान करता है। यह मनमाने तरीके से व्यवहार करने के विरुद्ध प्रभावकारी सुरक्षा कानून के तहत शासन के प्रति सम्मान और मानव की गरिमा पर आधारित है। लोकतंत्र एवं कानून के शासन के प्रति वचनबद्धता को चुनौती देने वाली परिस्थितियों पर हमारे देश में निरन्तर ही अंकुश लगाया गया है। क्षेत्रीय अखण्डता एवं धर्म निरपेक्षता के सिद्धान्त और कानून मानव अधिकारों की पुष्टि में सकारात्मक सहयोग दे रहे हैं। पंजाब एवं जम्मू–कश्मीर में होने वाली आतंकवादी हिंसा, निर्दोष नागरिकों का अपहरण यातनाएं एवं बलात्कार की घटनाओं से भारत सरकार को अपने नागरिकों के मूल

अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिये विशेष कानून बनाने पड़े, जिनमें से एक आतंकवादी और विध्वंसक कार्यवाईयां रोकने सम्बन्धी टाडा कानून है। इसके बावजूद भारत में ऐसे सभी विशेष कानूनों के मामले में इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि कानून प्रक्रिया के अधीन व्यक्ति के अधिकार सुनिश्चित रहें**(बाजवा, 1995)**।

भारतीय संविधान में मानव अधिकार

संविधान की प्रस्तावना में भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतन्त्रात्मक, गणराज्य घोषित किया गया है। प्रस्तावना में संविधान के प्रमुख उद्देश्यों का विवेचन करते हुए सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय दिलाने, विचारों की अभिव्यक्ति, धर्म, विश्वास एवं पूजापाठ की स्वाधीनता प्रदान करने, पद और अवसर की समानता प्रदान करने तथा व्यक्ति की गरीमा, राष्ट्र की एकता और अखण्ड़ता सुरक्षित रखने का उल्लेख है **(गोस्वामी, 1998)**।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में ''समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र की एकता औरअखण्ड़ता'' शब्द 42वें संशोधन के द्वारा जोड़ा गया। इसके अन्तर्गत मानव समाज में व्याप्त विषमताओं को दूर करने का प्रयास भारतीय विधान के द्वारा किया गया। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मूलभूत अधिकारों की सुरक्षा के लिए संवैधानिक उपचार किये गए हैं। भारत के सभी नागरिकों के लिए सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक समानता एवं न्याय को सुनिश्चित करने की व्यवस्था भी संविधान में है**(सैनी, 2009)**।

स्वतंत्रता के बाद से ही भारत ने सदैव मानव अधिकारोंको सुनिश्चित करने के लिए प्रजातंत्रीय शासन प्रणाली को अपनाया है। हमारे देश में सभी को मताधिकार, बहुराजनीतिक दल, और कानून का शासन मुख्य तीन गुण लोकतन्त्र के आधार हैं। भारतीय न्याय–पालिका की सक्रियता, स्वतंत्र प्रेस, स्वस्थ जनमत भारतीय प्रजातन्त्र के रक्षक तथा प्रहरी हैं।

संविधान द्वारा प्रदत्त मूल अधिकार

व्यक्ति की स्वतंत्रता और उसके अधिकारों को ध्यान में रखते हुए संविधान ने व्यक्ति को मूल अधिकार भी दिए हैं, सभी व्यक्तियों को इनका उपभोग करने का अधिकार है। ये अधिकार संविधान द्वारा प्रदान किए गए हैं। यदि किसी नागरिक को इन अधिकारों से वंचित किया जाता है तो वह न्यायालय की शरण में जा सकता है। संविधान में छः मूल अधिकारों का वर्णन है, जो इस प्रकार से हैं :

(i) समानता का अधिकार

(ii) स्वतंत्रता का अधिकार

(iii) शोषण के विरूद्ध अधिकार

(iv) धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

(v) संस्कृति व शिक्षा संबंधी अधिकार

(vi) संवैधानिक उपचारों का अधिकार

(अ) बन्दी प्रत्यक्षीकरण

(ब) परमादेश

(स) प्रतिशेध

(द) उत्प्रेक्षण

(य) अधिकारपृच्छा

मौलिक अधिकारों का यह रूप सबसे महत्वपूर्ण है। इसको समाप्त कर देने पर सभी अधिकारों का महत्त्व समाप्त हो जाता है।

मूलभूत अधिकारों की चर्चा के बाद संविधान में निहित अन्य प्रावधानों की चर्चा की जा सकती है। संविधान के तीसरे और चौथे भाग मे निहित ये निर्देशित सिद्धान्त मानव अधिकार के कई पक्षों को संयोजित करते हैं। जिन अधिकारों के प्रतिबिंब इन निर्देशित सिद्धान्तों में लक्षित हैं, वह हैं –

- सम्मान एवं प्रतिष्ठा का अधिकार
- जीविका का अधिकार
- मुआवजे और पुनर्वास का अधिकार
- शीघ्र न्याय का अधिकार
- स्वास्थ्य का अधिकार
- शिक्षा का अधिकार
- समानता का अधिकार
- पर्यावरण का अधिकार

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

एशिया के अनेक देशों ने मानव अधिकार शिक्षा की दिशा मे पहल की। इसी दिशा मे भारत के राष्ट्रपति द्वारा अक्टूम्बर 1993, एक अध्यादेश द्वारा राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना की गयी, जिसे 8 जनवरी, 1994 को संसद में अधिनियम का स्वरूप प्रदान किया गया। भारत में जनता के लिए मानवाधिकारों के हनन संबंधी मामलों में न्याय प्राप्त करना कठिन न हो। इसे ध्यान में रखते हुए 14 दिसम्बर, 1992 को दिल्ली में मुख्यमंत्रियों का एक

सम्मेलन आयोजित किया गया इस सम्मेलन में सर्वसहमति से स्वीकार किया गया कि देश में एक राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का गठन किया जाए, जिसमें मानव के उन समस्त सीविल तथा राजनीतिक अधिकारों के संरक्षण को सम्मिलित किया जो मानव जीवन, स्वतंत्रता तथा स्वाभीमान से संबंधित हो।

राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकारों की सुरक्षा एवं विकास को लेकर बढ़ती चिन्ता के कारण भारत सरकार ने मानव अधिकार आयोग स्थापित करने की दिशा में यह कदम उठाया था। राष्ट्रीय स्तर पर होने वाली ज्यादतियों तथा अधिकारों के हनन के कारण लोगों की देखभाल के लिए एक संसदीय मानव अधिकार आयोग गठित करना आवश्यक था। 28 सितम्बर, 1993 को राष्ट्रपति द्वारा मानव अधिकार सम्बन्धी अध्यादेश जारी किया गया, जो की संशोधनो के बाद मानव अधिकार, सुरक्षा अधिनियम के रुप में विख्यात हुआ और अन्ततः 12 अक्टूम्बर, 1993 को आयोग का गठन मानव अधिकार संरक्षण अध्यादेश के तहत किया गया। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य मानवाधिकारों की सुरक्षा एवं विकास है **(गुप्त एवं शाह, 2011)**।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के कार्य एवं शक्तियां

अधिनियम की धारा (12) में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के कार्य एवं शक्तियों का विवेचन निम्न प्रकार से हैं –

(i) किसी भी स्थिति में मानव अधिकार का उल्लंघन होने पर अथवा किसी सिविल सेवक द्वारा कानून के विरूद्ध काम करने पर आयोग स्वयं अपने स्तर पर शिकायत उठाने पर कदम उठाता है।

(ii) मानव अधिकारो से लम्बित मामलों के सम्बन्ध में, जो न्यायलय में नहीं गये हैं, आयोग हस्तक्षेप कर सकता है।

(iii) भारत सरकार अथवा राज्य सरकारों के तहत किसी भी जेल का दौरा करना, जिससे कैदियों की स्थिति को देखा जा सके तथा सुधारात्मक सिफारिश की जा सके।

(iv) मानव अधिकारों की सुरक्षा करने वाले कानूनों का पुनर्मूल्यांकन करना तथा उन्हें लागू करने हेतु आवश्यक सिफारिश करना।

(v) आतंकवाद सम्बन्धी स्थितियों का मूल्यांकन करना और उपचारात्मक सुझाव प्रस्तुत करना।

(vi) अन्तर्राष्ट्रीय संधियों तथा उपायों के बारे में अध्ययन करना और उन्हें लागू करने संबंधी सिफारिश करना।

(vii) मानव अधिकारों के बारे में लोगों को जानकारी देना, इसके विकास हेतु जागरूक करना और मानव अधिकारों सम्बन्धी शोध कार्य करना।

(viii) मानव अधिकारों को बढ़ावा देने वाले विभिन्न कार्यों को करना तथा इस क्षेत्र में कार्यरत गैर सरकारी संगठनों को प्रोत्साहित करना।

इन सब के उपरान्त भी इतने विशाल एवं भौगोलिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं सामाजिक असमानता वाले देश में जनता के मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए किसी एक संस्था द्वारा प्रभावी कार्य करना संभव नहीं होता। इसी के साथ राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के पास बहुत ही कम समय में देश के विभिन्न क्षेत्रों में बड़ी संख्या में मानव अधिकार हनन के मामले भी बड़ी संख्या में दर्ज होने के कारण राष्ट्र स्तर के अलावा राज्य स्तर पर भी इसप्रकार की संस्था की स्थापना किये जाने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए राज्यों में मानव अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए राज्य स्तर पर मानव अधिकार आयोग के गठन का प्रावधान मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 की धारा 21 के अन्तर्गत किया गया। इस अधिनियम की पालना के संदर्भ में देश के कुछ राज्यों द्वारा अपने यहां राज्य मानव अधिकारों, अधिकार आयोगों का गठन कर लिया गया है। वर्तमान में 13 राज्यों में राज्य मानवाधिकार आयोग गठित कर लिये गए है **(अंसारी, 2000)**।

भारत में जनजाति समाज

भारतीय समाज एक अति प्राचीन समाज है और जनजातियां इसका अभिन्न अंग हैं। सामाजिक मानवशास्त्रियों तथा समाजशास्त्रियों ने समय–समय पर जनजातियों को विभिन्न पदों से सम्बोधित किया है। कुछ विद्वान जनजातियों के लिए आदिम (प्रिमिटिव) पद का प्रयोग करते हैं, इसका अर्थ है प्राचीन**(उत्प्रेति, 2009)**। हट्टन ने इन्हें आदिम जातियों (प्रमिटिव ट्राइब्स) के नाम से सम्बोधीत किया है। कई विद्वानों नेइन्हें पर्वतीय जनजातियों (हिल ट्राइब्स) की संज्ञा दी है।

घूरिये (1961)ने उन्हें तथाकथित आदिवासी अथवा ''पिछड़े हुए हिन्दू'' का नाम दिया है। **मजूमदार (1921)** ने जनजाति की व्यापक परिभाषा देते हुए लिखा है ''जनजाति परिवारों तथा पारिवारिक वर्गों का एक ऐसा समूह है जिसका एक सामान्य नाम है। जिसके सदस्य एक निश्चित भू–भाग पर निवास करते हैं, एक सामान्य भाषा का प्रयोग करते हैं। जिन्होंने एक आदान–प्रदान सम्बन्धित पारस्परिक कर्त्तव्य विषयक एक निश्चित व्यवस्था का विकास किया है। साधारणतः एक जनजाति अर्न्तविवाह के सिद्धान्त का सर्मथन करती है और उसके सभी सदस्य अपनी ही जनजाति के अन्तर्गत विवाह करते हैं।'' **वैरियर एल्विन (1943)** का मानना है कि आदिवासी भारतवर्ष की वास्तविक स्वेदशी उपज है, जिनकी उपस्थिति में प्रत्येक व्यक्ति विदेशी है। ये वे प्राचीन लोग हैं जिनके नैतिक आधार और दावे हजारों वर्ष पुराने हैं। ये सबसे पहले यहां आए हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सामान्यतः जनजाति उसे माना गया है जिसका एक भौगोलिक क्षेत्र में ही निवास होता है। उसकी एक सामान्य संस्कृति, भाषा, राजनीतिक संगठन एवं व्यवसाय होता है और एक जनजाति के सदस्य अन्तर्विवाह के नियमों का पालन करते हैं।

भारतीय संविधान में भारतीय समाज के अन्य पिछड़े वर्गों के साथ जनजातियों के लिए भी विशेष प्रावधान किये गये हैं। देश की जनजातियों की एक नई परिभाषा भारतीय संविधान ने दी है। संविधान के अनुसार ये जनजातियां अब अनुसूचित जनजातियां कहलाती हैं। संविधान की धारा 342 के अनुसार राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वह सार्वजनिक सूचना द्वारा उन जनजातियों, जनजाति समुदायों या जनजाति समुदायों के हिस्सों को इस संविधान के अर्थ में अनुसूचित जनजातियों के नाम से घोषित करेगा। इस घोषणा में सम्मिलित किये जाने वाले समूह को आर्थिक सुविधाएं मिलती हैं। शिक्षा तथा व्यवसाय में अनुसूचित जातियों के समान आरक्षण भी मिलता है। ऐसी अवस्था में यह अत्यन्त आवश्यक है के जनजाति की अवधारणा के बारे में स्पष्टता हो ताकि राज्य कि ओर से लाभ उन्हीं समूहों को दिला सके जिन्हें वास्तव में इन कल्याणकारी योजनाओं का लाभ मिलना चाहिए**(उत्प्रेति, 2000)**।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जनजातियों का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारत में जनजाति समूह देश के पिछड़े वर्गों में रखे जा सकते हैं। विश्व में जनजातियों के वितरण की दृष्टि से भारतवर्ष में जनजाति संख्या किसी भी देश से अधिक है। भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजातियों की संख्या 212 है। 1941 में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या लगभग ढ़ाई करोड़ थी। 1951 में इनकी जनसंख्या लगभग 1 करोड़ 92 लाख रह गई। 1961 में इनकी संख्या 2 करोड़ 99 लाख थी और 1971 में यह 4 करोड़ 11 लाख से अधिक हो गयी। 1981 में की जनगणना के अनुसार यह 5 करोड़ 16 लाख थी तथा 1991 में 6 करोड़ 78 लाख थी। वर्तमान में भारत में अनुसूचित जनजातियों कि जनसंख्या 10.43 लाख है जो की देश की कुल जनसंख्या का 8.61 प्रतिशत है।

भारत भौगोलिक दृष्टि से विशाल आकार का देश है। भौगोलिक विशेषता के कारण यहां अनेक ऐसी जनजातियां निवास करती हैं जो आज भी सभ्यता से पर्याप्त दूर हैं। अनेक जनजातियां सुदूर जंगलों, पहाड़ों तथा पठारी क्षेत्रों में अपना जीवन यापन करती हैं।

भारत में मानव अधिकारों के सामाजिक व राजनीतिक परिवेश और जनजाति समाज की स्थिति

मानव अधिकारों और भारत में उसके सामाजिक रिश्तों को समझना आवश्यक है। उपनिवेशवाद ओर सामन्तवादी आधारों के इतिहास मे परिवर्तन भारत की स्वतंत्रता के बाद बदला। जो संविधान बना उसमें यह दावा किया गया कि प्रत्येक को अधिकार प्राप्त होंगे। यह विश्व परम्परा थी कि संविधान वाद की धारा

के अन्तर्गत प्रत्येक संविधान में मानव अधिकारों को अवश्य सम्मिलित किया जाएगा। संयुक्त राष्ट्र संघ की भी यही आकांक्षा थी। अधिकारों के ये प्रसंग निम्न आधारों से जुड़े हुए थे।

- जन अधिकार
- व्यक्तियों के व्यक्तिगत अधिकार
- राज्य के अधिकार
- समुदायों के अधिकार

व्यक्ति चाहे जिस सामाजिक पृष्ठभूमि का हो उसे समान अधिकार मिलना चाहिये, उसको समान उपलब्धियां मिलनी चाहियें। एक दूसरे के बीच या समुदायों के बीच भेदभाव भारतीय समाज के लिये बहुत बड़े प्रश्न रहे हैं। समाजिक परिवेश में भेदभाव के कई रूवरूप विद्यमान है ओर विद्यमान रहे हैं। कुछ उदाहरण इस सम्बन्ध में बड़े स्पष्ट है।

जाति एक ऐसा ही उदाहरण है। जाति की पृष्ठभूमि धार्मिक है, श्रम विभाजन है, जन्म की सदस्यता, केवल जाति में विवाह की प्रथा, अंर्तनिहित भेदभाव की व्यवस्था है। अस्पृश्यता इसका एक भाग है। मानव अधिकारों पर इसका प्रभाव पड़ता है। दलितों ने इस भेदभाव के लिये संघर्ष भी किया है। वर्ग व्यवस्था आर्थिक गैर बराबरी का प्रतीक है। आर्थिक रूप में जीने का अधिकार सभी का है। शिक्षा, जीविका तथा धन कमाने का अधिकार सभी को है। इन्हीं आवश्यकताओं ने वर्ग बनाए हैं। यही वर्ग व्यवस्था अधिकारों को प्रभावी करती है।

नृजातीयता अथवा संस्कृति के भेदभाव भी अधिकारों के प्रश्न उठाते हैं। जनजाति समूह भी भेदभाव के शिकार हैं। भूमि के अधिकार, पानी का अधिकार, गण का अधिकार उनकी प्रमुख समस्याएं है। समाज में जनजातियों की अपनी पहचान के प्रश्न भी है। उनको विकास के नाम पर उजाड़ दिया जाता है। जनजातियों के साथ भेदभाव सामाजिक भी हैं और आर्थिक भी। यही भेदभाव जनजातियों के लिये अधिकार प्राप्त करने के लिये आन्दोलनों की प्रेरणा देते हैं। माओवादी आन्दोलन इस सम्बन्ध में एक बड़ा उदाहरण है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि भारत की जनजातियां वर्तमान में एक तीव्र संक्रमण काल से गुजर रही हैं। कतिपय जनजातियों को छोड़कर अधिकांश जनजातियां वर्तमान समय में विकास के निम्न स्तर पर है। उनकी विडम्बना दोहरी है एक ओर वे अपने सामाजिक अस्तित्व को बनाए रखना चाहती हैं, अपने समूह की विशिष्टता, सामाजिक और सांस्कृतिक लक्षणों को संजोए रखना चाहती है, और दूसरी ओर भारतीय समाज की मुख्य धारा में अपने आपको एकीकृत करना चाहती है। पृथकता और एकीकरण की ये प्रक्रियाएं परस्पर विरोधी होते हुए भी, एक सीमा तक परस्पर पूरक हैं। आजादी से पहले जनजातियों को जो समस्याएं

थीं, वे आज नहीं हैं, कम से कम उस रुप में तो नहीं हैं, परन्तु पिछली दो दशाब्दियों में जो परिवर्तन हुए हैं, उनके परिणामस्वरुप जनजातियों के सामने कुछ ऐसी समस्याएं आायी हैं, जो पहले उनके सामने नहीं थी। सीमान्त क्षेत्र में रहने वाली जनजातियों मेंराजनीतिक चेतना ने कुछ ऐसी दशा प्रस्तुत की है जिसके परिणामस्वरुप जनजाति समूह स्वायत्त राज्य की मांग करने लगे हैं। स्वायत्त्ता की यह हवा ऐसी चली हे कि पिछले कुछ दशकों में गुजरात, बिहार और राजस्थान की जनजातियों ने पृथक जनजाति राज्यों की मांग की है। दूसरी और, सम्पर्क, संचार तथा आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के परिणामस्वरुप जनजातियां परिवर्तन के नये मोड़ पर खड़ी हैं। उनकी जीविका अर्थव्यवस्था, बाजार अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में पहूंच रही है। पंचायती राज से लेकर संसद के प्रांगण तक जनजातियां राजनीतिक गतिविधि में सहभागी हैं। परिणामस्वरुप आज जनजातियां और उनकी युवा पीढ़ी पिछली पीढ़ी की अपेक्षा कुछ सशक्त और आश्वस्त दिखायी देती है, लेकिन उन्हें विकास की मुख्यधारा में लाने के लिये उन्हें मानवाधिकारों के प्रति शिक्षित व आत्मनिर्भर करने की आवश्यकता है।

संविधान द्वारा जनजातियों हेतु विशेष संरक्षण की व्यवस्था

भारतीय संविधान में जनजातियों के लिए विशेष संरक्षण की व्यवस्था की गई है। संविधान के अनुच्छेद 15 (1) में यह कहा गया है कि राज्य किसी विशेष नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मगत स्थान अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा। दुकानो, सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश करने और साधारण जनता के उपयोग के लिये कुओं, तालाबों, स्नानघरों, सड़कों आदी के प्रयोग से कोई किसी को नहीं रोकेगा। अनुच्छेद 17 के अनुसार अस्पृश्यता का अन्त कर उसका किसी भी रुप में प्रचलन निषिद्ध कर दिया गया है। अनुच्छेद 19 के आधार पर अस्पृश्यों की व्यावसायिक निर्योग्यता को समाप्त किया जा चुका है और उन्हें किसी भी प्रकार के व्यवसाय को अपनाने की आजादी प्रदान की गई है। अनुच्छेद 25 में हिन्दुओं के सार्वजनिक, धार्मिक स्थानों के द्वार सभी जातियों के लिए खोल देने की व्यवस्था की गई है। अनुच्छेद 29 के अनुसार राज्य द्वारा पूर्ण अथवा आंशिक सहायता प्राप्त किसी भी शिक्षण संस्था में किसी नागरिक को धर्म, जाति, वंश अथवा भाषा के आधार पर प्रवेश से नहीं रोका जा सकता। अनुच्छेद 46 में कहा गया है कि राज्य दुर्बलतर लोंगो जिनमें अनुसूतिचत जातियां एवं आदिम जातियां आती हैं, कि शिक्षा सम्बन्धी तथा आर्थिक हितों की रक्षा करेगा और सभी प्रकार के सामाजिक अन्याय एवं शोषण से उनको बचाएगा। अनुच्छेद 330, 332 और 334 के अनुसार अनुसूचित जातियों तथा आदिम जातियों के लिए संविधान लागू होने के 20 वर्ष तक लोकसभा, विधानसभाओं, ग्राम पंचायतों और स्थानीय निकायों में स्थान सुरक्षित रहेंगे। बाद में यह अवधि दस–दस वर्ष के लिए दो बार और बढ़ा दी गई। अनुच्छेद 335 में कहा गया कि संघ या राज्य के कार्यों से संबंधित सेवाओं और

पदों के लिए नियुक्तियां करने में अनुसूचित जातियों के हितों पर ध्यान दिया जायेगा।

अनुच्छेद 146 एवं 338 के अनुसार अनुसूचित जातियों के कल्याण एवं हितों की रक्षा के लिए राज्य से सलाहकार परिषदों एवं अलग–अलग विभागों की स्थापना का प्रावधान किया गया है। साथ ही यह भी बताया गया कि राष्ट्रपति अनुसूचित जातियों और आदिम जातियों के लिए एक विशेष पदाधिकारी नियुक्त करेंगे। इन संवैधानिक व्यवस्थाओं के द्वारा अस्पृश्यता निवाारण एवं अनुसूचित जातियों तथा पिछड़े वर्गों के उत्थान का सरकार के द्वारा विशेष प्रयत्न किया गया है। अन्य लोगों के समान स्तर पर लाने और प्रगति के पद पर आगे बढ़ने में सहायता करने के उद्देश्य से अनुसूचित जातियों व पिछड़े वर्गों के लिए शिक्षा का विशेष प्रावधान किया गया है। देश कि सभी सरकारी संस्थाओं में अनुसूचित जातियों एवं आदिम जातियों के विद्यार्थियों के लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था कि गई तथा सन् 1944–45 से अस्पृश्य जातियों के छात्रों को छात्रवृत्तियां देने की योजना प्रारम्भ कि गई। विधानमण्डलों एवं पंचायतों में प्रतिनिधित्व हेतु उनकी संख्या के अनुपात में स्थान सुरक्षित रखे गये हैं। केन्द्र एवं राज्यों में इन वर्गों के कल्याण हेतु अलग–अलग विभागों की स्थापना कि गई तथा पृथक–पृथक मंत्रालय भी स्थापित किये गये हैं। उच्च शिक्षा प्राप्त करने पर अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार करने तथा उच्च जाति के लोगो के संपर्क में आने को प्रोत्साहित करने के लिए सरकारी नौकरियों में स्थान सुरक्षित रखे गये हैं **(उत्प्रेति, 2000)**।

जनजाति समाज में मानवाधिकार

कोई भी समाज स्तरीकरण की दृष्टि से उच्च, मध्यम एवं निम्न स्तरों में विभाजीत होता है और लोगों की भूमिकाओं या उनकी प्रस्थिति के आधार पर ही समाज में उन व्यक्तियों से व्यवहार किया जाता है। मानवाधिकार अर्थात मानव को प्रकृति से प्राप्त वे अधिकार जिनका समुचित प्रयोग कर मनुष्य अपने सर्वांगीण विकास की दिशा में आगे बढ़ता है, इसलिए मनुष्य जीवन की सार्थकता अपने विकास के साथ–साथ दूसरों के विकास के अधिकारों का सम्मान करने और उन्हें उपयोग में लाने का अवसर देने में ही है। आधुनिक समाज में सभी को मानव जीवन के मूल अधिकार देने की बात कही जाती रही है, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस प्रकार के प्रावधान बनाए गए, जिससे कोई व्यक्ति दूसरे के मानवाधिकारों का हनन न कर सके। परन्तु, क्या वास्तव में इन्हें अमल में लाया गया है? हकीकत में नहीं, जनजाति समाज आज भी दुर्बलतर लोगो की गिनती में आता है। विडम्बना की बात यह है कि अनेक संवैधानिक प्रावधानों तथा आरक्षण के पश्चात् भी जनजाति समाज का काफी बड़ा भाग सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा ही रह गया है।जनजातियों में बीमारी, रूगण्ता और उपचारों के परम्परागत, देशज एवं जादुई, धार्मिक, अद्वैतवादी देवी–देवता, भोपा, आयुर्वेद, आयुर्विज्ञान तथा हेतु विज्ञान का आज भी बोलबाला है। आज भी अधिकांश जनजाति रोगी आधुनिक चिकित्सालय में आने से पूर्व परम्परागत उपचारों

के तरीकों को अपनाते और उनके प्रभावी परिणाम नहीं होने की वजह से आधुनिक चिकित्सा हेतु आते हैं। आधुनिक चिकित्सा में राहत नहीं मिलती है तो वे पुनः प्राकृतिक, आलौकिक शक्तियों की शरण में जाने में रूचि रखते हैं। जनजाति रोगियों तक आज भी आधुनिक चिकित्सा कि व्यापक पहुंच नहीं है तथा चिकित्सालयों में गरीब, अज्ञानता के कारण कार्मिकों के शोषण का शिकार हो जाते हैं।

जनजाति समाज के सदस्य दो स्तरों पर मानवाधिकार को लेकर वंचित हैं। प्रथम स्तर पर मानवाधिकार का उल्लघंन और गैर–जनजाति व्यक्तियों, समूहों एवं संगठनों द्वारा जनजाति व्यक्तियों, समूहों एवं समाजों पर किया जाता रहा है। जनजाति समाज के व्यक्तियों का शोषण हर क्षेत्र में देखा जा सकता है, और जनजाति सदस्य अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के कारण शोषित भी होते रहे हैं। स्वतंत्रता के बाद विकास की धारा से इसमें कमी तो हुई है लेकिन, शोषण एवं असमानता का कोई मौका गैर–जनजाति वालें नहीं चूकते। दूसरे स्तर पर मानवाधिकार का उल्लघंन स्वयं जनजाति के लोग अपने ही सदस्यों से करते देखें जा सकते हैं, जिसमें असमानता, शोषण, समय अवसर उपलब्ध ना होना, यौन सम्बन्धों, आदि में देखा जा सकता है। जनजाति को समानतावादी समाज (Egalitarian Society) माना जाता रहा है। जहां स्त्री–पुरूष को समान माना जाता रहा है तथा, मुखिया व अन्य सदस्यों के अलावा स्तरीकरण का कोई आधार नहीं था। लेकिन, गैर–जनजाति समाज से सम्पर्क के बाद स्तरीकरण भी बढ़ा है, और स्त्री–पुरूष के बीच असमानता भी बढ़ी है। यह जनजाति–गैर जनजाति सांस्कृतिक सम्पर्क के बढ़ने के साथ बढ़ा है और, यह मानवाधिकार के उल्लघंन का स्तर भी इसी सम्पर्क से बढ़ा है। राजनीति और विकास प्रक्रिया ने मानवाधिकार के उल्लघंन की मात्रा को जनजाति में बढ़ावा दिया है।

जनजाति समाज की इस स्थिति का प्रमुख कारण अशिक्षा व अज्ञानता है परन्तु क्या शिक्षा भी इन्हें इन कुप्रथाओं से दूर कर पा रही है? वास्तविकता तो यह है कि इन अन्धविश्वासों का समर्थन करने में कई शिक्षित लोग भी सम्मिलित हैं। सरकारी प्रयासों, निःशुल्क शिक्षा व ऐसी कई अन्य सुविधाओं के पश्चात भी जनजाति समाज का एक बहुत बड़ा हिस्सा इन अन्धविश्वासों से ग्रसित है। वर्तमान स्थिति में सुधार की नितान्त आवश्यकता है।

जनजाति उपयोजना क्षेत्र और मानवाधिकार

जनजातियों के विकास हेतु प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही प्रयास किये जा रहे थे जिसमें मुख्य रूप से शिक्षा, कृषि, सिंचाई, स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराने तथा विकास के लिये मूलभूत ढ़ांचा तैयार करने का काम किया गया था परन्तु इसका लाभ विशेष रूप से अन्य वर्गों ने ही उठाया। तभी पांचवी पंचवर्षीय योजना में जनजाति उपयोजना का दृष्टिकोंण स्वीकार किया गया और इस उपयोजना क्षेत्र में राजस्थान राज्य के दक्षिण–पूर्व में स्थित पांच जिलों की 25 तहसीलों के 5054 गांवों को सम्मिलित किया गया जिनमें जनजातियों का सघन आवास है।

मानवाधिकार हनन की बात की जाये तो इस क्षेत्र में मानवाधिकार हनन की घटनाएं हर रोज होती है। जिसका मुख्य और दृष्टिगत कारण है जागरूकता की कमी। जागरूकता के अभाव में इस समाज के कई लोग अत्याचार व शोषण का शिकार होते हैं। बलात्कार, हिंसा, मारपीट, अपहरण जैसी कई घटनाएं समाचार पत्रों में पढ़ने को मिलती है। कभी किसी महिला को डायन का आरोप लगा कर पीटा जाता है, शारीरिक तथा मानसिक रूप से रूग्ण होने पर डॉक्टर द्वारा चिकित्सा करवाने की जगह डाम (दागना) लगा दिया जाता है। इनकी गरीबी इनकी सबसे बड़ी कमज़ोरी है, जिसके कारण बाल मजदूर अधिकांशतः इस क्षेत्र मे देखने को मिलते है। कम वेतन में अधिक काम करवा कर भी इनका शोषण किया जाता है। कई होटलों में, चाय की दुकानों पर छोटे–छोटे बाल श्रमिकों को देखा जा सकता है जो अपने परिवार का पेट पालने के लिये कम वेतन पर भी अपना श्रम बेचते देखे जा सकते हैं।

जनजाति समाज के लिये रीति–रिवाज परम्पराएं आदि इनकी संस्कृति है, जिसे छोडकर ये अपने पूर्वजों को नाराज नहीं करना चाहतेऔर इसी वजह से ये लोग जाने–अनजाने किसी न किसी के अथवा स्वयं के अधिकार का हनन कर रहे हैं। इसी कारण इस क्षेत्र में मानवाधिकारों की स्थिति भी ठीक नहीं है।

जनजाति युवा और मानवाधिकार

युवा की अवधारणा सामान्यतः आयु से जुड़ी है। यह माना जाता है कि 18–35 वर्ष की आयु का वर्ग युवा कहलाता है। ये युवा जनसंख्या जो कि भारतीय जनसंख्या का एक तिहाई भाग है, प्रत्येक समाज का भविष्य कही जाती है।जब किसी भी समाज की तत्कालीन स्थिति का आंकलन किया जाता है अथवा उसके विकास का मूल्यांकन किया जाता है तो वह मूल्यांकन उस समाज के युवा वर्ग का होता है क्योंकि युवा वर्ग ही समाज के भविष्य को प्रदर्शित करता है।

युवावस्था की व्याख्या सामान्य तौर पर जैविकीय संदर्भ में की जाती है। युवावस्था किस आयु में प्रारम्भ होकर किस आयु में समाप्त होती है इसकी धारणा भिन्न–भिन्न समाजों में भिन्न–भिन्न है। जैविकीय रूप से युवावस्था प्रौढ़ावस्था के पहले तथा किशोरावस्था के बाद की अवस्था है।

समाजशास्त्रीय रूप से यदि युवावस्था की व्याख्या की जाए तो युवावस्था एक प्रदत्तप्रस्थिति है। यह मात्र जीवन–अवस्था का एक पड़ाव नहीं है। कई समाजों में विशिष्ट कर्मकाण्डों द्वारा सदस्यों के युवा होने की घोषणा की जाती है। इन विशिष्ट कर्मकाण्डों में जिन्हें युवा घोषित किया जाता है उन्हें यह अहसास करवाया जाता है कि समाज में अब उनकी क्या प्रस्थिति व भूमिका है और अन्य सदस्यों से उन्हें किस प्रकार व्यवहार करना है तथा अन्य लोगों को उनके साथ किस प्रकार का व्यवहार करना है **(कुमावत एवं मीणा, 2012)**। यह माना जाता है

कि इसी अवस्था से युवा सही और गलत का उचित निर्णय लेने लगता है। संविधान में भी सरकार चुनने के लिये 18 वर्ष की आयु निश्चित की है।

जनजाति समाज में भी युवाओं की चर्चा की जाए तो इस समाज का युवा वर्ग भी अन्य युवाओं की भंति अपने समाज में युवा होने के पश्चात् कुछ जिम्मेदारियों को निभाने लग जाता है। युवाओं के साथ मानवाधिकारों की बात की जाए तो यद्यपि आज का जनजाति युवा परिवर्तन को स्वीकार कर रहा है। समय के साथ चलने की कोशिश कर रहा है। परन्तु यह जान लेना आवश्यक है कि क्या ये युवा मानवाधिकारों को भलीभांती जानता है? समानता के अधिकार का सही अर्थ जानता है? अपने पर हुए अत्याचारों का विरोध करना जानता है? इसी आधार पर यह निश्चित किया जा सकता है कि आज का जनजाति युवा मानवाधिकार के संदर्भ में किस स्थिति में है।यह अनुसंधान इन्हीं प्रश्नों के उत्तर खोजने की दिशा में एक प्रयास है।

सारांश

सामाजिक न्याय की अवधारणा का संदर्भ बहुमुखी है। मानव अधिकार घोषणा पत्र प्रकाशित होने के बाद विषमता वाले समाजों में सामाजिक न्याय, मानवाधिकारों का अंग बन गया है। इसके बहुत से सन्दर्भ मानवाधिकारों से जुड़ गए। स्थूल रूप से मानव अधिकार व मौलिक अधिकार वे अधिकार हैं जो, मनुष्यों के जीवन के लिये आवश्यक हैं। जिनके बिना मानव अपने व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के बारे में सोच भी नहीं सकता जो कि मानव में मानव होने के फलस्वरूप अन्तर्निहित हैं। मानव अधिकारों को कभी–कभी मौलिक या नैसर्गिक अधिकार भी कहते हैं, क्योंकि ये वे अधिकार हैं, जिन्हे किसी वैधानिक संस्था या सरकार के किसी कृत्य द्वारा छीना नहीं जा सकता है।

मानवाधिकारों का विकास विभिन्न चरणों से होता हुआ पूर्णता की ओर पहुंचा और अन्ततः एक लम्बा सफर तय करते हुए, विभिन्न शासन व्यवस्थाओं और नामों से गुजर कर यह अधिकार मानवाधिकारों के नाम से प्रसिद्ध हुए। 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा में मानवाधिकारों कीघोषणा कर दी गई। जनता के मानवाधिकारों के हनन् सम्बन्धी मामलों में न्याय प्राप्त करने के लिय राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का गठन भी किया गया। चुंकि पहले से ही स्पष्ट किया जा चुका है कि मानवाधिकार प्रत्येक मानव के लिये हैं। लेकिन यह प्रश्न महत्वपूर्ण है कि जिन लोगों के लिये ये अधिकार दिये गये हैं वे इनके प्रति कितने जागरूक हैं ?

इसी उद्देश्य से इस अध्याय में मानव अधिकारों की व्याख्या जनजातियों के संदर्भ मे की गई है। ये जनजातियां संविधान के अनुसार अब अनुसूचित जनजातियां कहलाती हैं तथा इन्हे कुछ सुविधाएं भी प्राप्त हैं। यहां इन्हीं जनजातियों के संदर्भ में मानवाधिकारों को देखने का प्रयास किया गया है।

संदर्भ सूची

1. अंसारी एम.ए. (2000). *महिला और मानवाधिकार,* जयपुर : ज्योति प्रकाशन.
2. एल्विन, वेरियर, (1943). *दि एबोरिजिनल्स,* बम्बई : ऑक्सफोर्ड. यूनीवर्सिटी.
3. बक्शी, उपेन्द्र, (1998). *द स्टेट एण्ड. ह्युमन राईट्स मूवमेन्ट इन इण्डि.या*, इन *पीपुल्स राईट्स सोष्यल मुवमेन्ट एण्ड़ द स्टेट इन द थर्ड़ वर्ल्ड़,,* सम्पादक मनोरंजन मोहन्ती, पार्थनाथ मुखर्जी, एवं औलेटोर्न क्वीस्ट, लंदन : सेज.
4. बाथम, मनोहर, (2006). *अस्तित्व का संकट और मानवाधिकार,* दिल्ली : मेधा बुक्स प्रकाशन.
5. बाजवा, जी.एस., (1995). *भारत में मानवाधिकार क्रियाकलाप और उल्लंघन,* नई दिल्ली : अनमोल पब्लिकेशन.
6. बैरिक, एफ. ई., (1978). ह्युमन राइट्स, प्राब्लम्स, पर्सपेक्टिव एण्ड. टेक्ट्स, *सिरीज ऑफ लेक्चर्स एण्ड. सेमीनीर पेपर्स,* लन्दन : डि.लीवर्ड. इन द यूनिवर्सिटी ऑफ द लन्दन.
7. भार्गव, नरेश, (2014). *वैश्विकरणसमाजशास्ि.य परिप्रेक्ष्य,* जयपुर : रावत पब्लिकेशन.
8. चन्द्रा, रमेश, (2010). *मानवाधिकार, विविध आयाम एवं चुनौतियां,* दिल्ली : अंकित पब्लिकेशन.
9. छंगमलाल, वसुधा, (1998). द प्रोब्लम, *सेमिनार* 441, मई.
10. गुप्ता, जयश्री, (1999). *ह्युमन राईट्स एण्ड़ वर्किंग वीमेन,* ———— पब्लिकेषन ड़िविज़न.
11. गुप्ता, कंचन, (1998). टूवर्ड़स एन इक्वलसोष्यल ओर्डर, *सेमिनार,* 441, मई
12. गुप्ता, कैलाशनाथ व शाह, सरिता,(2011).*मानवाधिकार : संघर्ष, संदर्भ एवं निवारण, नई दिल्ली* : अभिव्यक्ति प्रकाशन.
13. घुर्ये, जी. एस., (1961). *जाति, वर्गऔरव्यवसाय,* बोम्बे : पोपुलर डि.पो.
14. कुमावत, नन्दकिशोर व मीणा, सतीश, (2012). *युवा संस्कृति,* जयपुर : ग्रन्थविकास.
15. कन्नमा, एस. रमन, (1998). *युनिवर्सीटी ऑफ ह्युमन राईट्स डि.सकोर्स,* बोम्बे : बोम्बे युनिवर्सीटी.

16. लेविस, लेह, (1998). *ह्युमन राईट्स,* न्यू देहली : नेशनल बुक पब्लिकेशन.

17. लेविन, लीन, (1998). *ह्युमन राईट्स : क्वेष्चन एण्ड़ आनसर्स,* बम्बई : नेशनलबुक ट्रस्ट.

18. मेक्फारलेने, (————). *द थ्योरी एण्ड प्रेक्टीस ऑफ ह्युमन राइट्स* उदृत, जोशीआर.पी.

19. मजूमदार, (1921). *रेसेज एण्ड. कल्चर्स ऑफ इंडिया.*

20. नेमा, जी.पी. व शर्मा के.के., (2006). *मानवाधिकार : सिद्धान्त एवंव्यवहार,* जयपुर : कॉलेज बुक.

21. रमन, के. एस., (1998). *ह्युमन राईट्स ड़िस्कोर्स,* मुम्बई : यूनिवर्सिटी ऑफ बोम्बे.

22. *संयुक्त राष्ट्र संघ का घोषणा पत्र,*(1948)

23. सईद, अब्दुल्लाह, (2012). *ईस्लाम एण्ड. ह्युमन राईट्स* (ह्युमनराईट्सलॉ सीरीज), एड.वार्ड. एल्गर पब्लिकेशन.

24. सैनी, इन्दु, (2009). *मानवाधिकार और महिला,* पिलानी : कपिल प्रकाशन.

25. तलेसरा, हेमलता व पंचोली, नलिनी,(2003).*मानव अधिकार एवं शिक्षा,* उदयपुर : अंकुर प्रकाशन.

26. उप्रेति, हरिशचन्द्र, (2000). *भारत में जनजातीयांः संरचना एवं विकास,* दिल्ली : अंकित पब्लिकेशन.

27. विन्सेन्ट, (1987). *ह्युमन राईट्स एण्ड. इन्टरनेषनल रिलेषन्स,* केम्ब्रिज : केम्ब्रिज युनिवर्सीटी प्रेस.

❑❑❑

2

साहित्य समीक्षा एवं अनुसंधान पद्धति

पिछले अध्याय में मानव अधिकारों से सम्बन्धित सैद्धान्तिक तथा ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यों की चर्चा की गई। यह स्पष्ट किया गया कि मानव अधिकारों का सम्बन्ध मानव की सामाजिक एकता, समता, शोषण विहीनता और सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों से है। प्रस्तुत अध्याय में अनुसंधान व्यवहार और पद्धति का विश्लेषण करने से पूर्व इसी विषय पर किये गये अन्य अध्ययनों की समीक्षा की गई है।

साहित्य समीक्षा किसी भी अनुसंधान का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। अनुसंधानकर्त्ता के लिए यह एक मार्गदर्शक है। साहित्य समीक्षा के आधार पर ही अनुसंधानकर्त्ता को यह ज्ञात होता है कि अभी तक विषय से सम्बन्धित कौन से आयाम अध्ययन से अछूते रह गये हैं ? इसके पश्चात् ही वह एक निश्चित लक्ष्य बनाकर एक उचित दिशा में नवीन तथ्यों का विश्लेषण कर सकता है और पुनरावृत्ति से बच सकता है। अनुसंधानकर्त्ता साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात् स्वयं कई प्रश्नों से परिचित होता है और पहले के विद्वानों द्वारा की गई अनुशंसाओं से भी परिचित होता है। परिणामस्वरूप उसके मन में नये विचार व जिज्ञासाएं जन्म लेती हैं।

अनुसंधान विषय से सम्बन्धित साहित्य समीक्षा में मानवाधिकार, जनजातियां तथा जनजातियों में मानवाधिकार, बच्चों तथा महिलाओं के अधिकारों से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित अध्ययनों की समीक्षा सम्मिलित हैं। जिनका विवरण प्रस्तुत है–

मानव अधिकारों से सम्बन्धित उपलब्ध साहित्य की समीक्षा

बोहरा (1994) ने मानवाधिकारों से सम्बन्धित कानूनी और संवैधानिक प्रावधानों का तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के कानूनों और प्रावधानों का विश्लेषण किया है। उन्होंने इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर रोशनी डाली है कि मानवाधिकारों का पालन करना हमारे अन्तर्राष्ट्रीय दायित्व का एक अनिवार्य और बाध्यकारी हिस्सा है और इसे महज राजनीतिक और क्षेत्रीय हितों के गणित से सम्बन्धित नहीं किया जा सकता।

बाजवा (1995) ने अपनी पुस्तक में भारतीय संविधान के द्वारा भारतीय जनता को प्रदत्त मानव अधिकार का विश्लेषण अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार घोषणा पत्र के संदर्भ में किया है। लेखक की यह कृति उन तथ्यों को भी रेखांकित करती है जो भारतीय संविधान में भारतीय नागरिकों के मूल अधिकारों के प्रावधानों के बावजूद पुलिसिया आतंक, दयनीय कारागार, बालश्रम, बंधुआ मजदूरी, महिला शोषण आदि की स्थितियों से लगातार जुड़ी हुई हैं। बाजवा ने इस कृति में कुछ प्रश्न उठाये हैं जैसे–क्या राज्य सरकारें भी मानव अधिकार को आमजन तक पहुंचाने की दिशा में कदम उठाने के लिये इच्छुक हैं ? गैर सरकारी संगठनों की भूमिका राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के गठन के बाद क्या होनी चाहिए ? राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की अब तक की उपलब्धियां क्या है ? भविष्य में इस आयोग की क्या भूमिका रहेगी ? क्या राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग मात्र विधि की सलाहकारी एवं खोजी संस्था है ? आदि।

चितकारा (1996) ने अपनी पुस्तक में स्पष्ट किया है कि वर्तमान संदर्भ में देखा जाए तो मानवाधिकारों का कोई महत्त्व अथवा अस्तित्व नजर नहीं आता। लेखक ने नौकरशाही, आतंकवादी, और अणु युद्धों का उल्लेख करते हुए पाकिस्तान एवं कश्मीर में होने वाली हिंसा का वर्णन भी कियाहै तथा इन सब को एक चुनौती के रूप में स्वीकार किया है।

बाबेल (1998) ने स्पष्ट किया है कि यदि मानवाधिकारों की रक्षा करनी है, तो यह आवश्यक है कि पुलिस व प्रशासन अपनी जिम्मेदारी को समझें तथा मानवाधिकारों की रक्षा में अपना पूरा योगदान दें। लेखक का मानना है कि पुलिस ही है जो, समाज, कानून और व्यवस्था तथा शान्ति बनाए रखने का गुरूत्तर भार निभा सकती है। इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि पुलिस प्रशासन अपनी शक्ति का दुरूपयोग करके मानवाधिकारों की रक्षा के बजाय उनका हनन अधिक करता है।

कुमार एवं श्रीवास्तव (2001) ने तर्क दिया है कि इसमें कोई शक नहीं है कि भ्रष्टाचार ने मानवाधिकारों का उल्लंघन कर कलुषित वातावरण बनाया हैं। इसी कारण नागरिकों के सभी राजनीतिक, आर्थिक, साामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार भ्रष्ट हो गए हैं, और जाने–अनजाने उनका हनन् भी बढ़ता जा रहा है। लेखक ने अपनी इस कृति में स्पष्ट करते हुए कहा है कि राज्यों का विकास बड़े

पैमाने पर आर्थिक नीतियों और सामाजिक परिणामों पर निर्भर करता है और भ्रष्टाचार इन नीतियों को विशेष रूप से प्रभावित करता है। यह निम्न आर्थिक वृद्धि, विदेशी पूंजी निवेश को निराश और संसाधनों को विभाजीत करता है। साथ ही स्वास्थ्य और अन्य लोक प्रशासनों, शिक्षा और निर्धनता को समाप्त करने वाले कार्यक्रमों को असफल करता है।

गौतम एवं सिंह (2001) ने मानवाधिकारों के ऐतिहासिक विकास पर प्रकाश डालते हुए बताया है कि जब–जब प्रशासन कठोर व निरंकुश बना है जनता ने उसका पतन कर दिया है। मानवाधिकारों के विकास क्रम में ब्रिटिश मेग्नाकार्टा 1215, अमेरिका की घोषणा, फ्रांस में राज्य क्रान्ति आदि का विवेचन किया गया है। ये मानवाधिकारों के इतिहास, उसकी प्राप्ति एवं प्रगति में प्रमुख रुप से उत्तरदायी हैं साथ ही लेखक ने भारत में राजतंत्र व्यवस्था के समय मानवाधिकारों की स्थितिव प्राप्ति के संघर्ष का वर्णन करते हुए कहा है कि उस समय मानवाधिकारों की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी।

शर्मा (2002) के अनुसार मानवाधिकारों का उल्लंघन संसार के सभी नागरिकों के लिये वर्तमान समय में चिंता का विषय है। सभी मूल्य आधारित हिंसाएं, जो कि सामान्यतः सामाजिक व्यवस्था के मान्य प्रतिमानों को भंग करती है, मानव व्यवहार, जीवन में अधिकार और सभी व्यक्तियों की समानता का पतन करती है। आतंकवाद जीवन के लिए अस्वीकृत मानव व्यवहार द्वारा प्रतिमानों के उल्लंघन को संसार के सभी नागरिकों द्वारा पहचाना जाना चाहिए।

नाटाणी (2003) के अनुसार वर्तमान में जनतंत्रीय व्यवस्था तथा सामाजिक न्याय की मांग में मानवाधिकारों की मांग बढ़ने का सबसे बड़ा प्रभाव यह है कि आज हर स्तर पर मानवाधिकारों को बढ़ावा मिल रहा है। विभिन्न विश्वविद्यालयों ने मानवाधिकारोंको एक विषय के रूप में अपने पाठ्यक्रम में स्थान दिया है। लेखक ने भारत में मानवाधिकार एवं कर्त्तव्य, न्यायिक जनहितवाद, कमजोर वर्गों के लिए क्रियाएं महिलाओं एवं बालकों के मानवाधिकार मानव मूल्यों के विकास की आवश्यकता पर विवेचन किया है।

चतुर्वेदी (2003) द्वारा भारत के विशेष संदर्भ में मानवाधिकारों की विवेचना की गई है। पुस्तक में, भारत में मानवाधिकार आयोग के गठन, कार्य एवं शक्तियों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। लेखक के अनुसार मानवाधिकारों के क्रियान्वयन के लिए राष्ट्रीय संस्था की स्थापना अत्यन्त प्रभावी साधनों में से एक है।पुस्तक में महिलाओं, दलित अधिकारों की चर्चा व्यापक रूप से की गई है। भारत में दलित वर्गों महिलाओं के हित में बनाये गये कानूनों व न्यायिक निर्णयों से इस वर्ग में आत्मविश्वास का संचार हुआ है। उन्हें गरिमा व आत्मविश्वास तथा सम्मान पूर्वक जीवन जीने का अवसर उपलब्ध हुआ है। लेखक बताते हैं कि अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़े वर्गों के मानवाधिकारों का संरक्षण भारत में 20वीं शताब्दी की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इसके साथ ही,

भारतीय संविधान में प्रदत्त नागरिकों के मूल अधिकारों व उनके कर्त्तव्यों की भी चर्चा की है।

कपूर (2004) ने अपनी पुस्तक में विभिन्न प्रकार के मानवाधिकारों से अवगत कराते हुए कहा कि भारतीय संविधान ने जिस समानता का लक्ष्य रखा गया है, वह अन्य देशों में समानता के सिद्धान्तों से भिन्न है। समानता से भारतीय संविधान का तात्पर्य केवल शाब्दिक या विधिक समानता नहीं है। भारतीय संविधान ने जिस समानता का लक्ष्य रखा है उसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की राजनीतिक,सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक समानता की प्रत्याशा है। यह तभी संभव है, जब समाज के सभी वर्ग राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक दृष्टि से समान हो। इस लक्ष्य को साकार करने के लिए समाज के पिछड़े एवं दुर्बल वर्ग के नागरिकों को समाज के अन्य वर्गों के, जितना संभव है, समान बनाना है।

गुप्त (2004) ने पाया कि मानवाधिकारों से सम्बन्धित कई कानून पारित होने के पश्चात् भी मानव अधिकारों का हनन समय–समय पर देखा जा रहा है। आतंकवाद, भ्रष्टाचार, एवं पुलिस द्वारा व्यक्ति के अधिकारों पर आघात किया जा रहा है। ऐसा कोई दिन व्यतीत नहीं होता जब देश में पुलिस द्वारा मानवाधिकार हनन् की घटनाएं, पुलिस हिरासत में मृत्यु, बलात्कार, नकली मुठभेड़, मारपीट व भ्रष्टाचार की वारदात नहीं होती है। अतः मानवाधिकार केवल अध्ययन या अध्यापन का विषय न होकर हमारी आवश्यकता बन गया है। मानवाधिकारों की रक्षा के लिए सरकार के साथ–साथ नागरिकों को अपने अधिकारों के लिए स्वयं आगे आना होगा।

कान्त (2004) ने अपनी पुस्तक में मानवाधिकार की अवधारणाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है। लेखक ने मानवाधिकारों का ऐतिहासिक विकास बताते हुए फ्रांस में क्रान्ति, अमेरिकी स्वतन्त्रता संग्राम, संयुक्त राष्ट्र संघ के गठन का उल्लेख किया है।मानवाधिकारों के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना व इसके प्रमुख अंगो पर प्रकाश डाला गया है। उनका मानना है कि संयुक्त राष्ट्र संगठन एक स्वतन्त्र संस्था नहीं वरन् यह विश्व के राज्यों द्वारा गठित संगठन है इसलिये, यह अपने सदस्यों हेतु, आर्थिक सहायता के लिए इन राज्यों पर निर्भर है।

पुस्तक में वैश्विक स्तर पर मानवाधिकारों की स्थिति, मानवाधिकारों की रक्षा के लिए विभिन्न देशों में किये गये प्रयासों, एवं कर्त्तव्यों सम्बन्धी प्रमुख अनुच्छेदों का भी उल्लेख किया गया है।पुस्तक के अन्तिम अध्यायों में गैर–सरकारी संगठनों, लोकतंत्र में मानवाधिकार, बालकों के अधिकार, बन्धुआ मजदूर कानून, शरणार्थियों के अधिकार, एड्स पीड़ितों के अधिकार आदि पर विस्तृत वर्णन किया गया है।

कार्तिकेयन (2005) ने अपने अध्ययन में तर्क देते हुए विभिन्न प्रकार के मुद्दे जैसे गरीबी, लिंगीय विषमता, बाल अधिकार आदि को सम्मिलित किया है।

उन्होंने मानव अधिकारों के रक्षक के रूप में पुलिस की भूमिका को महत्त्वपूर्ण बताया है। उन्होंने बताया कि आतंकवाद मानवाधिकार का गंभीर उल्लंघन है। एक अच्छी सामाजिक व्यवस्था के लिए बिना किसी अतिरिक्त गलती के निष्पक्ष न्याय कानून की भूमिका तथा संस्थागत दबाव द्वारा मानवअधिकारों की रक्षा आवश्यक है।

चौधरी (2005) ने अपने अध्ययन में वर्णन किया है कि, मानवाधिकार व गरीबी अन्तः सम्बन्धित हैं। किसी भी गरीब व्यक्ति को पैसे का लालच देने पर वह प्रत्येक उचित अथवा अनुचित कार्य करने को तैयार हो जाता है। किसी भी कार्य को करने से पहले उसके सही या गलत होने का फैसला नहीं करता। परिणामस्वरूप कभी–कभी उन कार्यों से किसी के अधिकार का हनन हो जाता है। हांलाकि केवल गरीबी ही मानव अधिकारों के उल्लंघन का स्पष्टीकरण नहीं है मानवाधिकारों के उल्लंघन के कुल भाग में दोनों ही परिस्थितियों का उतना ही योगदान है, जितना की प्रकृति में वैश्विक व स्थानीय का।

शास्त्री (2005) के अनुसार भारतीय परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकारों की कल्पना ऋग्वेद काल से ही प्रारम्भ है। भारतीय वेदों, उपनिषदों व पुराणों में भी मानवाधिकारों की अवधारणा को प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक में 18 लेखों का समावेश किया गया है जो, मानवाधिकारों सम्बन्धी विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित हैं। प्रारम्भ के तीन लेखों में प्राचीन समय में मानवाधिकारों की उत्पत्ति, प्राचीन भारत में मानवाधिकारों की स्थिति व उनका मूल्यांकन किया गया है। आगे के लेखों में भारतीय संग्राम के समय मानवाधिकारों की स्थिति का उल्लेख किया है। ब्रिटिश शासन के समय भारतीय नागरिक भारत में ही भेदभावपूर्ण स्थिति के शिकार थे, जहां उनका शोषण भी बहुत अधिक किया जाता था। भारतीयों को अधिकार ना के बराबर प्राप्त होते थे। पुस्तक में सम्मिलित अन्तिम चार लेख वैश्वीकरण, मानव तस्करी जिनमें बालिकाओं व महिलाओं की तस्करी, भारत में बच्चा गोद लेने सम्बन्धी अधिकार व कश्मीर में पलायन सम्बन्धी समस्याओं से सम्बन्धित हैं। ये सभी लेख मानवाधिकारों के विभिन्न क्षेत्रों एवं वर्गों की समस्याओं व समाधानों को प्रस्तुत करते हैं।

जोशी (2005) ने वर्तमान समय मे मानवाधिकारों की स्थिति को उजागर किया है। बीसवीं शताब्दी मानवाधिकारों के क्षेत्र में नवीनतम आयामों को प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। लेख में सार्वभौमिक घोषणा पत्र भारतीय संविधान व भारतीय राजनीति व राज्यों में मानवाधिकार के प्रति उभरती चेतना व स्थिति का अवलोकन किया गया है। लेखक के अनुसार आज कई ऐसी बातें हैं जो, मानवाधिकार के रूप में हैं, जो मानवाधिकारों के संरक्षण व प्रोत्साहन के लिए स्थितियों को अनुकूल बना रही हैं।

चतुर्वेदी एवं लोढ़ा (2005) ने अपनी पुस्तक में मानवाधिकार सम्बन्धी विभिन्न पहलुओं को उजागर किया है। सम्पूर्ण रचना को चार भागों में विभाजित

किया गया है। पुस्तक में मानवाधिकार के वैचारिक पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है जिसमें मानवाधिकार और राज्य के सरोकार, संविधान व मानवाधिकार तथा मानवाधिकारों की स्थिति व चेतना के परिदृश्य लेखों का समावेश किया गया है। मानवाधिकार एवं राज्य के सरोकार सम्बन्धी लेख में लेखक ने मानवाधिकारों को वर्तमान में राजनीतिक विमर्श का मुख्य केन्द्र माना है औरमानवाधिकारों सम्बन्धी सैद्धान्तिक व व्यवहारिक विवेचन किया गया है। पुस्तक में मानवाधिकारों की स्थिति व चेतना का अवलोकन करते हुए बताया गया है कि 20वीं शताब्दी मानवाधिकारों के क्षेत्र में सोच को नवीन आयाम प्रदान करने के लिए इतिहास में एक विशिष्ट स्थान रखती है।

नेमा और शर्मा (2006) ने मानवाधिकार का अर्थ, संकल्पना, उद्‌भव एवं विकास से लेकर राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय स्तर के समस्त पहलुओं का विवेचन किया है। भारत में अवस्थित राज्य मानवाधिकार आयोगों के अध्यक्षों, सदस्यों से लेकर समस्त पदाधिकारियों की जानकारी का विवेचन किया गया है। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर कार्यरत मानवाधिकार आयोगों एवं संस्थाओं का परिचय, कार्यक्षेत्र, रचनात्मक ढ़ांचा एवं इससे सम्बन्धित अन्य जानकारियां विस्तृत रूप से पुस्तक में समाहित की गई हैं। महिलाओं, बालकों, निःशक्तजनों, वृद्धजनों को प्राप्त मानवाधिकारों को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है।

तिवाड़ी (2009) ने अपनी पुस्तक में मानवाधिकारों को प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी लिंग, जाति, समुदाय या धर्म का हो, से सम्बन्धित बताया है। उनके अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ज्यादातर मानवाधिकारों को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा घोषित किया गया है। जबकि राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार मौलिक अधिकारों के रुप में प्रत्येक देश में संविधान द्वारा प्रदत्त हैं।

सिंह (2010) ने यह बताने का प्रयास किया है कि, वर्तमान में मानवाधिकारों कि स्थिति विभिन्न प्रयासों के पश्चात् भी अच्छी नहीं है। सभी के लिए सभी मानवाधिकार का अभियान और आंदोलन फिलहाल अनेक पड़ावों से सफलतापूर्वक गुजरते हुए भी अपनी मंजिल से काफी दूर है। यह पुस्तक मानवाधिकार के कई आयामों से साक्षात्कार करवाती है। इस पुस्तक में मानवाधिकार संरक्षण के इतिहास, अन्तर्राष्ट्रीय वचनबद्धताओं, निगरानी उपकरणों के अलावा उल्लंघन के विविध रूपों की चर्चा की गई है।

चन्द्रा (2010) ने मानवाधिकारों का भारतीय सन्दर्भ में विस्तृत रूप से उल्लेख किया है। इन्होंने स्पष्ट किया है कि मानव अधिकारों के विकास के लिये राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग तथा गैर–सरकारी संगठनों के बीच सहयोग आवश्यक है। आपने मानवाधिकारों के साथ मानवीय मूल्यों का भी उल्लेख किया है और मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु कार्यरत विभिन्न संस्थानों की जानकारी भी दी है।

सिंह (2010) ने अपनी पुस्तक को 11 अध्यायों मे विभाजित किया गया है। पुस्तक में प्रमुख रूप से दलित मानवाधिकारों का वर्णन तथाइनके अधिकारों की चर्चा करते हुए भारतीय संविधान में दलितों हेतु किये गये प्रयासों का विवेचन भी किया गया है। लेखक ने दलितों, अनुसूचित जातियों, जनजातियों हेतु संवैधानिक प्रावधानों को स्पष्ट किया है। पुस्तक में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के गठन कार्य व शक्तियों का विस्तृत वर्णन किया गया है। लेखक ने राष्ट्रीय महिला आयोग के गठन, अधिनियम, कार्य व शक्तियों पर प्रकाश डालते हुए दलित व महिला वर्ग के मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु आयोग द्वारा किए गए प्रयासों का आंकलन किया है।

गुप्त एवं शाह (2011) ने मानवाधिकार का सामान्य परिचय देते हुए मानवाधिकार के ऐतिहासिक परिवेश की जानकारी दी है। मानवाधिकार की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को बताते हुए मानवाधिकार की अवधारणा का भारतीय परिवेश में विकास को बताया है।लेखक का विचार है कि वास्तव में कानून के शब्दों को व्यवहार में आने तक कई कठिनाईयों से गुजरना पड़ता है। कानून के अन्तर्गत जो अधिकार प्राप्त होते हैं प्रायः मानव उन अधिकारों से वंचित रह जाता है। उनके अनुसार आज के समय में मानवाधिकारों के सम्बन्ध में समुचित जानकारी की सर्वाधिक आवश्यकता पुलिस वालो को ही है। लेखक ने पुलिस के दायित्वों का वर्णन किया है और इसके साथ ही पुलिस की कार्यशैली में परिवर्तन की आवश्यकता को बताया है। उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय कन्वेंन्शन द्वारा निर्धारित बाल अधिकारों की विवेचना भीकी है। लेखक ने इस पुस्तक में मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में मीडिया की भूमिका को महत्त्वपूर्ण बताते हुए स्पष्ट किया है कि वर्तमान युग में प्रकाशन तथा संचार माध्यम से आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक अधिकारों की समुचित अभिव्यक्ति द्वारा एक सकारात्मक भूमिका की अपेक्षा की जा सकती है।

राय (2012) ने अपनी पुस्तक में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के उदय एवं उसकी भूमिका की तलाश की है। उन्होंने मानव अधिकारों की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया तथा भारतीय संदर्भ में इस अवधारणा को समझाने का प्रयास किया। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के गठन, संरचना एवं स्थिति के समग्र विश्लेषण के साथ राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के कार्यो एवं आयोग द्वारा उठाये गये कदमों पर चर्चा की है। राय ने अपनी इस कृति में मानव अधिकारों से संबंधित अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों एवं आयोगों के प्रभावों का भी मूल्यांकन किया है। गैर सरकारी संगठनों के विषय पर भी पुस्तक में प्रकाश डाला गया है जो मानव अधिकारों के लिये संघर्षरत हैं। पुस्तक के अन्त में मानव अधिकार संबंधी आगामी संभावनाओं की भी तलाश की गई है।

सिन्हा (2013) इस पुस्तक में लेखक ने बताया है कि मानव अधिकार ऐसी अवस्था है जो मनुष्य की भावनाओं से जुड़ी हुई है तथा वर्तमान में प्रचलित है। आज यदि कोई देश अपनी सामाजिक सांस्कृतिक, नैतिक अथवा राजनीतिक

स्थिति को मजबूत करना चाहता है तो उसके लिये आवश्यक है कि उस देश का प्रत्येक नागरिक समानता के अधिकार को जानता हो, उसे सही मायने में समझता हो तथा स्वयं के साथ ही दूसरों के अधिकारों की रक्षा करने में सक्षम हो। इनके अनुसान मानव अधिकारों के क्षेत्र में क्रान्ति तभी आ सकती है, जब मानव जाति में जागरूकता तथा क्रान्ति आयेगी। पुस्तक में स्पष्ट किया गया है कि मानव अधिकार वे अधिकार हैं जो मनुष्य को आश्वस्त करते हैं कि किसी भी विपरित परिस्थिति में ये अधिकार उन्हें उनका हक दिलवायेंगे क्योंकि ये अधिकार इन्हें किसी राज्य से प्राप्त नहीं हो रहे हैं अपितु उनके जन्मजात अधिकार हैं।

जनजाति समाज पर मानवाधिकार से सम्बन्धित उपलब्ध साहित्य की समीक्षा

शाह (1969) ने जनजाति आर्थिक व्यवस्था का अध्ययन किया है, जो All India Rural Development & Investment Survey the RBI (1961-62) पर आधारित है यह अध्ययन गुजरात सरकार द्वारा करवाया गया था। शाह ने 28 गांवों से 1120 ग्रामीण गृहवासियों को चुना तथा उनका अध्ययन किया। शाह ने जनजातियों के व्यवसाय की ओर इंगित करते हुए कहा है कि, इनके व्यवसायों में बहुत कम विभिन्नता पाई जाती है। इनका मुख्य व्यवसाय वर्तमान में कृषि रहा है। जनजातियां बहुत कम खर्च करके कृषि को आधुनिक बना रही है। बहुत कम रासायनिक उर्वरकों का उपयोग भूमि की उत्पादकता को बढ़ा रहा है। ये लोग इनकी जरूरतों के लिए इन्हीं परम्परागत संस्थाओं पर निर्भर करते हैं और स्वाभाविक है कि यह सब इनके जीवन–यापन हेतु काम में ली जाने वाली आर्थिकी की विशेषताएं हैं।

दोषी (1971) ने जनजाति समाज में चेतना एवं उनके सांस्कृतिक परिवर्तन के बारे में गहन अध्ययन करते हुए कहा है कि क्षेत्रीय समाज के सन्दर्भ में भील लोगों में जागरूकता कम है, लेकिन सांस्कृतिक एकीकरण की प्रक्रिया से उनकी मनोवृत्ति में निरन्तर परिवर्तन हो रहे हैं। **दोषी (1978)** ने भीलों का वैयक्तिक अध्ययन किया और कहा कि वास्तव मेंभीलों की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। उनके अनुसार ये लोग लोकतन्त्र को लेकर जागरूक हुए हैं।लोकतांत्रिक संस्थाओं और मूल्यों के स्तर से उनका परिचय हुआ है।

शर्मा (1980) ने भारत में प्राचीन समय में जनजातियों की स्थिति की बात की है। इस समय में जनजातियों का सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य बहुत साफ था। यह वह समय था जब आर्य और इसके बाद उच्च जातीय हिन्दुओं ने जनजातियों के विरूद्ध सभी प्रकार के षड़यंत्र किये थे। जनजातियों का यह अध्ययन इस कल्पना पर निर्भर है कि उत्पादन की सम्मिलित प्रणाली वर्ग निर्माण हेतु आवश्यक है और इस वर्ग़ द्वारा निरन्तर अच्छे कार्य करके अनगिनत देशों का सामना किया जा सकता है।

ऑगस्टाइन (1984) का सम्पूर्ण सन्दर्भ भील जनजाति के विरूद्ध मानवाधिकार के उल्लंघन को सामने लाना है क्योंकि, वालिया तालुका के भील पिछली कुछ शताब्दियों से अपनी जनजाति की पहचान खो चुके हैं। **गुप्ता (1990)** ने यह बताया है कि तीव्र औद्योगीकरण की प्रक्रिया ने आज़ादी के बाद से जनजातियों के लिये समस्याएं बढ़ा दी। लेखिका ने स्पष्ट किया है कि बढ़ते औद्योगीकरण के कारण जनजातियों की समस्याएं दुगुनी सी हो गईं। देश मे उस समय प्राकृतिक संसाधन वाले क्षेत्रों परजनजातियों का अधिकार था परन्तु उद्योगों के बढ़ते प्रभाव ने जनजातियों से ये प्राकृतिक संसाधन भी छीन लिए और परिणामस्वरूप प्राकृतिक संसाधन आधारित उद्योगों की स्थापना ने जनजातियों को विस्थापित कर दिया।

राठौड़ (1994) ने अपनी पुस्तक में बताया है कि, भारतीय जनजातियों में शिक्षा का स्तर काफी दयनीय है। जिसके कारण इनका सामाजिक स्तर भी काफी निम्न है और इसी के कारण देश की अधिकांश जनजातियां कष्टमय जीवन व्यतीत कर रही हैं और देश की मुख्य धारा से कटी हैं।पुस्तक में लेखक ने विशेषतः भील जनजाति पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि यह जनजाति जनसंख्या की दृष्टि से राज्य की दूसरी बड़ी जनजाति है। यह जनजाति शैक्षणिक दृष्टि से काफी पिछड़ी हुई है। इस कारण विकास की दौड़ में अपने को सम्मिलित नहीं कर पाई है। शिक्षा के अभाव में यह जनजाति विकास तथा आधुनिकता का विरोध करती है और परम्परावादी जीवन जी रही है।

लेखक ने शिक्षा–प्रसार और आधुनिकता जैसे विषय के माध्यम से इनकी शैक्षणिक समस्याओं को उजागर करने का प्रयास किया है क्योंकि इनका मानना है कि राजस्थान की भील जनजाति से सम्बन्धित शिक्षा–प्रसार जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर अनुसन्धान कार्य काफी कम मात्रा में हुए हैं।

जोशी एवं भगोरा (2000) ने उदयपुर जिले की जनजातियों का तथा यहां के भौगोलिक–सांस्कृतिक पर्यावरण के पारस्परिक सम्बन्धों का वैज्ञानिक विश्लेषण किया है। **उप्रेति (2000)** ने इस अध्ययन में जनजाति समाजों की संरचना एवं विकास के विभिन्न पहलुओं का विशद् वर्णन किया गया है। जनजाति सामाजिक संरचना में घटित परिवर्तनों की समीक्षा के अतिरिक्त, जनजाति समाजों में व्याप्त सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक आन्दोलनों, कतिपय जनजातियों का नृजातीय वर्णन, खानाबदोशी एवं लुप्तप्रायः जनजातियां, जनजाति नारी बदलते परिवेश में तथा जनजातीय विकास कार्यक्रम आदि का इस रचना के विभिन्न अध्यायों में उल्लेख किया गया है।

मेहता (2000) ने प्रस्तुत अध्ययन में स्पष्ट किया है कि जनजाति विकास जो 20वीं शताब्दी के दौरान हुआ वह पर्याप्त नहीं था। उनके अनुसार इस समाज की आधारभूत जरूरतों को पूरा करने में भी सरकार नाकाम रही। प्रथम आधी

शताब्दी में ब्रिटिश सरकार की व्यवस्था और स्थानीय नियम दोनों ही उनकी जरूरतों और कल्याण का बोझ नहीं उठा पाए। इसी वजह से ये आधी शताब्दी के दौरान शोषक वर्ग द्वारा शोषित हुए।

बक्शी एवं बाला (2000) ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया गया है कि हमारे उपमहाद्वीप में बहुत से कारणों से कई अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को पनपने से रोका गया। जबकि, उनकी जीवन–शैली, प्रथाएं और परम्पराएं हमारे ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र से पूर्णतः भिन्न है। यहां तक कि वे अपनी दुनिया में ही जीते हैं। उनका सामाजिक पिछड़ापन उनके विन्यास के स्तर को निर्धारित करता है। उनको स्वास्थ्य सुविधाएं और नौकरियां दिलाना उनकी प्रतिदिन की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु आवश्यक है, जो उनके बच्चों की शिक्षा को प्रेरित करता है।

यादव (2002) ने अपने अध्ययन के निष्कर्ष में स्पष्ट किया कि अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम के अर्न्तगत 1998 से 2002 तक अत्याचारों की संख्या में वृद्धि हुई है। स्पष्टतः यह कानून इस समाज पर होने वाले अत्याचारों पर नियंत्रण नहीं रख पाया है। **मल्होत्रा (2005)** ने अपने अध्ययन में इस बात पर ज़ोर दिया है कि देश के संवैधानिक रक्षकों के शत्रु हर रोज विभिन्न तरीकों से विभिन्न स्थानों पर मानवाधिकारों का उल्लंघन करते हैं। इन उल्लंघनों में नागरिकों के अधिकारों व राजनीतिक अधिकारों का उल्लंघन, अल्पसंख्यकों में भेदभाव, महिलाओं और कमज़ोर वर्गों जैसे अनुसूचित जातियेां व जनजातियों का शोषण, निरंकुशता, हिरासत में मौतें, शक की बुनियाद पर पुलिस हिरासत में अपराधी की मौत, कन्या शिशु हत्या, बाल मजदूरी, प्रजातीय हत्याएं, और फिरोती के लिये अपहरण सम्मिलित हैं।

दीक्षित (2006) ने अपनी पुस्तक में अनुसूचित जनजाति एवं जातियों के मानवाधिकार के मुद्दे पर विचार करते हुए स्पष्ट किया है कि मानवाधिकारों को केवल सैद्धान्तिक रूप में लागू करने से इस समाज का संघर्ष समाप्त नहीं होगा अपितु इन अधिकारों को व्यवहारिक रूप से लागू करना होगा क्योंकि यह संयुक्त राष्ट्र संघ की मर्यादा का सवाल है। **चौहान (2006)** ने कहा है कि राजस्थान के जनजाति समाज में शिक्षा की अवहेलना एक गम्भीर विषय है। आज़ादी के इतने वर्षों बाद भी जनजाति शिक्षा का स्तर अत्यन्त दयनीय है। लेखक ने इस पुस्तक में जनजाति शिक्षा के इतिहास को प्रस्तुत करते हुए वर्तमान में देखने का प्रयास किया है। इसके साथ ही जनजाति शिक्षा की उन्नति हेतु सुझावों को प्रस्तुत किया है। जनजाति विकास हेतु विभिन्न योजनाओं को प्रस्तुत किया है। लेखक ने स्पष्ट किया है कि जनजाति के लोग आर्थिक क्षेत्र में पराश्रित, शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़े हुए तथा सामाजिक दृष्टि से वे सर्वाधिक कष्ट भोगी, अलगाव व अस्पृश्यता के शिकार रहे हैं। जहां तक जनजातियों का सम्बन्ध है उनकी सबसे बड़ी कठिनाई उनका अलगाव है। जिसके फलस्वरुप उनमें शिक्षा की भी कमी है।

मिश्रा (2008) ने मानव अधिकारों की विभिन्न अवधारणाओं को स्पष्ट करते हुए संवैधानिक रुप में मानवाधिकारों के क्रियान्वयन की जानकारी प्रदान की है। आपने मानवाधिकार व महिलाएं, बालक, अनुसूचित जातियां, अनुसूचित जनजातियां, मानव अधिकार और प्रेस, शिक्षा तथा पर्यावरण संरक्षण एवं उपभोक्ताओं के अधिकार का वर्णन किया है, साथ ही भारत के विभिन्न राज्यों में मानवाधिकारों की स्थिति को दर्शाया है।

श्रीवास्तव (2010) ने अपने अध्ययन में बताया है कि वर्तमान में जनजाति समाज परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। इनमें कुछ बातों को लेकर जागरूकता आयी हैं। ये लोग पैसे की महत्त्वता व उसकी शक्ति को जानने व पहचानने लगे हैं। अब ये लोग समझने लग गये हैं कि किस तरह इनके संसाधनों (जंगल, जमीनें) पर से इनका नियन्त्रण व अधिकार छीना जा रहा है, जबकि ये संसाधन इन्हें प्रकृति द्वारा बिना किसी मूल्य के दिये गये हैं और इन पर सबसे पहला अधिकार इनका है। ये समझ गये हैं कि ये अपनी एकता व नेतृत्व क्षमता से ही इस असमानता व बिगड़ी हुई व्यवस्था से लड़ सकते हैं।

आचार्य (2010) ने अपनी पुस्तक में मानवाधिकारों की कसौटी को ही सामने ही रखा है उदाहरण के लिए अल्पसंख्यक समूहों, अतिपिछड़ों–दलितों, अस्मिता की लड़ाई लड़ते जनजाति समूहों, मुक्त बाजार और पर्यावरण–विनाशक, विकास के उत्पिड़ितों एवं विस्थापितों, अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते श्रमिक वर्गो तथा राजगार के लिए तरसते युवाओं की समस्याओं को मानवाधिकारों के परिप्रेक्ष्य में देखने समझने की कोशिश कि गई है। **मीना (2012)** ने अपनी पुस्तक में स्पष्ट किया है कि वैश्विक चुनौतियों के निदान में मानवाधिकार एवं मानव विकास की भूमिका एवं जनजातियों के मानवाधिकार एवं मानव विकास की स्थिति, चुनौतियों एवं आवश्यक सुझावों पर दृष्टिपात करने का प्रयास किया गया है और कहा है कि यदि समाज को विकसीत करना है तो केवल किसी समूह विषेश के मानव का विकास काफी नहीं है। अपितु प्रत्येक समूह यथा पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति, जनजाति आदि प्रत्येक समूह के मानव का विकास आवश्यक है और यह एक वैश्विक की चुनौती है।

नायडु (2013) बताते हैं कि भारत के जनजातियों के विकास के लीये सरकार हमेंशा से प्रयासरत है, परन्तु कुछ समस्याऐं हैं जो इन प्रयासों को खारिज करती जा रही हैं। आपके अनुसाार इनकी अधिकांश समस्याऐं शोषण से सम्बन्धित हैं। इनकी कुछ समस्याऐं आर्थिक व राजनीतिक भी हैं। गैर–जनजाति समाज से सम्पर्क के कारण भी कुछ समस्याएं उत्पन्न हुई हैं जैसे कर्ज, भूमि हस्तान्तरण, जमीदारी एवं सरकारी अधिकारियों द्वारा शोषण आदि। लेखक जनजातियों की समस्याओं को हल करने के लिये पुनारूत्थान का सुझाव देते है।

महिलाओं तथा बच्चों के अधिकारों से सम्बन्धित उपलब्ध साहित्य की समीक्षा

अंसारी (2000) ने महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि, जिस देश की अधिकांश जनसंख्या महिलाओं की है। वहां उन पर होने वाले अत्याचारों में दिन–प्रतिदिन वृद्धि बड़ी शर्मनाक बात है। महिला आयोग की स्थापना तथा महिला अधिकारों की घोषणा के पश्चात् भी बलात्कार, यौन, शोषण, कामकाजी महिलाओं के साथ उनके कार्य क्षेत्र में अपमान, दहेज हत्याएं, छेड़छाड़ जैसी घटनाएं घटित होती हैं। एक स्त्री, स्त्री से पहले मानव है और यदि मानव पर अत्याचार या उसके किसी अधिकार का हनन् होता है, तो यह मानव अधिकारों का हनन् है।

तलेसरा एवं पंचोली (2003) ने प्रारम्भ में मानवाधिकारों की अवधारणा, परिप्रेक्ष्य एवं ऐतिहासिक विकास पर प्रकाश ड़ाला है। मानवाधिकारों का इतिहास अत्यन्त प्राचीन रहा है, जिसका विकास मनुष्य के जन्म के साथ ही प्रारम्भ हो गया। मानवाधिकारों सम्बन्धी प्रमुख लिखित स्त्रोत 1215 मैग्नाकार्टा है, जिसे ब्रिटिश संविधान की आत्मा कहा जाता है और इसी के साथ विश्व में मानवाधिकारों की मांग में भी वृद्धि हुई। पुस्तक में लेखिकाओं ने शिक्षा के अधिकार पर प्रमुख रूप से चर्चा की है। पुस्तक में विभिन्न वर्गों जैसे दलितों, महिलाओं, बालकों एवं पिछड़े वर्गों आदि के मानवाधिकार एवं शिक्षा सम्बन्धी प्रावधानों का विश्लेषण करते हुए बताया है कि इन सभी कमज़ोर वर्गो के उत्थान हेतु कई कल्याणकारी योजनाओं का प्रारम्भ किया गया है जो इन्हें तथा इनकी आने वाली नई पीढ़ी को विकास के साथ जोड़ेगी। मानवाधिकारों की रक्षा एवं अधिकारों के हनन् को रोकने सम्बन्धी सरकारी प्रयासों का भी उल्लेख किया गया है।

श्रीवास्तव एवं श्रीवास्तव (2004) ने पुस्तक के प्रारम्भ में भारतीय वैदिक संस्कृति में महिलाओं की स्थिति को उजागर किया है। लेखक ने बताया है कि, समय के साथ–साथ महिलाओं की स्थिति में बदलाव आया है। जहां महिलाओं के प्रति अत्याचार शोषण में वृद्धि हुई है, वहीं महिलाओं के अधिकारों को अलग से लागू करवाने की मांग में भी इजाफा हुआ है। विभिन्न अध्यायों में महिलाओं के प्रति हिंसा व उत्पीड़न, महिला अधिकार, संविधान में महिलाओं की समानता व महिलाओं के प्रति कानूनी संरक्षण आदि बिन्दुओं पर प्रकाश ड़ाला गया है। लेखिकाओं ने महिला शोषण को समाप्त करने एवं महिलाओं की सुरक्षा, उनके अधिकारों की प्राप्ति सम्बन्धी सुझाव देते हुए कहा है कि महिलाओं को अपने हक व अधिकारों के लिये स्वयं आगे आना होगा, महिलाओं की सुरक्षा हेतु बनाए गए कानूनों को कठोरता से अमल में लाना होगा साथ ही महिलाओं को इन कानूनों व अधिकारों के प्रति अधिक से अधिक जागरूक करने के प्रयास करने होंगे तभी महिलाएं कुछ हद तक स्वयं को सुरक्षित महसूस करेंगी।

वीर (2004) ने अपने अध्ययन में व्यक्त किया है कि, अपराधियों और असामाजिक तत्वों के लिए सदैव महिलाएं निशाना बनती हैं क्योंकि, वे कमज़ोर होती हैं। महिलाओं के खिलाफ अत्याचारों में जानबूझकर परेशान करना, लिंगीय सम्बन्धों में ज़बरदस्ती, बेगार, उत्पीड़न, मानसिक व शारीरिक सभी प्रकार की

यातनाएं सम्मिलित हैं। दूसरे शब्दों में, महिलाएं सभी प्रकार की यातनाओं व हिंसा की शिकार हैं।

बार्न्स (2005) ने अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के मानदण्डों को प्रस्तुत किया है। पुस्तक में बाल श्रम व मानव अधिकारों को लागू करवाने संबंधी उपायों पर भी प्रकाश डाला है तथा इस क्षेत्र में जो प्रभावशाली बदलाव लाए जा सकते हैं, उसका विवेचन करते हुए कहा है कि यह एक नैतिक विषय है। बाल श्रम को रोकने के लिये नीतिगत शिक्षा आवश्यक है और यह शिक्षा बचपन से दी जानी चाहिए ताकि बच्चे बड़े होने पर जिम्मेदार नागरिक बनें और देश के भविष्य को सहेजने व संवारने में सरकार का सहयोग करें। अधिक से अधिक बच्चों को शिक्षा से जोड़कर उन्हें अपने अधिकारों के लिये जागरूक किया जा सकता है।

मंगल (2005) ने अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर बालकों के मानवाधिकार सम्बन्धी चर्चा का विश्लेषण किया है। लेखक के अनुसार वर्तमान समय में मानवाधिकार का प्रश्न हर आयु वर्ग के साथ जुड़ गया है। बच्चों के अधिकारों पर हुए संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न सम्मेलनों में भी बच्चों के अधिकारों पर व्यापक चर्चा हुई है। इन सम्मेलनों में बालक उस व्यक्ति को माना गया है, जिसकी आयु 18 वर्ष से कम है, इसी आयु के लोगों को बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा भी मिलेगी और उनके आर्थिक शोषण, शिक्षा, स्वास्थ्य, शारीरिक–आध्यात्मिक, सामाजिक तथा नैतिक सुरक्षा के प्रश्नों से निजात मिलेगी। लेखक ने अन्त में स्पष्ट किया है कि मानवाधिकारों का प्रश्न आज भारत में उभरता हुआ विषय है। उनके अनुसार इन प्रश्नों को सुलझाने हेतु राजनीतिक इच्छा शक्ति का प्रबल होना सबसे आवश्यक है।

नाजुन्दा (2008) ने अपनी पुस्तक में बताया है कि बालश्रम बालकों पर किए गए सबसे खराब अत्याचार की स्थिति है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रमसंगठन के अनुसार आज भी 250 करोड़ बालक बाल मजदूर के रूप में कार्यरत हैं। बाल मजदूर का एक प्रकार बंधुआ मजदूरों के रूप में भी कार्यरत हैं, जिसे लेखक ने मानवाधिकारों पर गाली की संज्ञा दी है। **जोशी (2009)** ने मानवाधिकारों की अवधारणा, प्रकृति एवं विशेषताओं का विस्तृत विवेचन किया है। लेखक ने मानवाधिकार एवं कर्त्तव्य सम्बन्धी मौलिक तत्वों को प्रस्तुत करते हुए कहा है कि समाज में व्यक्तित्व विकास के लिए कतिपय अधिकारों की आवश्यकता होती है। जिसके अभाव में उसके व्यक्तित्व का विकास समाज में असंभव है। लेखक ने मानवाधिकारों की पांच विशेषताएं बताई हैं–सार्वभौमिकता, व्यक्तिगतता, सर्वोच्चता, व्यवहारिकता एवं क्रियान्वयन योग्य। मानवाधिकार व कर्त्तव्य से सहसंबंध बताते हुए लेखक ने मानववाद को स्पष्ट किया है।पुस्तक मे लेखक ने महिलाओं के अधिकारों के हनन् के विभिन्न कारक जैसे महिलाओं के खिलाफ हिंसात्मक अपराध, यौन उत्पीड़न व बलात्कार, भ्रूण हत्या, दहेज उत्पीड़न, महिलाओं के साथ काम के स्थल पर भेद भाव आदि बताए हैं।पुस्तक में आगे लेखक ने महिलाओं के विशेष प्रावधान व महिला अधिकारों के प्रति अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं को भी स्पष्ट किया गया है।

नाटाणी (2009) ने कहा है कि भारत का संविधान बालिकाओं और महिलाओं के कल्याण और विकास को अधिकतम महत्व प्रदान करता है। संविधान उन्हें न केवल समानता का अधिकार देता है, अपितु लिंग और धर्म आदि के भेदभाव को दूर कर उनको शोषण से बचने और सुरक्षित जीवन यापन के कई महत्वपूर्ण सुरक्षा कवच भी प्रदान करता है। नाटाणी ने इस पुस्तक में बालिकाओं और महिलाओंके विकास एवं उत्थान के निम्न महत्वपूर्ण अधिकारों एवं कानूनों की जानकारी दी है–जैसे भारतीय समाज और महिलाएं, महिलाओं के संवैधानिक अधिकार, कामकाजी महिलाओं के अधिकार, घोर अपराधों से जुड़े महिलाओं के अधिकार, पुलिस से संबंधित महिलाओं के अधिकार, राष्ट्रीय एवं राज्य महिला आयोग – महिलाओं के राजनीतिक अधिकार एवं आरक्षण, हिन्दू विवाह अधिनियम और महिलाओं के अधिकार, वर्तमान जीवनशैली एवं महिला, भारत में बालिका एवं महिला अधिकारों का वर्तमान परिप्रेक्ष्य, महिलाओं के अधिकार एवं उन पर अत्याचार व दायित्व एवं विश्व में महिला अधिकारों की विकास यात्रा जैसी इन विभिन्न व्यवस्थाओं के द्वारा निश्चित रूप से हमारे देश में बालिकाओं और महिलाओं के विकास के विभिन्न क्षेत्रों में नवीनतम आयाम स्थगित हुए हैं।

सैनी (2009) ने अपने अध्ययन में यह बताया है कि महिलाओं के मानव अधिकार उन्हें आगे बढ़ने को प्रेरित करते हैं। इन्होंने मानवाधिकारों का अवधारणात्मक विश्लेषण करते हुए महिलाओं के विधिक अधिकारों की व्याख्या की है। साथ ही महिला मानवाधिकार के संरक्षण हेतु हर संभव प्रयास व योजनाओं का उल्लेख किया है। **गौरा (2010)** ने अपने अध्ययन में महिलाओं के मौलिक अधिकारों का विश्लेषण किया है। इस रचना में भारतीय नारियों की प्राचीन व वर्तमान स्थिति का सिंहवालोकन कराते हुए उनके आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक अधिकारों का दिग्दर्शन कराया गया है। गौरा के अनुसार कर्त्तव्य और अधिकार दोनां एक सिक्के के दो पहलू हैं। कर्त्तव्यों की उपेक्षा कर अधिकारों की रक्षा नहीं हो सकती। अतः महिलाओं को अपने अधिकारों के साथ कर्त्तव्यों का ज्ञान समझते हुए आत्मविश्वास एवं आत्मबल को और सशक्त करते हुए, जीवन को समृद्ध एवं सुखी बनाने का प्रयास करना चाहिए।

सिंह (2011) अपनी पुस्तक में मानवाधिकार विश्लेषण, मानवाधिकार विश्व परिदृश्य, भारत में मानवाधिकार और मानवाधिकार आयोग, मानवाधिकारों की सार्वभौमीक घोषणा, भारत में मानवाधिकार एवं महिलाएं आदि बिन्दुओं का विस्तृत विवेचन किया गया है। पुस्तक मानवाधिकारों के क्षेत्र में कार्यरत शोधार्थियों, पाठकों, मानवाधिकार विशेषज्ञों के लिये सम्पूर्ण ग्रन्थ है। **कुमावत एवं मीणा (2012)** ने पुस्तक के प्रारम्भ में युवाओं का अवधारणात्मक विवेचन किया है और युवावस्था की व्याख्या जैविकीय सन्दर्भ में की है। लेखक के अनुसार वर्तमान डिजिटल युग जब शुरू हुआ, तो बहुतों ने यह आस बांधी थी कि इन्टरनेट, ई–मेल, ब्लॉग्ज, आदि के कारण एक नई, अधिक जागरूक और बौद्धिक रूप से परिष्कृत पीढ़ी तैयार होगी, और इस नई तकनीक के इस्तेमाल में दक्ष युवा अपने से पिछली पीढ़ी से बेहतर होंगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआा। ताजा रिपोर्ट्स बताती हैं कि अमेरिका की

नई पीढ़ी के ज्यादातर लोग न तो साहित्य पढ़ते हैं, न म्यूजियम्स में जाते हैं, और न वोट देते हैं। इन्ही सारे कारणों से मार्क बॉयेलाईन ने उन युवाओं को जो अभी हाई स्कूल में है 'द डम्बेस्ट जेनरेशन' का नाम दिया है। इसके साथ ही आज का युवा कठिनाईयों से दूर भाग रहा है। क्योंकि कठिनाई को समाप्त करने या उनसे संघर्ष करने में वह अपना समय नहीं गंवाना चाहता। उसे अपने लिए कुछ करना है, मात्र अपने लिए।

जैन (2013) ने अपनी पुस्तक में महिलाओं के मानवाधिकारों का विशेष जोर देते हुए कहा है कि बीसवीं शताब्दी से पहले तक मानवाधिकारों का मत सिर्फ पुरूषों तक ही सीमित था तथा आज भी महिलाओं के उनके समाज में बराबरी की हिस्सेदारी नहीं मिली है, अभी भी इन्हें दोयम दर्जे का समझा जाता है। यही माना जाता है कि महिलाओं को कोई अधिकार नहीं है। इन अधिकारों को कुचलने के लिये कई फलवों का सहारा लिया जाता है। इन्हें चरित्रहीन, डायन, बदचलन आदि साबित करके उन पर अत्याचार किये जाते हैं। पुस्तक में लेखिका ने यह भी बताने का प्रयास किया है कि मानव अधिकार हनन की घटनाओं को कम कैसे किया जाय। वे कहती हैं कि वैश्वीकरण, संस्कृति, मीड़िया, इंटरनेट आदि को सहारा बनाकर यह कार्य किया जा सकता है। लेखिका के अनुसार मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाने में फिल्में भी अच्छा साधन बन सकती है।

तनेजा (2013) ने अपनी पुस्तक में लेखिका ने बाल अधिकारों के हनन पर ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया है। आप कहती है कि आज के फूल कल के नागरिक कुछ अधिकार भी रखते हैं। परन्तु किन्हीं कारणों से ये अपने मूल अधिकारों से वंचित है। बात उम्र सीखने की होती है किन्तु चिंता का विषय है कि इसी उम्र में बच्चे तरह– तरह के शोषण का शिकार होते हैं। बच्चे अपनी लड़ाई स्वयं नहीं लड़ सकते है विश्व के सभी देशों की सरकारों ने बच्चों के लिए विशेष कानून बनाये है परन्तु कोई उल्लेखनीय परिणाम प्राप्त नहीं हुए है। अतः इनके अनुसार मानवाधिकारों की सुरक्षा की लड़ाई केवल कानून के हथियारों से नहीं लड़ी जा सकती बल्कि इसके लिये समाज की जागृति जन–सहयोग की अत्यन्त आवश्यकता है।

लेखिका ने पुस्तक के माध्यम से संदेश दिया है कि केवल नितियां बना लेने अथवा अपार धनराशि खर्च करने से समस्याओं पर काबु नहीं पाया जा सकता बल्कि शिक्षा, जन चेतना, समाजशास्त्रियों, पंचायतों, शिक्षाविदों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, पत्रकारों, गैर–सरकारी संस्थाओं आदि सभी के सहयोग से ही बाल शोषण सम्बन्धी समस्याओं से मुक्ति पायी जा सकती है और बच्चों के अधिकारों की रक्षा की जा सकती है।

आनन्द (2015) ने इस पुस्तक में यह बताने का प्रयास किया है कि मीड़िया मानवाधिकारों का प्रतिरक्षक रहा है। क्योंकि इन्ही के द्वारा जनता में जागरूकता,

मानवाधिकार, सम्बन्धीं अनेक विषयों पर परिचर्चा व रक्षात्मक कदम, महिलाओं पर अत्याचार, वैश्यावृति, बाल व बंधुआ मजदूरी, बलात्कार, पारिवारिक हिंसा आदि अनेक विषयों पर जागरूकता लाने का प्रयास व जनसाधारण को मानवाधिकार सम्बन्धी शिक्षा देने का कार्य किया गया है।प्रेस की एकता व भारतीयता के प्रति वचनबद्धता, मानवाधिकार की रक्षा आज के समय की मांग है। तथा इसी प्रकार के प्रयास मीड़िया के सभी अंगो द्वारा जरूरी, वांछित व अपेक्षित है।

अनुसंधान अन्तराल

प्रस्तुत अनुसंधान के पद्धतीय रूपरेखा की चर्चा करने से पूर्व दो सन्दर्भों की चर्चा आवश्यक है। पहला तो यह कि अध्ययन के जनजाति परिवेश क्या हैं ? और दूसरा राजस्थान में इन सन्दर्भों को कैसे देखा जा सकता है ?

यह कहना आवश्यक है कि मानवशास्त्रीय दृष्टि से जनजातियों को कई आधारों पर प्रस्तुत किया गया है। सांस्कृतिक दृष्टि से ये भारत की आदिम संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती हैं। सामाजिक व्यवस्था की दृष्टि से वे आज की सामाजिक स्वीकृत के विपरीत हैं। एक बड़ा प्रश्न जो वेरियर एल्विन ने उठाया था कि क्या हम उन्हें चिड़ियाघर में रखना चाहते हैं ? (एल्विन, 1952)। निश्चित ही यह कथन जनजातियों के शेष समाज से अलगाव का प्रतीक था। बहुत से समूहों को हम हाशिये पर नहीं डाल सकते। भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का मानना था कि हमें ऐसे समूहों को मुख्यधारा में लाना ही पड़ेगा। ऐसा ही कुछ मन्तव्य घुर्ये (1959) का था, जिनके अनुसार जनजातियों का शेष हिन्दू समाज के साथ समन्वय आवश्यक है।

यदि मानव अधिकारों के प्रश्नों को देखें तो उनका संबंध ऐसी सामाजिक व्यवस्थाओं से है जो स्वतन्त्रता के साथ जुड़ी हुई नहीं है। भारतीय जनजाति व्यवस्था के संदर्भ इन्हीं प्रकार की व्यवस्थाओं से जुड़े है जो सम्पूर्णसंदर्भ में जनजाति समाजों को मानव अधिकारों के घेरे में ले आती है।

इस अनुसंधान के अध्ययन क्षेत्र (दक्षिणी राजस्थान) के जनजाति क्षेत्रों के विषय में भी यही कहा जा सकता है। दोषी (1992) के अनुसार राजस्थान के जनजाति क्षेत्र वे क्षेत्र है जो अशिक्षा, गरीबी और विकासहीन समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे राजस्थान की जनसंख्या का एक बड़ा प्रतिशत हैं। यदि शासकीय दृष्टिकोण को भी देखे तो यह एक घोषित और अघोषित पिछड़ा क्षेत्र है। सारे क्षेत्र में जो विशिष्ट जनजाति समूह निवास कर रहे हैं उनमें भील, मीणा, डामोर, गरासिया और सहरिया प्रमुख है। इनमें भी सामूहिक स्तरीकरण है और भीलों की अपेक्षा सहारिया, डामोर, गरासिया पिछड़े हुए माने जाते हैं। दक्षिण भारत के ये जनजाति समूह मध्यप्रदेश और गुजरात के साथ जुड़े हुए हैं जहां इसी प्रकार के जनजाति समूह निवास करते हैं। तीनों राज्यों के जनजाति समूह मिलकर पश्चिमी भारत का एक बहुत बड़ा जनजाति क्षेत्र है। ये जनजाति समूह

अपने शोषण, सीमांती स्थिति और वंचना के रूप में उन अधिकारों के प्रश्न उठाते हैं जिनका संबंध मानव अधिकारों से है। इस अनुसंधान की संरचना, दक्षिणी राजस्थान की इसी पृष्ठभूमि पर आधारित है। जनजाति संरचना के साथ–साथ अनुसंधान संरचना मानव अधिकारों के प्रश्न उनके साथ जोड़ती है।

जनजातियों की वर्तमान स्थिति में मानव अधिकारों के प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गए। जैसे–जैसे देश विकसित हुए हैंजनजाति क्षेत्रों में अपार वन तथा खनिज संपदा पर उनकी दृष्टि रही है। उपनिवेशवादियों ने भी जनजातियों की संपदा पर अधिकार कर उनका शोषण किया है। विकास के नाम पर बांध तथा सड़कें बना कर उनको उजाड़ा है। जनजातियों की अपनी संस्कृति रही है लेकिन उस संस्कृति को आगे बढ़ने का अवसर नहीं दिया गया है। प्रायः अस्तित्व की सुविधाएं न होने के कारण भी जनजाति सदस्य प्रभावित हुए हैं। ये सब वे समस्याएं हैं जो मानव अधिकार की परिधि में भी आती हैं। इसीलिए ऐसी समस्याओं के विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता है। लेकिन मानव अधिकार के इन्हीं संदर्भों के अन्तर्गत कई प्रश्न भी उठने स्वाभाविक हैं।यद्यपि कईं समाजशास्त्रियों एवं विद्वानों ने इस ज्वलन्त समस्या पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। मानवाधिकार क्या है यह बताते हुए मानवाधिकार के उद्‌भव से उसके विकास की यात्रा का वर्णन किया है। भारत में मानवाधिकार की स्थिति का वर्णन किया है। बालकों एवं महिलाओं के मानवाधिकारों से सम्बन्धित जानकारी भी दी है साथ ही मानव अधिकारों के संरक्षण की बात कही है।परन्तु दक्षिणी राजस्थान के जनजाति बहुल जनसंख्या वाले जिलों में इस सम्बन्ध में कोई विशेष अनुसंधान कार्य नहीं हुआ है। अतः इस विषय से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण अनुसंधान प्रश्न हमारे सामने हैं। जिन्हें निम्न रूपों में देखा जा सकता है–

1. इन जिलों के जनजाति समाज के लोग तथा विशेषकर युवा वर्ग, जो भविष्य की आधारशिला है, मूल अधिकारों अथवा मानव अधिकारों के बारे में कितना जानती है? यह प्रश्न इसलिये भी महत्त्वपूर्ण है कि जो गैर–सरकारी संगठन इन क्षेत्रों में कार्य करते हैं वे बहुत से प्रश्नों को मानवाधिकारों के संदर्भमें ही उठाते हैं क्योंकि अबयुवाओं में शिक्षा का प्रसार बढ़ा है, इस सम्बन्ध में जानकारी एक महत्त्वपूर्ण तथ्य बन जाता है।
2. वर्तमान में जनजाति समाज एवं उसके युवाओं में मानवाधिकारों की प्रासंगिकता कितनी हैं?यह माना जाता है कि मानवाधिकारों की सबसे बड़ीआवश्यकता जनजाति क्षेत्रों में है। शोषण का सबसे बड़ा स्वरूप भी वहीं है, अतः प्रासंगिकता का प्रश्न भी वहीं है।
3. संविधान में समानता का अधिकार मिलने के पश्चात् भी गैर–जनजाति समाज द्वारा इनका शोषण क्यों होता हैं और क्या इनको समानता के प्रसंग में देखा जा सकता है ?

4. मानवाधिकार व्यवस्था में जनजातियों को अपना सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन सुरक्षित रखने का अधिकार है। क्या कतिपय सांस्कृतिक व्यवस्थाओं का इस संदर्भ में मूल्यांकन किया जा सकता है?

5. जनजाति युवाओं के अनुसार स्त्री–पुरूष किनके प्रति अधिकारों का हनन्अधिक होता है? और स्त्री–पुरूषों में तुलनात्मक रूप से अपने अधिकारों के प्रति कौन अधिक जागरूक है? इस सम्बन्ध में जनजाति युवाओं के क्या विचार हैं ?

6. क्या मानव अधिकार आयोग, स्वयं सेवी संस्थाएं, जनसंचार के माध्यम आदि जनजातियों में अपने अधिकारों के प्रति चेतना जाग्रत कर पा रहे हैं ?

7. निःशुल्क शिक्षा का अधिकार सभी को समान रूप से प्राप्त है। क्या जनजाति समाज इससे प्रभावित हुआ है ? जनजाति समाज और युवा इस शिक्षा के अधिकार के बारे में क्या विचार रखते हैं ?

8. दक्षिणी राजस्थान के जनजाति बहुल क्षेत्रों में व्याप्त भिन्न प्रथाएं जैसे नातरा प्रथा, डायन प्रथा, दागना आदि के बारे में नयी पीढ़ी क्या विचार रखती है ?

9. जनजातियों में बाल श्रमिकों की संख्या में दिन–प्रतिदिन वृद्धि अत्यन्त विचारणीय विषय है, यह जानना आवश्यक है कि सरकारी प्रयासों के बावजुद यह स्थिति क्यों है ?

10. सदियों से जनजाति समाज का जंगलों के साथ गहन सम्बन्ध रहा है। वर्तमान में जंगलों पर से अधिकार छिने जाने पर उनकी क्या प्रतिक्रिया और प्रयास हैं ?

इन सभी प्रश्नों पर प्रस्तुत अनुसन्धान में विशेष ध्यान दिया गया है।

अनुसंधान के उद्देश्य

यह अनुसंधान निम्न उद्देश्यों के आधार पर संरचित है–

1. जनजाति समाज के युवाओं से प्रमुख सामाजिक समस्याओं के बार में जानकारी प्राप्त करना।

2. यह ज्ञात करना कि जनजाति युवा मानवाधिकार के बारे में क्या जानकारी रखते हैं?

3. यह ज्ञात करना कि जनजाति सदस्यों व इस समाज के युवाओं के किन–किन मानवाधिकारों का हनन हो रहा है अथवा हुआ है ?

4. समानता, स्वतंत्रता, समान अवसर एवं शोषण के प्रति जनजाति युवाओं की चेतना एवं उनके प्रयासों की जानकारी प्राप्त करना।

5. जनजाति विकास में जनजाति युवाओं की सहभागिता का स्तर जांचना ताकि जाना जा सके कि इन्हें कितने अधिकार प्राप्त हैं।

6. जनजातियों में मानवाधिकार के संरक्षण के सम्बन्ध में स्वैच्छिक संगठनों, मानवाधिकार आयोग तथा जनसंचार साधनों की भूमिका की जानकारी प्राप्त करना।

7. जनजाति समाज में पायी जाने वाली विभिन्न प्रथाओं जैसे डायन, नातरा व दागना प्रथा के सम्बन्ध में जनजाति युवाओं के विचारों को जानना।

अध्ययन की प्राक्कल्पनाएं

प्रस्तुत अध्ययन में विषय से सम्बन्धित तथ्यों एवं घटनाओं की खोज करने एवं विभिन्न चरों में कार्य–कारण संबंधों का पता लगाने के लिये कुछप्राकल्पनाओं का निर्माण किया गया है जो अग्रलिखित हैं–

1. जनजाति युवाओं में औपचारिक शिक्षा, स्वयं सेवी संस्थाओं के प्रयास एवं जनसंचार साधनों के कारण मानवाधिकारों के प्रति जानकारी तथा जागरूकता बढ़ी है।

2. जनजातियों की अपनी सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्था और आधुनिक सामाजिक व्यवस्था की विधियों तथा व्यवस्था के कारण मानवाधिकार संरक्षण को लेकर कुछ अर्न्तविरोध पैदा हुआ हैं। यानि एक और पारस्परिक भावनाएं सुदृढ़ हो रही हैं तो दूसरी और आधुनिक मानवाधिकार धारणाएं भी प्रविष्ट होने लगी हैं।

3. जनजाति समाज में पायी जाने वाली विभिन्न प्रथाएं, जैसे डायन प्रथा, नातरा प्रथा, दागना प्रथा आदि जो उनकी संस्कृति के अंश हैं, को मानवाधिकार का हनन् नहीं माना जाता बल्कि इन प्रथाओं को ये समाज अपनी संस्कृति का हिस्सा मानता है। संस्कृति के अपने आधारों को, जो मानव अधिकार का प्रश्न नहीं उठाते – सांस्कृतिक मानव अधिकार के अनुसार स्वतन्त्र प्रक्रियाएं हैं।

4. जनजाति समाज में पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों के प्रति मानवाधिकारों के हनन् की घटनाएं अधिक होती हैं। सामाजिक–सांस्कृतिक रचना में जहां लोकतंत्रीय व्यवस्था हस्तक्षेप करना चाहती है, वहीं जनजाति सामाजिक व्यवस्था इन प्रयासों का प्रतिरोध रखना चाहती हैं।

5. कार्य प्रतिबन्धों और मानवाधिकारों के ज्ञान के अभाव में मानवाधिकारों के संरक्षण में स्वैच्छिक संगठनों एवं मानवाधिकार आयोग की भूमिका उत्साहवर्धक नहीं रही है।

अनुसंधान प्रारूप

- **व्याख्यात्मक–** जब अनुसंधानकर्ता किसी घटना, स्थिति अथवा समस्या को उत्पन्न करने वाले कारणों की खोज के उद्देश्य से कोई अन्वेषण करता है तो वहअनुसंधान व्याख्यात्मक अनुसंधान कहलाता है। इस प्रकार के अनुसंधान में घटना की व्याख्या की जाती है कि घटना क्यों उत्पन्न हुई, या ऐसा क्यों हुआ। इसमें क्या के स्थान पर क्यों प्रश्न पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। प्रस्तुत अनुसंधान में भी यह जानने का प्रयास किया गया है कि जनजाति समाज में मानवाधिकार हनन् की घटनाओं के पीछे क्या कारण है ? तथा ऐसी घटनाएं क्यों घटित हो रही हैं। जनजाति युवा मानवाधिकारों की कितनी जानकारी रखते हैं ?

- **वर्णनात्मक–** जब किसी अन्वेषण का उद्देश्य घटनाओं, संगठनों, संस्थानों अथवा किसी स्थिति विशेष का वर्णन करना होता है तब इस प्रकार के अध्ययन वर्णनात्मक अनुसंधान कहलाते है। इस प्रकार के अनुसंधान क्यों के प्रश्न का उत्तर देने कि अपेक्षा क्या का उत्तर देते है। प्रस्तुतअनुसंधान में भी समस्या से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों का एकत्रीकरण करके उनका वर्णन किया गया है। जिससे की घटनाओं को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया जा सके।

अध्ययन क्षेत्र

प्रस्तुत अनुसंधान का अध्ययन क्षेत्र राजस्थान राज्य के दक्षिणी हिस्से में स्थित जनजाति उपयोजना क्षेत्र है। यह जनजाति अनुसूचित क्षेत्र राज्य के दक्षिणी–पूर्व में स्थित है और इस क्षेत्र के पांच जिलों की 25 तहसीलों के 5054 गांव हैं जिनमें जनजातियों का सघन आवास है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार इस क्षेत्र की जनसंख्या 57.24 लाख है जिसमें जनजाति जनसंख्या 41.88 लाख यानि 73.17 प्रतिशत आबादी जनजाति की हैं। इस क्षेत्र के पांच जिलों में बांसवाड़ा व डूंगरपुर जिले सम्पूर्ण जिले जनजाति बहुल हैं, उदयपुर जिले कि 7 पूर्ण तहसीलें, गिर्वा तहसील के 123 गांव एवं कोटड़ा तहसील से गोगुंदा तहसील में सीमान्तरित 52 गांव आते हैं। प्रतापगढ़ जिले कि अरनोद, प्रतापगढ़, धरीयावाद व पिपलखूंट तहसीलें तथा सिरोही जिले कि आबूरोड़ पंचायत समिति सम्मिलित हैं जो जनजाति उपयोजना क्षेत्र का हिस्सा हैं। इस क्षेत्र को निम्न सारणी से समझा जा सकता है –

जिला	तहसीलें	पंचायत समितियां	जनजाति जनसंख्या (प्रतिशत)
बांसवाड़ा	5	8	76.38

डूंगरपुर	4	5	70.82
उदयपुर	9	12	74.10
प्रतापगढ़	4	5	68.19
सिरोही	1	5	70.35
कुल जनजाति क्षेत्र			**73.17**

अनुसंधान विषय की प्रकृति के आधार पर जनजाति उपयोजना क्षेत्र मे स्थित पांच में से तीना जिलों – डूंगरपुर, उदयपुर व बांसवाड़ा को इस अध्ययन में सम्मिलित किया गया हैं। क्योंकि इन तीनों जिलों में सर्वाधिक जनजाति प्रतिशत विद्यमान है। अध्ययन क्षेत्र का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

उदयपुर

उदयपुर की स्थापना 1559 ईस्वी में सिसोदिया वंश के शासक महाराणा उदयसिंह ने की थी। उदयपुर अरावली पर्वत श्रेणियों में स्थित है। यह जिला उत्तरी अक्षांश 23°46" से 25°5" तथा पूर्वी देशान्तर 73°9" से 74°35" के मध्य स्थित है। इसके उत्तर में राजसमंद, दक्षिण में डूंगरपुर तथा बांसवाड़ा, पूर्व में चित्तोड़ और प्रतापगढ़ जिले स्थित है। इसकी कुल जनसंख्या 30,68,420 है जिसमें से पुरूष जनसंख्या 16,66,801 तथा महिला जनसंख्या 15,01,619 है, उदयपुर जिले का लिंगानुपात 958 है तथा जनसंख्या घनत्व 262 है। साक्षरता दर 61.8 जिसमें से पुरूष साक्षरता दर 74.7 तथा महिला साक्षरता 48.4 है। राजस्थान राज्य के सर्वाधिक आबादी वाले जिलों में उदयपुर जिला 30.68 लाख जनसंख्या के साथ पांचवें स्थान पर है। यह जिला जनजाति बहुल जिलों में से एक है। इस जिले में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 15,25,289 है।

डूंगरपुर

डूंगरपुर की स्थापना सन् 1326 ई. में रावल वीर सिंहदेव ने की। इसे वागड प्रदेश के नाम से भी जाना जाता है।यह जिला राज्य के 23°20" से 24°0" उत्तरी अक्षांश और 73°21" से 74°23" पूर्वी देशान्तरके मध्य स्थित है डूंगरपुर के उत्तर में उदयपुर जिला और पूर्व में बांसवाड़ा जिला स्थित है। डूंगरपुर जिला भील जनजाति बहुल जिला है। इसकी कुल जनसंख्या 13,88,552 है जिसमें से 6,96,532 पुरूष तथा 6,92,020 महिला जनसंख्या है। यहां का लिंगानुपात 994 तथा जनसंख्या घनत्व 368 है। यहां की साक्षरता दर 59.5 है जिसमें से पुरूष

साक्षरता दर 72.9 प्रतिशत 4 तथा 46.2 प्रतिशत महिला साक्षरता दर है। इस जिले में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 9,83,437 है।

बांसवाड़ा

बांसवाड़ा जिला सांस्कृतिक दृष्टि से वागड़ क्षेत्र का हिस्सा है। यह जिला 23°11" से 26°96" उत्तरी अक्षांश एवं 74°0" से 74°47" पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इसके उत्तर में प्रतापगढ़ जिले की धरियावाद तहसील, पूर्व में मध्यप्रदेश का रतलाम जिला, पश्चिम में डूंगरपुर जिले की सागवाड़ा व आसपुर तहसील है तथा दक्षिण में मध्यप्रदेश का झाबुआ जिला है। इसकी कुल जनसंख्या 17,97,485 जिसमें से 9,07,754 पुरूष जनसंख्या तथा 8,89,731 महिला जनसंख्या है। इसका लिंगानुपात 980 तथा जनसंख्या घनत्व 397 है। यहां की साक्षरता दर 56.3 प्रतिशत है जिसमें से 69.5 प्रतिशत पुरूष साक्षरता तथा 43.1 प्रतिशत महिला साक्षरता है। 2011 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जनजाति की 13,72,999 जनसंख्या (76.6 प्रतिशत) बांसवाड़ा में निवास करती है।

इन क्षेत्रों के अन्तर्गत जनजाति के अधिकांश लोग आर्थिक रूप से कमजोर हैं और इसी कारण उनकी स्थिति गरीबी रेखा से नीचे है। ये लोग आर्थिक रूप से कृषि पर निर्भर है। इस क्षेत्र के जनजाति लोग अपने अधिकारों को पूरी तरह से नहीं जानते। हांलाकि अब स्थिति कुछ बदलने लगी है इस क्षेत्र के जनजाति सदस्य पूर्व की अपेक्षाअपनी आवश्यकताओं और अधिकारों के प्रति जागरूक होन लगे हैं। नयी पीढ़ी शिक्षा प्राप्त करने लगी है और गैर–जनजाति सदस्यों से इनकी अन्तःक्रिया भी बढ़ रही है।

निदर्शन पद्धति

इस अध्ययन में क्षेत्र और कोटा निदर्शन पद्धति को प्रयुक्त किया गया है। निदर्शन हेतु सर्वप्रथम क्षेत्र का चयन किया गया है। तीनों जिला मुख्यालयों के साथ–साथ इनकी 4–4 पंचायत समितियों को चुना गया हैं। चूंकि डूंगरपुर मुख्यालय के साथ इसकी 4 पंचायत समितियां अध्ययन में सम्मिलित हैं अतः उदयपुर (गिर्वा) मुख्यालय और बांसवाड़ा मुख्यालय एवं इसके क्रमशः 12 और 8 पंचायत समितियों में से भी 4–4 पंचायत समितियों का चुनाव लॉटरी विधि द्वारा किया गया हैं। तत्पश्चात् दूसरे स्तर पर प्रत्येक निदर्शित पंचायत समिति से निश्चित संख्या में जनजाति युवा उत्तरदाताओं (युवक एवं युवतियों) का चयन किया गया है। उत्तरदाताओं के रूप में युवा वर्ग में 18 से 35 वर्ष की आयु वर्ग के जनजाति युवक व युवतियांसम्मिलित किया गई हैं। प्रत्येक जिले की चुनी गई प्रत्येक पंचायत से 20–20 उत्तरदाताओं अर्थात् युवाओं को उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि द्वारा चुना गया है, जिसमें 10 युवक व 10 युवतियां सम्मिलित हैं।इसमें यह ध्यान रखा गया हैं कि ये युवा भिन्न–भिन्न आयु, शैक्षिक स्तर, व्यवसाय, आय

आदि का प्रतिनिधित्व करें।इस प्रकार इनके चयन में उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि का प्रयोग कर कुल 300 उत्तरदाताओं से आंकड़ों का एकत्रीकरण किया है।

निर्देशन
उदयपुर
डूंगरपुर
बांसवाड़ा
झाड़ोल
युवक
युवती
10
10
कोटड़ा
युवक
युवती
10
10
सराड़ा
युवक
युवती
10
10
सलुम्बर
युवक
युवती
10
10
खेरवाड़ा
युवक
युवती
10
10
सागवाड़ा
युवक
युवती
10
10
डूंगरपुर
युवक
युवती
10
10
सीमलवाड़ा
युवक
युवती
10
10
बिछीवाड़ा
युवक
युवती
10
10
आसपुर
युवक
युवती
10
10
गढ़ी
युवक
युवती
10
10
घाटोल
युवक
युवती
10
10
कुशलगढ़
युवक
युवती
10
10
बांसवाड़ा
युवक
युवती
10
10
बागीदौरा
युवक
युवती
10
10

तथ्य संकलन प्रविधि

तथ्य संकलन हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है।

(i) प्राथमिक स्त्रोत

प्राथमिक तथ्य संकलन हेतु साक्षात्कार प्रविधि, अवलोकन विधि तथा वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है।

(अ) साक्षात्कार प्रविधि : अनुसंधान के अन्तर्गत तथ्य संकलन हेतु साक्षात्कार प्रविधि का प्रयोग किया गया। इसके लिये सर्वप्रथम साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण किया गया जिसमें अनुसंधान के उद्देश्यों के आधार पर प्रश्न संरचित किए गए।अनुसंधान में विश्वसनीयता लाने हेतु साक्षात्कार अनुसूची का पूर्व परीक्षण करने के बाद साक्षात्कार अनुसूची में आवश्यक संशोधन किया गया। तत्पश्चात् अनुसंधान हेतु चयनित उत्तरदाताओं से साक्षात्कार करके सूचनाओं का संकलन किया गया।

(ब) अवलोकन : अवलोकन ज्ञान संग्रह की एक महत्त्वपूर्ण विधि है जिसमें अध्ययनकर्त्ता घटनाओं को देखता है, सुनता है, समझता है और सम्बन्धित सामग्री का संकलन करता है। प्रस्तुत अध्ययन में भी अनुसंधानकर्ता द्वारा साक्षात्कार के दौरान तथा समय–समय पर घटित प्रघटनाओं का अध्ययन अवलोकन द्वारा किया गया है। तथ्यों के विश्लेषण में यथा समय इनका प्रयोग किया गया है।

(स) वैयक्तिक अध्ययन : गहन अध्ययन हेतुप्रत्येक जिले से मानवाधिकार हनन् से सम्बन्धित 5–5 वैयक्तिक अध्ययन किये गये। ये अध्ययन एडवर्ड एच. स्पाइसर के मॉडल का प्रयोग करते हुए किये गये हैं। जिसके चरणक्रमशः समस्या, घटनाक्रम, प्रासंगिक कारक, परिणाम व विश्लेषण हैं। ये वैयक्तिक अध्ययन जनजाति समाज में पाई जाने वाली प्रथाओं जैसे डायन प्रथा, नातरा प्रथा व दागना प्रथा तथा सामाजिक समस्याओं महिलाओं व बच्चों पर होने वाले अत्याचारों से सम्बन्धित हैं।

(ii) द्वितीयक स्त्रोत

अनुसंधान विषय से सम्बन्धित द्वितीयक स्त्रोत एवं सामग्री का संग्रहण विभिन्न पुस्तकालयों, दैनिक पत्र–पत्रिकाओं, सरकारी कार्यालयों, अनुसूचित

जनजाति विभाग तथा अनुसंधान संस्थाओं एवं इन्टरनेट पर उपलब्ध सामग्री से किया गया है।

पुस्तक समीक्षा के अन्तर्गत मानवाधिकारों से सम्बन्धित पुस्तकों प्रतिवेदनों रिपोर्ट, जर्नल्स, पत्र–पत्रिकाओं का समावेश किया गया है, जो मानवाधिकारों की प्रकृति व स्वरूप को स्पष्ट करते हैं।

तथ्य विश्लेषण विधि

अनुसंधान द्वारा प्राप्त तथ्यों को बोधगम्य बनाने हेतु उन्हें संख्यात्मक तथा वर्णन (गुणात्मक) द्वारा स्पष्ट किया गया है।

संख्यात्मकः अनुसंधानमें संख्या में प्राप्त तथ्यों को तालिका के रूप में प्रस्तुत करके आंकड़ों को समझने योगय एवं सरल रूप में प्रस्तुत किया गया है।

विश्लेषणात्मकः अनुसंधान में विभिन्न प्रविधियों की सहायता से संकलित तथ्यों का विश्लेषण व विवेचन किया गया है जिसमें से संकलित तथ्यों का विश्लेषण करते हुए तथ्यों, घटनाओं एवं विभिन्न दशाओं के बीच सह–सम्बन्धज्ञात करने का प्रयास किया गया है। यह विवेचन किया गया है कि किसी विशेष दशा, परिणाम अथवा घटना के लिये कौनसे कारक उत्तरदायी रहे हैं ?

उपसंहार

अनुसंधान साहित्य समीक्षा में अधिक से अधिक पुस्तकों व उपलब्ध साहित्य का यथोचित मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है। जिसमें मानवाधिकार एवं जनजातियों से सम्बन्धित साहित्य का गहन अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में अनुसंधान अंतराल के साथ ही अनुसंधान के प्रमुख उद्देश्यों को भी सम्मिलित किया गया है। अनुसंधान पद्धति में अध्ययन क्षेत्र, निदर्शन पद्धति तथा तथ्य संकलन प्रविधियों का उल्लेख किया गया है। प्राथमिक तथ्य संकलन हेतु उपयोग में लिये जाने वाले प्राथमिक स्त्रोतों का वर्णन भी किया गया है।

स्पष्टतः विभिन्न कानूनों व नियमों के बावजूद इस समाज में मानवाधिकार हनन् क्यों हो रहा है, एवं जनजाति समाज स्वयं अपने अधिकारों के प्रति सजग है या नहीं। युवा वर्ग इस स्थिति से निकलने व अपने अधिकारों के हनन् को रोकने में सशक्त किस प्रकार हो सकते हैं ? इसका विश्लेषण करने के लिए ही यह अनुसंधान किया गया है। विशेषरूप से जनजाति उपयोजना क्षेत्र (उदयपुर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा) में मानवाधिकारों की क्या स्थिति है ? इसका अध्ययन किया गया है। अनुसंधान साहित्य समिक्षा प्रकाशित अनुसंधान पत्र–पत्रिकाओं एवं पुस्तकों में अछूते रह गये क्षेत्रों को भी खोजने में सहायक रही है।

सन्दर्भ सूची

1. आनन्द, प्रतिभा कुमारी, (2015). *महिला अत्याचार, शोषण एवं हिंसा के परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकार एवं मीड़िया की भूमिका,* नई दिल्ली : सत्यम पब्लिषिंग.
2. आचार्य, नन्दकिशोर, (2010). *मानवाधिकार की संस्कृति,* बीकानेर : वाग्देवी प्रकाशन.
3. ऑगस्टाइन, पी.ए., (1984). *सप्रेशन ऑफ वालिया ट्राइबल्स : ए केस ऑफ ह्युमन राइट्स वायोलेशन,* नई दिल्ली : भारतीय सामाजिक संस्थान.
4. एल्विन, वेरियर, (1952). क्या हम उन्हें सचमुच चिड़िया घर में रखना चाहते हैं ?, *आदिवासी,* नई दिल्ली : प्रकाषन विभाग भारत सरकार.
5. एल्विन, वेरियर, (1937). *एन ऑरिज़िनल्स,* लंदन : ऑक्सफॉर्ड़.
6. अंसारी, एम.ए., (2000). *महिला और मानवाधिकार,* जयपुर : ज्योति प्रकाशन.
7. बाबेल, बसन्तीलाल, (1998). *मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम,* भोपाल : लॉ हाउस पब्लिकेशन्स.
8. बाजवा, जी.एस., (1995). *भारत में मानवाधिकार क्रियाकलाप और उल्लंघन,* नई दिल्ली : अनमोल पब्लिकेशन.
9. बक्शी, एस. आर व बाला, किरण, (2000). *अनुसूचीत जनजातियों का सामाजिक और आर्थिक विकास,* नई दिल्ली : दीप एण्ड़ दीप पब्लिकेशन.
10. बर्नस, एच. वेस्टन, (2005). *चाइल्ड़ लेबर एण्ड़ ह्युमनराइट्स : मेकिंग चिल्ड्रन मेटर,* ———: लेनेरिनर पब्लिशर.
11. बोहरा, भूषणलाल, (1994). *मानव अधिकार और पुलिस बल,* नई दिल्ली : के.के. पब्लिकेशन्स.
12. चन्द्रा, रमेश, (2010). *मानवाधिकार विविध आयाम एवं चुनौतियां,* दिल्ली : अंकित पब्लिकेशन.
13. चतुर्वेदी, अरूण व लोढ़ा संजय, (सम्पा.) (2005). *भारत में मानव अधिकार,* जयपुर : पंचशील प्रकाशन.
14. चतुर्वेदी, सतीश, (2003). *मानवाधिकार एवं संयुक्त राष्ट्र संघ,* जयपुर : पोईन्टर पब्लिशर्स.
15. चितकारा, एम.जी., 1996). *ह्युमन राईट्स : कमिटमेन्ट एण्ड़ बेट्रायल,* APH पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन.

16. चौहान, यशपाल सिंह, (2006). *जनजाति क्षेत्र में शिक्षा की दशा एवं दिशाएं*, उदयपुर : अंकुर प्रकाशन.

17. चौधरी, (2005). *ह्युमन राईट्स एण्ड पोवर्टी इन इण्डिया : थियोरोटीकल इश्यु एण्ड इम्पीरिकल एवीड़ेन्स*, नई दिल्ली : कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी.

18. दीक्षित, निशि के., (2006). *ट्राईबल इन इण्डिया*, ———: ईस्टन बुक कार्पोरेशन.

19. दोषी, एस.एल., (1971). *ट्राईबल इथनिसिटी, क्लास एण्ड इंटिग्रेशन*, जयपुरः रावत पब्लिकेशन

20. दोषी, एस.एल., (1978). *प्रोसेसिक ऑफ ट्राईबल यूनिफिकेशन*, जयपुर : रावत पब्लिकेशन.

21. दोषी, एस.एल., (1992). *ट्राईबल राजस्थान सनषाईन ऑन द अरावलीज*, उदयपुर : हिमांषु पब्लिकेषन.

22. गुप्त, कैलाशनाथ, (2004). *मानव अधिकार और उनकी रक्षा (वर्तमान सदर्भ)*, नई दिल्ली : अविराम प्रकाशन.

23. घुर्ये, जी. एस., (1959). *द षिड्युल ट्राईब्स*, जयपुर : बोम्बे ————

24. गौरा, रतनलाल, (2010). *महिलाओं के मौलिक अधिकार*, जयपुर : राधा गोविन्द पब्लिशर्स.

25. गौतम, रमेशप्रसाद व सिंह, पृथ्वीपाल, (2001). *भारत में मानव अधिकार*, सागर : विश्वविद्यालय प्रकाशन.

26. गुप्त, कैलाश नाथ व शाह, सरिता, (2011). *मानवाधिकार : संघर्ष, संदर्भ एवं निवारण*, नई दिल्ली : अभिव्यक्ति प्रकाशन.

27. गुप्ता, जय श्री, (1990). *ह्युमन राइट्स एण्ड वर्किंग वुमन*, नई दिल्ली : पब्लिकेशन ड़िवीजन.

28. *जनगणना* (2011), भारत सरकार

29. जैन, उर्मिला, (2013). *मानव अधिकार और हम*, ———: परमेश्वरी प्रकाषन।

30. जोशी, हेमलता व भगोरा एल. आर., (2000). *जनजातियों का भौगालिक अध्ययन*, जयपुर : विद्यार्थी प्रकाशन.

31. जोशी, आर.पी., (2009). *मानवाधिकार एवं कर्त्तव्य*, अजमेर : अभिनव प्रकाशन.

32. जोशी, संदीप, (2005). *भारत में मानवाधिकार : मानवाधिकारों की स्थिति व चेतना का परिदृश्य*, जयपुर : पंचशील प्रकाशन.

33. कान्ता, रहमान, (2004). *ह्युमन राईट्स कन्सेप्ट एण्ड़ इश्युज*, नई दिल्ली : कॉमन वेल्थ पब्लिशर्स.

34. कपूर, एस. के., (2004). *मानव अधिकार एवं अन्तर्राष्ट्रीय विधि*, सेंन्ट्रल लॉ एजेन्सी, कानूनी पुस्तक प्रकाशन.

35. कार्तिकेयन, (2004). *मानव अधिकार : समस्या एवं समाधान*, नई दिल्ली : ज्ञान पब्लिशिंग हाउस.

36. कुमार व श्रीवास्तव, (2001). *ह्युमन राईट्स एण्ड़ ड़ेवलपमेन्ट लॉ पॉलिसी एण्ड़ गवर्नेस*, हांगकांग : लेक्सिस नेक्सिस.

37. कुमावत, नन्द किशोर;मीणा, सतीश (2012). *युवा संस्कृति*, जयपुर : ग्रन्थ विकास.

38. मल्होत्रा, (2005). *ह्युमन राइट्स : इमरजींग इश्युज़*, नई दिल्ली : किलासो पब्लिकेशन.

39. मंगल, रमेशचन्द्र, (2005). *बच्चों की समस्याएं और मानवाधिकार : भारत में मानवाधिकार*, जयपुर : पंचशील प्रकाशन.

40. मेहता, प्रकाशचन्द्र, (2000). *बीसवीं शताब्दी में जनजातीय विकास*, उदयपुरः शिवा पब्लिशर्स.मिश्रा, महेन्द्र कुमार, (2008). *भारत में मानवाधिकार*, जयपुर : आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स.

41. मीना, शीतल, (2012), *जनजातियों के मानव अधिकार एवं मानव विकास*, जयपुर : पोईन्टर पब्लिषर्स.

42. नाटाणी, पी.एन., (2003). *मानवाधिकार एवं कर्तव्य*, जयपुर : अविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स. नाजुन्दा, ड़ी.सी., (2008). *चाइल्ड लेबर एण्ड ह्युमन राइट्स परस्पेक्टिव*, नई दिल्ली : कल्पना पब्लिकेशन.

43. नाटाणी, पी. एन., (2009). *महिलाओं व बालिकाओं के अधिकार*, जयपुर : विनायक प्रकाशन.

44. नायडु, पी. आर., (2013). *भारत के आदिवासी विकास की समस्याएं*, नई दिल्ली : राधा पब्लिकेषन.

45. राय, अरूण, (2012). *भारत का राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग*, ———: राधा पब्लिकेषन. राठोड़,

46. शर्मा, आर. एस., (1980). *इण्ड़ीयन फ्युड़लिज्म*, दिल्ली : मेकमिलन इण्ड़िया.

47. शर्मा, (2002). *ह्युमन राईट्स एण्ड़ बेल*, नई दिल्ली : APH पब्लिकेशन्स.

48. शाह, विमल, (1969). *ट्राईबल इकोनॉमी इन गुजरात*, जयपुर : प्रिन्टवेल पब्लिकेशन.

49. शास्त्री, टी. एस. एन., (2005). *इण्ड़िया एण्ड़ ह्युमन राइट्स रिफलेक्शन,* नई दिल्ली : कन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी.

50. सैनी, इन्दु, (2009). *मानवाधिकार और महिला,* पिलानी : कपिल प्रकाशन.

51. श्रीवास्तव, सुधारानी व श्रीवास्तव, आशारानी, (2004). *महिला शोषण व मानवाधिकार,* मध्यप्रदेष, विश्वविद्यालय प्रकाशन.

52. श्रीवास्तव, विनय कुमार, (2010). ऑन ट्राईबल इकोनॉमी एण्ड़ सोसाईटी इन बेहरा एम.सी. एण्ड़ जुमेरबसर, *इन्टरवेन्शन एण्ड़ ट्राईबल ड़ेवलपमेन्ट, चेलेन्जेस बिफोर ट्राईब्स इन इण्ड़िया इन एरा ऑफ ग्लोबलाइजेशन,* नई दिल्ली : सिरीयल पब्लिकेशन.

53. सिंह, संजय, (2010). *मानवाधिकार और दलित,* नई दिल्ली : ओमेगा पब्लिकेशन.

54. सिंह, जगजीत, (2010). *मानवाधिकार वायदे और हकीकत,* दिल्ली : सन्मार्ग प्रकाशन.

55. सिंह, अजय, (1994). *भील जनजाति : शिक्षा और आधुनिकीकरण,* जयपुर : पंचशील प्रकाशन.

56. सिंह, राजबाला, (2011). *मानवाधिकार व महिलाएं,* जयपुर : आविष्कार पब्लिशर्स.

57. सिन्हा, मनोज कुमार, (2013). *इम्पलिमेन्टेषन ऑफ बेसिक ह्युमन राईट्स,* ———: लेक्सिस नेक्सिस.

58. तनेजा, पुष्पलता, (2014). *मानवाधिकार और बाल शोषण,* ———: प्रभात प्रकाश.

59. तलेसरा, हेमलता व पंचोली, नलिनी, (2003). *मानव अधिकार एवं शिक्षा,* उदयपुर : अंकुर प्रकाशन.

60. तिवाड़ी, ज्योत्सना, (2009). *चाइल्ड़ एब्युज़ एण्ड़ ह्युमन राइट्स,* नई दिल्ली : ईशा बुक्स पब्लिकेशन.

61. उप्रेति, हरिशचन्द्र, (2000). *भारत में जनजातीयां : संरचना एवं विकास,* दिल्ली : अंकित पब्लिकेशन.

62. वीर, (2004). *क्राईम अगेन्स्ट वुमन,* नई दिल्ली : अनमोल पब्लिकेशन.

63. यादव, पूरणमल, (2003). *मानवाधिकार सामाजिक न्याय और भारत का संविधान,* जयपुर : पोईन्टर पब्लिशर्स.

❑❑❑

3

युवाओं की सामाजिक – आर्थिक पृश्ठभूमि

पिछला अध्याय अनुसंधान पद्धति एवं सन्दर्भ साहित्य की व्याख्या पर आधारित था जिसके अन्तर्गत साहित्य पुनरावलोकन का महत्त्व बताते हुए अध्ययन से सम्बन्धित साहित्यकी समीक्षा प्रस्तुत की गई जो अध्ययन के मार्गदर्शन में सहायक सिद्ध हुई। तत्पश्चात् अनुसंधान के उद्देश्यों को बताते हुए अनुसंधान पद्धति का वर्णन किया गया।

प्रस्तुत अध्याय में चयनित उत्तरदाताओं की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया जा रहा है। प्रत्येक मनुष्य सामाजिक व आर्थिक परिवेश में अपना जीवन–यापन करता है। सामाजिक परिवेश व्यक्ति को समूह में तथा समाज में रहने योग्य बनाता है तथा आर्थिक परिवेश व्यक्ति को भौतिक सुख–सुविधाओं को पाने योग्य बनाता है। इन दोनों ही परिवेशों का व्यक्ति के सामाजिक व व्यक्तिगत जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

चयनित क्षेत्र के कुल 300 उत्तरदाताओं से उनकी सामाजिक–आर्थिक स्थिति की जानकारी ली गई है, जिसका विस्तृत विवरण इस अध्याय में किया जा रहा है। सामाजिक पृष्ठभूमि के अन्तर्गत उत्तरदाताओं से उनकी आयु, शिक्षा, वैवाहिक स्तर, परिवार का स्वरूप आदि से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त की गई है। आर्थिक पृष्ठभूमि के अन्तर्गत उत्तरदाता का व्यवसाय, उसके परिवार की मासिक आय आदि से सम्बन्धित तथ्यों का वर्णन किया गया है।

उदयपुर, डूंगरपुर तथा बांसवाड़ा तीनों ही क्षेत्रों के चयनित युवा वर्ग की आयु को सारणी 3.1 में प्राप्त आंकड़ों के आधार पर दर्शाया गया है–

सारणी 3.1

युवाओं की आयु

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	आयु वर्षों में			योग
		18 से 25 वर्ष	25 से 30 वर्ष	30 से 35 वर्ष	
युवक	उदयपुर	20 (40.0)	14 (28.0)	16 (32.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	25 (50.0)	15 (30.0)	10 (20.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	19 (38.0)	16 (32.0)	15 (30.0)	**50 (100.0)**
युवतियां	उदयपुर	30 (60.0)	09 (18.0)	11 (22.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	22 (44.0)	11 (22.0)	17 (34.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	25 (50.0)	18 (36.0)	07 (14.0)	**50 (100.0)**
योग		**141 (47.0)**	**83 (27.7)**	**76 (25.3)**	**300 (100.0)**

सारणी 3.1 के से अनुसंधान हेतु चयनित उत्तरदाताओं की आयु का पता चलता है। उदयुपर क्षेत्र के चयनित 50 युवकों में से 40 प्रतिशत युवक 18 से 25 आयु वर्ग के मध्य हैं तथा 60 प्रतिशत युवक 25–35 आयु वर्ग के मध्य के हैं। इसी प्रकार 60 प्रतिशतयुवतियां 18–25 आयु वर्ग की, 18 प्रतिशत युवतियां 25 से 30 आयु वर्ग की तथा 22 प्रतिशत युवतियां 30 से 35 आयु वर्ग की हैं। डूंगरपुर क्षेत्र के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में 50 प्रतिशत युवक 18 से 25 आयु वर्ग के तथा 50 प्रतिशत युवक 25 से 35 आयु वर्ग के हैं। इसी क्षेत्र से चयनित 50 युवतियों में से 44 प्रतिशत युवतियां 18 से 25 आयु वर्ग की तथा 56 प्रतिशत युवतियां 25 से 35 आयु वर्ग के मध्य हैं।

बांसवाड़ा के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 38 प्रतिशत 18–25 आयु वर्ग के तथा 62 प्रतिशत 25–35 आयु वर्ग के हैं। वहीं युवतियों में 50 प्रतिशत 18–25 आयु वर्ग की तथा 50 प्रतिशत 25–30 आयु वर्ग की हैं।

तीनों चयनित जिलों का तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि 18 से 25 आयु वर्ग के युवा वर्ग का सर्वाधिक 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व उदयपुर से है, 25 से 30 आयु वर्ग के युवा वर्ग का सर्वाधिक 34 प्रतिशत बांसवाड़ा से है तथा 30 से 35 आयु के युवा वर्ग कासर्वाधिक 27–27 प्रतिशत प्रतिनिधित्व उदयपुर व डूंगरपुर दोनों से है।

मनुष्य के विकास के लिए उसका शिक्षा प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। अनुसंधान हेतु चयनित उत्तरदाताओं का शैक्षिक स्तर सारणी 3..2 दर्शाती है।

सारणी 3.2

युवाओं का शैक्षिक स्तर

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	शैक्षिक स्थिति					योग
		साक्षर	प्राथमिक	माध्यमिक	स्नातक	स्नातकोत्तर	
युवक	उदयपुर	03 (6.0)	02 (4.0)	06 (12.0)	30 (60.0)	09 (18.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	02 (4.0)	04 (8.0)	08 (16.0)	28 (56.0)	08 (16.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	02 (4.0)	02 (4.0)	10 (20.0)	26 (52.0)	10 (20.0)	**50 (100.0)**
युवतियां	उदयपुर	04 (8.0)	03 (2.0)	05 (4.0)	26 (46.0)	12 (40.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	07 (14.0)	04 (8.0)	03 (6.0)	29 (58.0)	07 (14.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	04 (8.0)	06 (12.0)	02 (4.0)	28 (56.0)	10 (20.0)	**50 (100.0)**
योग		**22 (7.3)**	**21 (7.0)**	**34 (11.3)**	**167 (55.7)**	**56 (18.7)**	**300 (100.0)**

सारणी 3.2 से चयनित क्षेत्रों के उत्तरदाताओं के शैक्षिक स्तर का पता चलता है। उदयुपर मुख्यालय के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 6 प्रतिशत युवक उत्तरदाता साक्षर हैं, 4 प्रतिशत युवको ने प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त की है। 12 प्रतिशत युवक माध्यमिक स्तर का अध्ययन प्राप्त हैं तथा 60 प्रतिशत

स्नातक व 18 प्रतिशत स्नातकोत्तर तक की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इसी प्रकार इसी क्षेत्र से 50 युवतियों में से 8 प्रतिशत साक्षर हैं। 6 प्रतिशत युवतियां प्राथमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त हैं। 10 प्रतिशत ने माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त कर रखी है। 52 प्रतिशत स्नातक स्तर तक तथा 24 प्रतिशत युवतियां स्नातकोत्तर स्तर तक का अध्ययन कर रही हैं।

डूंगरपुर से 4 प्रतिशत युवक उत्तरदाता साक्षर हैं। 8 प्रतिशत ने प्राथमिक

तथा 16 प्रतिशत ने माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा ग्रहण कर रखी है। 56 प्रतिशत युवक स्नातक हैं तथा 16 प्रतिशत स्नाकोत्तर हैं। युवतियों का अध्ययन किया जाए तो आकड़ों से स्पष्ट होता है कि 14 प्रतिशत युवतियां साक्षर हैं 8 प्रतिशत ने प्राथमिक तथा 6 प्रतिशत ने माध्यमिक स्तर तक का अध्ययन प्राप्त किया है। 58 प्रतिशत युवतियां स्नातक हैं एवं 14 प्रतिशत स्नाकोत्तर कर रही हैं।

बांसवाड़ा मुख्यालय से 50 युवक उत्तरदाताओं में से 4 प्रतिशत साक्षर हैं 4 प्रतिशत ने प्राथमिक तथा 20 प्रतिशत ने माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा ग्रहण की है। 52 प्रतिशत युवक उत्तरदाता स्नातक कर रहे हैं एवं 20 प्रतिशत स्नाकोत्तर में हैं। युवतियों के आंकड़ों से प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर 8 प्रतिशत युवतियां साक्षर, 12 प्रतिशत युवतियां प्राथमिक स्तर तथा 4 प्रतिशत माध्यमिक स्तर तक का अध्ययन प्राप्त हैं। 56 प्रतिशत युवतियां स्नातक में हैं एवं 20 प्रतिशत स्नातकोत्तर में हैं।

तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो उदयपुर का युवा वर्ग उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अन्य जिलों से आगे है तथा डूंगरपुर का युवा वर्ग उच्च शिक्षा में अन्य दो जिलों से पिछे है।निष्कर्षतः डूंगरपुर में उच्च शिक्षा अध्ययन में युवा वर्ग अन्य जिलों की अपेक्षा पीछे है। जिसका मुख्य कारण है इनकी कमजोर आर्थिक स्थिति। जनजाति समाज का अधिकांश भाग आज भी कृषि एवं मजदूरी पर अपना जीवन–यापन कर रहा है और इसी कारण वे शिक्षा प्राप्त करने में अधिक रूचि नहीं रखता। यद्यपि सरकार ने कई योजनाएं व निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की है परन्तु ये लोग शिक्षा प्राप्त करने में समय बर्बाद नहीं करना चाहते। उत्तरदाता कहते हैं कि यदि एक भी सदस्य शिक्षा प्राप्त करने में अपना समय लगाएगा तो वह कृषि कार्य में सहयोग नहीं दे पायेगा और कृषि के कार्य में समय अधिक लगेगा परिणामस्वरूप इनकी आय कम हो जाएगी।

चयनित जनजाति उपयोजना क्षेत्र के तीनों जिलों की आर्थिक स्थिति का पता लगाने हेतुउत्तरदाताओं की व्यवसायिक तथा आय की स्थिति की जानकारी लेना भी जरूरी है। यद्यपि चयनित उत्तरदाताओं की आयु 18 से 35 वर्ष की है जिनमें अधिकांश उत्तरदाता शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। परन्तु चूंकि जनजाति समाज आर्थिक स्तर से कमजोर है तो इस समाज के युवा अपनी जेब खर्च निकालने के लिये कुछ न कुछ करते रहते हैं। इसी आधार पर उत्तरदाताओं के व्यवसायिक स्तर का अध्ययन किया गया है।

सारणी 3.3 से जनजाति युवाओं के व्यवसायिक स्तर की जानकारी प्राप्त होती है। उदयपुर से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 16 प्रतिशत युवक नौकरी करते हैं, 6 प्रतिशत युवक कृषि करने में परिवार वालों का सहयोग करते हैं 8 प्रतिशत युवक उत्तरदाता मजदूरी करते हैं, 10 प्रतिशत अंशकालीन व्यवसाय में संलग्न हैं, तथा 60 प्रतिशत युवक कोई व्यवसाय नहीं करते। वहीं 50 युवतियों में से 14 प्रतिशत युवतियां नौकरी कर रही हैं 10 प्रतिशत कृषि कार्य में सहयोग दे रही हैं, 10 प्रतिशत मजदूरी कर रही हैं तथा 66 प्रतिशत युवतियां कोई व्यवसाय नहीं करती।

सारणी 3.3

युवाओं का व्यवसाय

उत्तर दाता	अध्ययन क्षेत्र	व्यवसायिक स्तर					योग
		नौकरी	कृषि	मजदूरी	अंशकालीन व्यवसाय	कोई व्यवसाय नहीं	
युवक	उदयपुर	08 (16.0)	03 (6.0)	04 (8.0)	05 (10.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	12 (24.0)	04 (8.0)	10 (20.0)	08 (16.0)	16 (32.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	06 (12.0)	06 (12.0)	08 (16.0)	10 (20.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**
युवतियां	उदयपुर	07 (14.0)	05 (10.0)	05 (10.0)	—	33 (66.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	09 (18.0)	07 (14.0)	05 (10.0)	—	29 (58.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	03 (6.0)	06 (12.0)	07 (14.0)	03 (6.0)	31 (62.0)	**50 (100.0)**
योग		**45 (15.0)**	**31 (10.3)**	**39 (13.0)**	**26 (8.7)**	**159 (53.0)**	**300 (100.0)**

डूंगरपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 24 प्रतिशत नौकरी कर रहे हैं 8 प्रतिशत कृषि तथा 20 प्रतिशत युवक मजदूरी करते हैं 16 प्रतिशत युवक अंशकालीन व्यवसाय कर रहे हैं और 32 प्रतिशत युवक उत्तरदाता कोई व्यवसाय नहीं करते। वहीं 50 युवतियों में से 18 प्रतिशत युवतियां नौकरी कर रही हैं, 14

प्रतिशत कृषि में संलग्न है, 10 प्रतिशत युवतियां मजदूरी करती हैं और सर्वाधिक 58 प्रतिशत युवतियां कोई व्यवसाय नहीं करतीं।

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 12 प्रतिशत नौकरी कर रहे हैं, 12 प्रतिशत कृषि तथा 16 प्रतिशत मजदूरी करते हैं। 20 प्रतिशत युवक अंशकालीन व्यवसाय में संलग्न हैं और 40 प्रतिशत कोई व्यवसाय नहीं करते। दूसरी तरफ 50 युवतियों में से 6 प्रतिशत युवतियांनौकरी कर रहीं हैं, 12 प्रतिशत कृषि कार्य में सहयोग देती हैं, 14 प्रतिशत मजदूरी करती हैं, 6 प्रतिशत अंशकालीन व्यवसाय करती हैं और 62 प्रतिशत युवतियांकोई कार्य नहीं करती।

तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो तीनों ही जिलों में व्यवसाय न करने वाले युवा वर्ग की संख्या सर्वाधिक है। सबसे अधिक 53 प्रतिशत युवा वर्ग वर्तमान में अध्ययन में संलग्न है। जबकि 8.7 प्रतिशत युवा वर्ग अध्ययन के साथ–साथ अंशकालीन व्यवसाय भी कर रहा है।तीनों जिलों की तुलना की जाए तो अंशकालीन व्यवसाय में संलग्न युवा वर्ग का सर्वाधिक प्रतिशत 4.3 बांसवाड़ाका है जो अध्ययन के साथ किसी न किसी व्यवसाय में संलग्न है। नौकरी करने वाले युवाओं का सर्वाधिक 7 प्रतिशतडूंगरपुर का है। कृषि कार्य में बांसवाड़ा के युवाओं का प्रतिशत ज्यादा है तथा मजदूरी में डूंगरपुर व बांसवाड़ा के युवाओं का प्रतिशत अधिक है। नौकरी करने वाले युवाओं में कुछ तो निजी स्कूलों में पढ़ाते है कुछ निजी कम्पनियों में कार्यरत है तथा कुछ युवा सरकारी नौकरी में लगे है। युवा अध्ययन के साथ–साथ नौकरी व मजदूरी करके परिवार में आर्थिक सहयोग करने का प्रयास करते हैं। यद्यपि जनजाति सदस्यों को शिक्षा हेतु छात्रवृति प्रदान की जाती है परन्तु इनकी यह छात्रवृति कई बार फीस के साथ–साथ घर खर्च मे ही खत्म हो जाती है। इसी कारण परिवार को संबल देने के लिये युवा वर्ग द्वारा यह प्रयास किये जाते हैं।

सारणी 3.4

युवाओं की मासिक आय

उत्तर दाता	अध्ययन क्षेत्र	मासिक आय				योग
		कोई आय नहीं	5000 से कम	10 से 20 हजार	20 हजार से अधिक	
युवक	उदयपुर	30 (60.0)	08 (16.0)	07 (14.0)	05 (10.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	16 (32.0)	20 (40.0)	06 (12.0)	08 (16.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	20	19	05	06	**50**

		(40.0)	(38.0)	(10.0)	(12.0)	**(100.0)**
युवतियां	**उदयपुर**	33 (66.0)	03 (6.0)	05 (10.0)	09 (18.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	29 (58.0)	09 (18.0)	06 (12.0)	06 (12.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	31 (62.0)	10 (20.0)	03 (6.0)	06 (12.0)	**50 (100.0)**
योग		***159 (53.0)***	***69 (23.0)***	***32 (10.7)***	***40 (13.3)***	***300 (100.0)***

सारणी संख्या 3.4 से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं में से कुछ उत्तरदाता नौकरी/व्यवसाय में संलग्न है जिसके आधार पर उनकी मासिक आय की जानकारी प्राप्त होती है।

उदयपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 60 प्रतिशत उत्तरदाता कोई व्यवसाय नहीं करते और इसी कारण उनकी कोई मासिक आय नहीं है। 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं की आय 5000 हजार से कम है तथा 14 प्रतिशत की 10–20 हजार तक हैं। 10 प्रतिशत युवकों की आय 20 हजार से अधिक है। वहीं युवतियों में 66 प्रतिशत की कोई आय नही हैं, 6 प्रतिशत की 5 हजार से कम, 10 प्रतिशत की 10–20 हजार तथा 18 प्रतिशत की 20 हजार से अधिक की आय है।

इसी प्रकार डूंगरपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 40 प्रतिशत उत्तरदाता 5000 हजार से कम आय वाले, 12 प्रतिशत 10–20 हजार की आय वाले तथा 16 प्रतिशत 20 हजार से अधिक मासिक आय वाले हैं जबकि 32 प्रतिशत युवकों की कोई आय नहीं है। वहीं दूसरी और युवतियों में 18 प्रतिशत 5000 से कम मासिक आय, 12 प्रतिशत 10 से 20 हजार आय तथा 12 प्रतिशत 20 हजार से अधिक आय वाली हैं। जबकि 58 प्रतिशत युवतियों की कोई आय नहीं है।

बांसवाड़ा के चयनित 50 युवकों में से 38 प्रतिशत की 5000 से कम, 10 प्रतिशत की 10 से 20 हजार तक तथा 12 प्रतिशत की 20 हजार से अधिक आय हैं। 40 प्रतिशत युवकों की कोई आय नहीं हैं। युवतियों में 20 प्रतिशत की 5000 से कम, 6 प्रतिशत की 10–20 हजार तक तथा 12 प्रतिशत युवतियों की 20 हजार से अधिक की आय है। 62 प्रतिशत युवतियों की कोई आय नहीं है।

इस प्रकार तीनों ही जिलों का तुलनात्मक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 22 प्रतिशत उत्तरदाता उदयपुर के है जिनकी कोई मासिक आय नहीं है तथा इनमें से अधिकांशतः अध्ययनरत है।

सारणी 3.5 के अवलोकन से चयनित उत्तरदाताओं की वैवाहिक स्थिति का पता चलता है। उदयपुर क्षेत्र से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 78 प्रतिशत

युवक उत्तरदाता विवाहित हैं तथा 22 प्रतिशत अविवाहित हैं। इसी प्रकार इस क्षेत्र की 50 युवतियों में से 72 प्रतिशत विवाहित हैं तथा 28 प्रतिशत अविवाहित हैं।

डूंगरपुर के 80 प्रतिशत युवक उत्तरदाता विवाहित हैं तथा 20 प्रतिशत अविवाहित हैं। इसी क्षेत्र की 70 प्रतिशत युवतियां विवाहित हैं, 28 प्रतिशत युवतियां अविवाहित हैं तथा 2 प्रतिशत अर्थात् एक युवती विधवा है। बांसवाड़ा में चयनित उत्तरदाताओं से 70 प्रतिशत युवक उत्तरदाता विवाहित हैं तथा 30 प्रतिशत युवक उत्तरदाता अविवाहित हैं। इस क्षेत्र की चयनित युवतियों में से 76 प्रतिशत युवतियां विवाहित हैं 20 प्रतिशत युवतियां अविवाहित है तथा 4 प्रतिशत विधवा हैं।

इस प्रकार तीनों जिलों में यदि तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो उदयपुर व डूंगरपुर में विवाहित सदस्यों का प्रतिशत 25–25 अर्थात् समान है और बांसवाड़ा में विवाहित सदस्य 24.3 प्रतिशत हैं। 300 उत्तरदाताओं में से कुल 74.3 प्रतिशत उत्तरदाता विवाहित हैं, 24.7 प्रतिशत उत्तरदाता अविवाहित तथा केवल 3 महिला उत्तरदाता विधवा है।

सारणी 3.5

युवाओं का वैवाहिक स्तर

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	वैवाहिकस्थिति			योग
		विवाहित	अविवाहित	विधवा/विधुर	
युवक	उदयपुर	39 (78.0)	11 (22.0)	–	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	40 (80.0)	10 (20.0)	–	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	35 (70.0)	15 (30.0)	–	**50 (100.0)**
युवतियां	उदयपुर	36 (72.0)	14 (28.0)	–	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	35 (70.0)	14 (28.0)	01 (2.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	38 (76.0)	10 (20.0)	02 (4.0)	**50 (100.0)**
योग		**223 (74.3)**	**74 (24.7)**	**03 (1.0)**	**300 (100.0)**

जनजातियों में विवाह की बाध्यता नहीं है कि कब विवाह करना आवश्यक है? यदि लड़का अथवा लड़की पढ़ाई में रूचि लेते हैं और पढ़ाई कर रहे हैं तो विवाह के लिए इनकी पढ़ाई के खत्म होने तक इंतजार किया जाता है और यदि लड़का अथवा लड़की पढ़ाई नहीं करते तो इनका विवाह कर दिया जाता है, लेकिन इनमें बाल विवाह नहीं होते।

इन क्षेत्रों के जनजाति समाज में विधवा एवं विधुरों की संख्या ना के बराबर है क्योंकि इनमें नातरा प्रथा पायी जाती है। स्त्री अथवा पुरूष की इच्छा हो और कोई उनके साथ जीवन–यापन करने को तैयार हो तो समाज के सहयोग से उनका नातरा करा दिया जाता है जिसमें राजी खुशी स्त्री और पुरूष एक दूसरे को पति–पत्नी के रूप में स्वीकार कर लेते है।

परिवार समाज की सबसे छोटी ईकाई है। प्रत्येक समाज मे परिवार का एक स्वरूप पाया जाता है जिसके आधार पर यह निश्चित किया जाता है कि उस परिवार के बच्चों व युवाओं का पालन किसके अनुरूप हुआ है और परिवार के सदस्यों की मानसिकता क्या हो सकती है। संयुक्त परिवारों में तीन या अधिक पीढ़ियां एक साथ रहती हैं जबकि एकाकी परिवार में इससे कम। सामान्यतः यह माना जाता है कि जनजाति समाज में लड़कों का विवाह होते ही उन्हें अलग झोपड़ा रहने के लिये दिया जाता है। लेकिन अध्ययन में कईं ऐसे परिवार सम्मिलित हुए हैं जिनमें तीन पीढ़ियां साथ निवास करती हैं और इससे सम्बन्धित तथ्य सारणी संख्या 3.6 में प्रस्तुत है। सारणी संख्या 3.6 से यही पता चलता है कि उत्तरदाताओं के परिवार का स्वरूपकैसा है ?

सारणी 3.6
युवाओं के परिवार का स्वरूप

अध्ययन क्षेत्र	युवक		योग	युवतियां		योग	कुल योग		योग
	संयुक्त	एकाकी		संयुक्त	एकाकी		संयुक्त	एकाकी	
उदयपुर	17 (34.0)	33 (66.0)	**50 (100.0)**	27 (54.0)	23 (46.0)	**50 (100.0)**	44 (44.0)	56 (56.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	21 (42.0)	29 (58.0)	**50 (100.0)**	25 (50.0)	25 (50.0)	**50 (100.0)**	46 (46.0)	54 (54.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	14 (28.0)	36 (72.0)	**50 (100.0)**	31 (62.0)	19 (38.0)	**50 (100.0)**	45 (45.0)	55 (55.0)	**100 (33.4)**

योग	52 (34.7)	98 (65.3)	150 (100.0)	83 (55.3)	67 (44.7)	150 (100.0)	135 (45.0)	165 (55.0)	300 (100.0)

उदयपुर के चयनित 30 युवक उत्तरदाताओं में से 34 प्रतिशत युवक संयुक्त परिवार में रहते हैं तथा 66 प्रतिशत एकाकी परिवार में निवासरत हैं। वहीं 50 युवतियों में से 54 प्रतिशत संयुक्त परिवार तथा 46 प्रतिशत एकाकी परिवार में रहती हैं। डूंगरपुर के 50 युवकों में से 42 प्रतिशत संयुक्त परिवार में तथा 58 प्रतिशत एकाकी परिवार में रहते हैं। इसी क्षेत्र की 50 युवतियों मे से 50 प्रतिशत संयुक्त तथा 50 प्रतिशत एकाकी मे निवास करती हैं।

इसी प्रकार बांसवाड़ा की बात की जाए तो 50 युवक उत्तरदाताओं में से 28 प्रतिशत संयुक्त तथा 72 प्रतिशत एकाकी परिवार में रहते हैं। वहीं 50 युवतियों में से 62 प्रतिशत संयुक्त तथा 38 प्रतिशत एकाकी परिवार में रहती हैं।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि जनजाति समाज का अधिकांश युवा एकाकी परिवार में रहता है। तीनों ही जिलों के सर्वाधिक 55 प्रतिशत उत्तरदाता एकाकी परिवार में रहते हैं। तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो सर्वाधिक 56 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का है जो एकाकी परिवार में रहता है तथा इसके बाद 55 प्रतिशत के साथ बांसवाड़ा दूसरे स्थान पर है। जबकि संयुक्त परिवार में सर्वाधिक 46 प्रतिशत युवा वर्ग डूंगरपुर का है। संयुक्त परिवार के स्थान पर एकाकी परिवार में रहने वालों की संख्या ज्यादा होने का एक प्रमुख कारण यह भी है कि जनजाति समाज में एक रीत चली आ रही है कि परिवार के बेटों की शादी होते ही कुछ समय में उसे अलग घर में रख दिया जाता है ताकि वे अपनी जिम्मेदारी समझे और उसे निभाना सीखें।

सारणी 3.7

युवाओं के परिवार की मासिक आय

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	मासिक आय				योग
		5 हजार से कम	10 से 25 हजार	25 से 50 हजार	50 हजार से अधिक	
युवक	उदयपुर	15 (30.0)	13 (26.0)	12 (24.0)	10 (20.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	22 (44.0)	10 (20.0)	04 (8.0)	14 (28.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	22 (44.0)	15 (30.0)	05 (10.0)	8 (16.0)	**50 (100.0)**
युवतियां	उदयपुर	13	09	11	17	**50**

		(26.0)	(18.0)	(22.0)	(34.0)	**(100.0)**
	डूंगरपुर	18 (36.0)	15 (30.0)	07 (14.0)	10 (20.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	14 (28.0)	12 (24.0)	10 (20.0)	14 (28.0)	**50 (100.0)**
योग		***104 (34.7)***	***74 (24.7)***	***49 (16.3)***	***73 (24.3)***	***300 (100.0)***

डूंगरपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 44 प्रतिशत के परिवार की मासिक आय 5 हजार से कम, 20 प्रतिशत की 10–25 हजार तथा 8 प्रतिशत की 25–50 हजार तक है। तथा 28 प्रतिशत युवकों के परिवार की मासिक आय 50 हजार से ऊपर से तक है। वहीं इस क्षेत्र की 50 युवतियों में से 36 प्रतिशत के परिवार की मासिक आय 5 हजार से कम, 30 प्रतिशत की 10–25 हजार, 14 प्रतिशत के परिवार की आय 25–50 हजार तक है तथा 20 प्रतिशत के परिवार की मासिक आय 50 हजार से ऊपर तक है।

इसी प्रकार बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 44 प्रतिशत युवकों के परिवार की मासिक आय 5 हजार से कम, 30 प्रतिशत की 10–25 हजार तथा 10 प्रतिशत की 25–50 हजार तक है और 16 प्रतिशत के परिवार की मासिक आय 50 हजार से ऊपर तक की है। वहीं युवतियों में 28 प्रतिशत के परिवार की मासिक आय 5 हजार से कम, 24 प्रतिशत की 10–25 हजार तथा 20 प्रतिशत युवतियों के परिवार की मासिक आय 25–50 हजार तक है तथा 28 प्रतिशत युवतियों के परिवार की मासिक आय 50 हजार से ऊपर तक है।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि चयनित जिलों के जनजाति समाज की आर्थिक स्थिति कमजोर है। तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो 5 हजार से कम की मासिक आय वाला युवा वर्ग का सर्वाधिक 40 प्रतिशत डूंगरपुर में है। 10–25 हजार वाला युवा वर्ग का सर्वाधिक 27 प्रतिशत बांसवाड़ा में है 25–50 हजार की मासिक आय वाला 23 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का है तथा सर्वाधिक 27 प्रतिशत युवा वर्ग भी उदयपुर का है जिसके परिवार की मासिक आय 50 हजार से ऊपरसे है। इस प्रकार स्पष्ट है कि उदयपुर के उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति अन्य जिलों से अच्छी है। रहन–सहन के ढ़ंग और तौर–तरीकों से हर लिहाज में उदयपुर का युवा वर्ग बहुत आगे है। उदयपुर के अधिकांश उत्तरदाता एकाकी परिवार में रहते हैं और इसी कारण इनकी जीवन–शैली उच्च वर्ग जैसी ही होती है।

युवाओं की सामाजिक स्थिति के अन्तर्गत उनसे जनजाति समाज में शिक्षा स्तर, स्त्रियों की स्थिति, स्त्री–पुरूष में असमानता आदि से सम्बन्धित जानकारी भी प्राप्त की गई जिनका विवरण आगे की सारणियों में दिया गया है।

सारणी 3.8 से चयनित जनजाति क्षेत्र के उत्तरदाताओं द्वारा इस क्षेत्र के जनजाति समाज में शिक्षा के स्तर का पता चलता है। उदयपुर जिले के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 40 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं का मानना है कि जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर निम्न है। 50 प्रतिशत युवक उत्तरदाता इस समाज में शिक्षा का स्तर मध्यम मानते हैं तथा केवल 10 प्रतिशत मानते हैं कि जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर उच्च हुआ है। वहीं दूसरी और युवतियों में 40 प्रतिशत युवतियां जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर निम्न मानती हैं तथा 60 प्रतिशत युवतियां मानती है कि जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर मध्यम है। युवतियों में एक भी उत्तरदाता ने जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर उच्च नहीं बताया।

डूंगरपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 48 प्रतिशत युवक उत्तरदाता जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर निम्न मानने हैं। 44 प्रतिशत मध्यम मानते हैं तथा 8 प्रतिशत युवक उच्च मानते हैं। वहीं दूसरी और 50 युवतियों में से 50 प्रतिशत युवतियां जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर निम्न मानती है। 44 प्रतिशत मध्यम मानती है तथा 6 प्रतिशत उच्च मानती हैं।

सारणी 3.8

युवाओं की दृष्टि में जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर

अध्ययन क्षेत्र	युवक			योग	युवतियां			योग	कुल योग			योग
	निम्न	मध्यम	उच्च		निम्न	मध्यम	उच्च		निम्न	मध्यम	उच्च	
उदयपुर	20 (40.0)	25 (50.0)	05 (10.0)	**50 (100.0)**	20 (40.0)	30 (60.0)	–	**50 (100.0)**	40 (40.0)	55 (50.0)	05 (5.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	24 (48.0)	22 (44.0)	04 (8.0)	**50 (100.0)**	25 (50.0)	22 (44.0)	03 (6.0)	**50 (100.0)**	49 (49.0)	44 (44.0)	07 (7.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	28 (56.0)	20 (40.0)	02 (4.0)	**50 (100.0)**	29 (58.0)	18 (36.0)	03 (6.0)	**50 (100.0)**	57 (57.0)	38 (38.0)	05 (5.0)	**100 (33.4)**
योग	**72 (48.0)**	**67 (44.7)**	**11 (3.7)**	**150 (50.0)**	**74 (49.3)**	**70 (46.7)**	**06 (4.0)**	**150 (50.0)**	**146 (48.7)**	**137 (45.7)**	**17 (5.6)**	**300 (100.0)**

बांसवाड़ा जिले में चयनित युवक उत्तरदाताओं में से 56 प्रतिशत के अनुसार जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर निम्न है। 40 प्रतिशत के अनुसार शिक्षा का स्तर मध्यम है और 4 प्रतिशत के अनुसार उच्च है। जबकि युवतियों में

58 प्रतिशत युवतियां जनजाति समाज में शिक्षा के स्तर को निम्न मानती हैं। 36 प्रतिशत मध्यम मानती हैं तथा 6 प्रतिशत युवतियां उच्च मानती हैं।

इस प्रकार प्रत्येक जिले में जनजाति समाज में शिक्षा के स्तर को उच्च मानने वाले उत्तरदाताओं का प्रतिशत काफी कम है।सर्वाधिक 7 प्रतिशत उत्तरदाता डूंगरपुर के हैं जो जनजाति समाज में शिक्षा के स्तर को उच्च मानते हैं। सर्वाधिक 55 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का है जिनके अनुसार जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर मध्यम है तथा सर्वाधिक 57 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ाका है जिसके अनुसार जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर निम्न है। सभी तीनों जिलों के 45.67 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जिनका मानना है कि जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर मध्यम है। लेकिन इनका मानना है कि जनजाति समाज में शिक्षा के प्रति जनजाति लोगों की मानसिकता बदल रही है।

किसी भी समाज की लगभग आधी जनसंख्या महिलाओं की होती है। महिला परिवार एवं समाज की धुरी है। अतः प्रत्येक समाज कि महिलाओं की तत्कालीन स्थिति को जान लेना आवश्यक होता है। इसी आधार पर उस समाज की विकसित होने की दिशा को निर्धारित किया जा सकता है।

सारणी 3.9

युवाओं के मत में जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति

अध्ययन क्षेत्र	युवक				युवतियां				कुल योग			
	अच्छी	ठीक	निम्न	योग	अच्छी	ठीक	निम्न	योग	अच्छी	ठीक	निम्न	योग
उदयपुर	07 (14.0)	25 (50.0)	18 (36.0)	**50 (100.0)**	08 (16.0)	30 (60.0)	12 (24.0)	**50 (100.0)**	15 (15.0)	55 (55.0)	30 (30.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	04 (8.0)	26 (52.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**	10 (20.0)	28 (56.0)	12 (24.0)	**50 (100.0)**	14 (14.0)	54 (54.0)	32 (32.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	06 (12.0)	28 (56.0)	16 (32.0)	**50 (100.0)**	09 (18.0)	31 (62.0)	10 (20.0)	**50 (100.0)**	15 (15.0)	59 (59.0)	26 (26.0)	**100 (33.4)**
योग	**17 (11.3)**	**79 (52.7)**	**54 (36.0)**	**150 (50.0)**	**27 (18.0)**	**89 (59.3)**	**34 (22.7)**	**150 (50.0)**	**44 (14.7)**	**168 (56.0)**	**88 (29.3)**	**300 (100.0)**

सारणी 3.9 में वर्णित आंकड़े दर्शाते हैं कि उदयपुर से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 50 प्रतिशत युवक उत्तरदाता मानते हैं कि जनजाति समाज में

स्त्रियों की स्थिति ठीक है। 36 प्रतिशत युवक उत्तरदाता मानते हैं कि इस समाज में स्त्रियों की स्थिति निम्न है जबकि केवल 14 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं का मानना है कि इनके समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी है। 50 युवतियों में से 60 प्रतिशत का मानना है कि जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति मध्यम अर्थात ठीक है तथा 24 प्रतिशत के अनुसार निम्न है। वहीं 16 प्रतिशत मानती हैं कि जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी है।डूंगरपुर से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 52 प्रतिशत जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति को ठीक मानते हैं। वहीं 40 प्रतिशत युवक निम्न मानते है। जबकि महज 8 प्रतिशत युवक मानते हैं कि जनजाति समाज में स्त्रियों कि स्थिति अच्छी है। वहीं युवतियों से जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति के बारे में पूछने पर 56 प्रतिशत के अनुसार स्त्रियों की स्थिति ठीक है। 24 प्रतिशत के अनुसार यह स्थिति अत्यन्त निम्न है तथा 20 प्रतिशत के अनुसार अच्छी है।

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं से भी इस सम्बन्ध में जानकारी ली गई जिसमें 56 प्रतिशत युवक उत्तरदाता मानते हैं कि जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति ठीक है। 32 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं के अनुसार स्थिति निम्न है तथा 12 प्रतिशत के अनुसार अच्छी है। वहीं युवतियों से इस सम्बन्ध में पूछने पर 62 प्रतिशत के अनुसार ठीक 20 प्रतिशत के अनुसार निम्न और केवल 18 प्रतिशत के अनुसार जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी है।

इस प्रकार तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो सर्वाधिक 59 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ाका है जिनके अनुसार जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति ठीक है। इनके अनुसार जनजाति समाज में स्त्री और पुरूष दोंनो की स्थिति समान है। पुरूषों के क्षेत्र में उनका वर्चस्व है तथा महिलाओं के क्षेत्र में महिलाओं का। जब घर के बाहर का काम हो या घर से बाहर के फैसले की बात हो तो पुरूषों की बात को महत्त्व दिया जाता है तथा जब बात घर के काम–काज या उससे सम्बन्धित हो तो महिलाओं को महत्त्व दिया जाता है कई मामलों में दोंनो की आपसी सहमति से भी फैसले होते हैं। उदयपुर क्षेत्र के 55 प्रतिशत उत्तरदाता भी यही मानते हैं तथा डूंगरपुर के 54 प्रतिशत युवा वर्ग का विचार भी यही है।

उदयपुर तथा बांसवाड़ा के 15–15 प्रतिशत युवा वर्ग के अनुसार वर्तमान में जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति काफी अच्छी हो गयी है। आज कई गांवो में महिलाओं ने सरपंच का पद संभाल रखा है। गांव के कई महत्त्वपूर्ण फैसले महिला सरपंच लेती है और उन फैसलों को स्वीकार भी किया जाता है।

वहीं दूसरी तरफ डूंगरपुर के 32 प्रतिशत युवा वर्ग के अनुसार जनजाति समाज में महिलाओं की स्थिति निम्न है। इनका मानना है कि जनजाति समाज की महिलाओं की स्थिति अन्य समाजों की अपेक्षा अत्यन्त निम्न है। इन युवाओं के अनुसार यद्यपि आज गांवो में कई महिलाओं के पास सरपंच का पद है। परन्तु इसके बाद भी वे इसका उपयोग ना के बराबर करती हैं। महिलाओं का केवल

नाम चलता है, पद का उपयोग तो सरपंच महिला का पति या घर का कोई अन्य पुरूष सदस्य ही करता है। उदयपुर का 30 प्रतिशत युवा वर्ग तथा बांसवाड़ाके 26 प्रतिशत युवा वर्ग का भी यही मानना है।

इस प्रकार यदि सारणी का अवलोकन किया जाय तो तीनों ही जिलों के सर्वाधिक 56 प्रतिशत उत्तरदाता जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति को ठीक मानते हैं अर्थात, इनके अनुसार इस समाज में स्त्रियों की स्थिति ना तो बहुत बुरी है और ना ही बहुत अच्छी।

स्त्री–पुरूष में असमानता

यह कहा जाता है कि जनजाति समाज में स्त्री व पुरूष वर्ग के मध्य असमानता नहीं पायी जाती है, तथा कोई भेदभाव भी नहीं होता। परन्तु अध्ययन के अन्तर्गत कुछ युवाओं ने इस बात को स्वीकार किया की जनजाति समाज में कहीं–कहीं कुछ सीमा तक स्त्री–पुरूष असमानता दिखाई देती है। यद्यपि यह सामान्य ही हैं।

तीनों जिलों के 300 उत्तरदाताओं में से 32 प्रतिशत कहते हैं कि जनजाति समाज में शिक्षा के क्षेत्र में कुछ सीमा तक असमानता पायी जाती है। इनके अनुसार वैसे तो इस समाज में लड़का–लड़की दोनों को शिक्षा दी जाती है परन्तु यदि परिवार की आर्थिक स्थिति कमज़ोर है, और शिक्षा, उच्च शिक्षा अथवा किसी विशेष शिक्षा हेतु बाहर भेजने की बात हो तो प्राथमिकता लड़के को दी जाती है। युवा उत्तरदाताओं अनुसार यह भी एक प्रकार की असमानता ही है।

इसी प्रकार 300 उत्तरदाताओं में से 51 प्रतिशत युवाओं के अनुसार सामाजिक क्षेत्र में भी स्त्री–पुरूष के मध्य कुछ–कुछ असमानता दिखाई देती है जैसे–सामाजिक क्षेत्रों में किसी भी प्रकार के मुद्दों पर पुरूषों के विचारों को प्राथमिकता दी जाती है। कईं स्थानों पर सरपंच का पद स्त्रियों के पास है परन्तु, उसका उपयोग उन स्त्रियों द्वारा नहीं अपितु उनके परिवार के किसी पुरूष सदस्य द्वारा किया जाता है और हर प्रकार के विवादों व मसलों पर उन्हीं के द्वारा फैंसला लिया जाता है।

अतः स्पष्ट है कि यह तो नहीं कहा जा सकता की जनजाति समाज में स्त्री–पुरूष असमानता पायी जाती है, परन्तु यह कहा जा सकता है कि इनके बीच कुछ भेदभाव अवश्य हैं।

जनजाति समाज में पायी जाने वाली स्त्री–पुरूष के बीच की असमानता का क्या प्रभाव पड़ता है ? क्या इस तरह के भेंदभाव पर स्त्रियांआवाज उठाती हैं, यहीं जानने हेतु उत्तरदाताओं से इस संबंध में बात की गई।

सारणी 3.10

भेदभाव के विरूद्ध स्त्रियों का विरोध

अध्ययन क्षेत्र	युवक		योग	युवतियां		योग	कुल योग		योग
	हां	नहीं		हां	नहीं		हां	नहीं	
उदयपुर	18 (36.0)	32 (64.0)	**50 (100.0)**	15 (30.0)	35 (70.0)	**50 (100.0)**	33 (33.0)	67 (67.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	10 (20.0)	40 (80.0)	**50 (100.0)**	16 (32.0)	34 (68.0)	**50 (100.0)**	26 (26.0)	74 (74.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	12 (24.0)	38 (76.0)	**50 (100.0)**	11 (22.0)	39 (78.0)	**50 (100.0)**	23 (23.0)	77 (77.0)	**100 (33.4)**
योग	**40 (26.67)**	**110 (73.33)**	**150 (50.0)**	**42 (28.0)**	**108 (72.0)**	**150 (50.0)**	**82 (27.3)**	**218 (72.7)**	**300 (100.0)**

उदयपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं से इस बारें में पूछने पर 36 प्रतिशत ने कहा कि स्त्रियां असमानता के विरूद्ध आवाज उठाती हैं जबकि 64 प्रतिशत ने इस बात से इन्कार किया वहीं दूसरी और 50 युवतियों में से 30 प्रतिशत ने इस बात को स्वीकार किया तथा 70 प्रतिशत ने मना कर दिया। डूंगरपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 20 प्रतिशत के अनुसार स्त्रियां आवाज उठाती है जबकि 80 प्रतिशत ना कहते है। इसी क्षेत्र की 50 युवतियों में से 32 प्रतिशत युवतियां इस बात से सहमत है जबकि 68 प्रतिशत असहमत है।

बांसवाड़ा के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं से भी इस संबंध में बात करने पर 24 प्रतिशत ने इस बात को स्वीकार किया तथा 76 प्रतिशत ने अस्वीकार किया वहीं 50 युवतियों में से 22 प्रतिशत इस संबंध में हां कहती हैं तथा 78 प्रतिशत मना करती है।

उपरोक्त विवरण तथा सारणी से स्पष्ट होता है कि तीनों ही जिलों में सर्वाधिक 72 प्रतिशत युवा वर्ग के अनुसार स्त्री–पुरूष में भेदभाव होने अथवा करने पर स्त्रीयों द्वारा किसी प्रकार का विरोध नहीं किया जाता है। जनजाति समाज में स्त्री–पुरूष में असमानता के मुद्दे पर बहुत कम बात होती है। सर्वाधिक 33 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का है जिनके कहे अनुसार स्त्री–पुरूष असमानता के संबंध में स्त्रियां आवाज उठाती हैं परन्तु यह आवाज उठाना या विरोध करना भी ना के बराबर है क्योंकि यह विरोध इतने छोटे स्तर पर होता है जिसका कोई औचित्य नहीं है। भेदभाव होने पर लड़किया अथवा स्त्रियां केवल अपने घर तक ही विरोध को सीमित रखती हैं। जैसे माता–पिता से शिकायत करना, जिद करना अथवा सवाल पूछने की, आखिर ऐसा क्यों ? इसके अतिरिक्त विरोध का कोई उच्च माध्यम या स्तर नहीं होता। यहां तक कि स्त्रियां कभी–कभार घरेलू हिंसा

का शिकार भी होती हैं। यद्यपि जनजाति समाज में कई जागरूक महिलाएं भी हैं जो हिंसा या मारपीट का शिकार होने पर पुलिस का सहारा लेती हैं और उनका कहना है कि पुलिस का व्यवहार सकरात्मक होता है तथा पुलिस उनकी पूरी मदद करती हैं।

वहीं दूसरी और इस संबंध में इन्कार करने वाले उत्तरदाताओं का सर्वाधिक 77 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ा का है इनका मानना है कि जनजाति समाज में स्त्रियों ने इस असमानता को बचपन से ही स्वीकार कर लिया होता है। विरोध करे भी तो किससे ? अपने ही परिवार से, पिता से या भाई से अथवा पति से। बचपन से ही लड़किया अपने छोटे भाई–बहनों की देखभाल में लग जाती है फिर मां का हाथ भी बंटाना होता है। किस्मत से यदि मां नातरे चली जाती है तो घर का काम और भाई–बहन दोंनो को सम्भालना उसका बचपन तो वैसे ही खत्म हो जाता है। फिर बड़े होने पर वैवाहिक जीवन जिसमें पति की देखभाल करना और घर के काम–काज करना। यदि पति को नशे की आदत है तो समस्याएं बढ़ जाती हैं। अब क्या शिकायत करे और किससे करें ? ऐसी अवस्था में कई बार स्त्रियांएक ही कदम उठाती है अपने शराबी पति को छोड़कर किसी और के साथ नातरे चली जाती है और फिर एक नई कहानी शुरू हो जाती है।

सारणी 3.11

स्त्री–पुरूष में अधिकारों के प्रति जागरूकता

अध्ययन क्षेत्र	युवक		योग	युवतियां		योग	कुल योग		योग
	स्त्री	पुरूष		स्त्री	पुरूष		स्त्री	पुरूष	
उदयपुर	20 (40.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	23 (46.0)	27 (54.0)	**50 (100.0)**	43 (43.0)	57 (57.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	36 (72.0)	14 (28.0)	**50 (100.0)**	15 (30.0)	35 (70.0)	**50 (100.0)**	51 (51.0)	49 (49.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	28 (56.0)	22 (44.0)	**50 (100.0)**	29 (58.0)	21 (42.0)	**50 (100.0)**	57 (57.0)	43 (43.0)	**100 (33.4)**
योग	**84 (56.0)**	**66 (44.0)**	**150 (100.0)**	**67 (44.7)**	**83 (55.3)**	**150 (100.0)**	**151 (50.3)**	**149 (49.7)**	**300 (100.0)**

जनजाति समाज में स्त्री एवं पुरूष में अपने अधिकारों के प्रति कौन अधिक जागरूक है ? उपरोक्त सारणी से इसी संबंध में जानकारी प्राप्त होती है।

उदयपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 40 प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि जनजाति समाज की स्त्रियांपुरूषों की तुलना में अधिक जागरूक है, जबकि 60 प्रतिशत के अनुसार पुरूष अधिक जानकारी रखते है। वहीं दूसरी और यदि युवतियों की बात की जाए तो 46 प्रतिशत के अनुसार स्त्रियांअधिक जागरूक है तथा 54 प्रतिशत के अनुसार पुरूष अधिक जागरूक है।

इसी प्रकार डूंगरपुर से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 72 प्रतिशत ने स्त्री को तथा 28 प्रतिशत युवकों ने पुरूष को अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक बताया है। ऐसे ही चयनित 50 युवतियों में से 30 प्रतिशत युवतियों ने स्त्री को तथा 70 प्रतिशत ने पुरूष को अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक बताया।

बांसवाड़ा से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 56 प्रतिशत के अनुसार जनजाति समाज में स्त्रियां अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक है तथा 44 प्रतिशत के अनुसार पुरूष अधिक जागरूक है। जबकि 50 युवतियों से इस संबंध में बात करने पर 58 प्रतिशत के अनुसार स्त्रियांतथा 42 प्रतिशत के अनुसार पुरूष अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक है।

इस प्रकार तीनों ही जिलों में सर्वाधिक उत्तरदाता मानते हैं कि स्त्रियां अपने अधिकारों के प्रति पुरूषों की तुलना में अधिक जागरूक हैं। यदि तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो सर्वाधिक 57 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ाका है जिनके अनुसार जनजाति समाज में स्त्री–पुरूष में स्त्रियांअपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक है। वहीं दूसरी और सर्वाधिक 57 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का भी है जिसके अनुसार स्त्री–पुरूष की तुलना में पुरूष अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक है। अतः उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि स्त्री–पुरूष में से किसी एक को भी पूर्णतः बहुमत नहीं मिल पाया है। स्त्रियों का पक्ष लेने वाले युवा वर्ग के अनुसार जनजाति समाज में वर्तमान में लड़कों की अपेक्षा लड़कियां अधिक पढ़ने लगी है। उच्च शिक्षा में भी लड़कों की अपेक्षा लड़कियां अधिक है और इसी कारण वे अपने अधिकारों से भली–भांती परिचित है। जबकि लड़के कम पढ़ाई करके मजदूरी में लग जाते है जिस कारण वे अपने अधिकारों को ज्यादा नहीं जान पाते। इसी प्रकार पुरूषों का पक्ष लेने वालों के अनुसार स्त्रियांघर में रहती है घर के काम काजों में उनका समय व्यतीत होता है, जबकि पुरूष घर से बाहर रहते है बाहर के वातावरण को जानते है, समझते है, अधिक लोगों से मिलते है। इसलिये पुरूष स्त्रियों की अपेक्षा अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक है।

सारांश

प्रस्तुत अध्याय में उत्तरदाताओं से संबंधित विभिन्न तथ्यों के विश्लेषण के उपरान्त निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि– तीनों ही क्षेत्रों के उत्तरदाताओं की आयु औरशैक्षिक स्तर सेसम्बन्धित आंकड़ों के आधार पर देखा जाए तो उदयपुर

का युवा वर्ग उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अन्य जिलों से आगे है तथा डूंगरपुर का युवा वर्ग उच्च शिक्षा में अन्य दो जिलों से पीछे है।

तीनो जिलों के अधिकांश उत्तरदाता विवाहित हैं जिनमें उदयपुर व डूंगरपुर के उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है। 50 हजार से ऊपरकी मासिक आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या उदयपुर में अधिक है।तीनो जिलों के सर्वाधिक उत्तरदाताओं के अनुसार जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर निम्न है। जिनमें बांसवाड़ाके उत्तरदाताओं की संख्या अधिक है। जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति के आधार पर तुलनात्मक रूप से सर्वाधिक 59 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ाके हैं जिनके अनुसार इस समाज में स्त्रियो की स्थिति ठीक अर्थात मध्यम है।

जनजाति युवा उत्तरदाताओं का कहना है कि जनजाति समाज में स्त्री–पुरूष भेदभाव को लेकर जनजाति स्त्रियां आवाज भी नहीं उठाती। इस बात को बांसवाड़ाकेज्यादातर युवा स्वीकार करते हैं। बांसवाड़ा के 57 प्रतिशत युवा उत्तरदाताओं का कहना है कि अधिकारों के प्रति जागरूकता के सम्बन्ध में स्त्रियांपुरूषों से आगे हैं।इसके विपरीत उदयपुर के 57 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार पुरूष स्त्रियों की अपेक्षा अधिक जागरूक हैं। तीनों ही जिलों में सर्वाधिक उत्तरदाता मानते हैं कि स्त्रियां अपने अधिकारों के प्रति पुरूषों की तुलना में अधिक जागरूक हैं।

निष्कर्षतः सामाजिक, आर्थिक स्तर पर तीनों जिलों में उदयपुर की स्थिति अन्य जिलों की अपेक्षा काफी अच्छी है। उदयपुर जिले का जनजाति युवा अन्य जिले के उत्तरदाताओं की अपेक्षा सामाजिक और आर्थिक रूप से मजबूत है।अध्ययन में चयनित उत्तरदाताओं की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि से स्पृष्ट है कि उत्तरदाता विभिन्न स्तृतों के हैं। शिक्षित और अशिक्षित दोनों ही प्रकार के युवा, उत्तरदाताओं में सम्मिलित हैं। जनजाति क्षेत्र के युवाओं का रूझान शिक्षा प्राप्ति में बढ़ा हैं। पूर्व की तुलना में आय में भी वृद्धी हो रही है लेकिन अभी भी ग्रामीण क्षेत्र में इनकी आर्थिक स्थिति निम्न है। ज्ञान और विभिन्न प्रकार के परिवेशों का समन्वय शिक्षित और अशिक्षितउत्तरदाताओं से सम्भव है। अन्य सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमियां इन स्तृंतों को विस्तार देती हैं। यही विस्तार दक्षिणी राजस्थान में जनजाति समाज के मानव अधिकारों की झलक दिखाने में समर्थ होगा। मानव अधिकारों में विभिन्नता और असमानता के प्रश्नों को भी इन्हीं संदर्भों से प्राप्त किया जा सकता है।

❑❑❑

4

जनजाति समाज में मानवाधिकार के मुद्दे और जागरूकता

पिछले अध्याय में उत्तरदाताओं की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि का वर्णन किया गया। साथ ही जनजाति समाज की सामाजिक पृष्ठभूमि में उत्तरदाताओं की आयु, शिक्षा, मूल निवास, परिवार का स्वरूप और भी हैं आदि का विश्लेषण किया गया हैतथा आर्थिक पृष्ठभूमि में उत्तरदाताओं का व्यवसाय, परिवार की मासिक आय आदि से संबंधित तथ्यों व आंकड़ों को सम्मिलित किया गया।

प्रस्तुत अध्याय जनजाति समाज में मानवाधिकार के मुद्दे एवं जागरूकता से सम्बन्धित है। मध्यकालीन समाज में मनुष्य मुख्यतः मानव कर्त्तव्यों की छाया में जीता था। आज का आदमी मुख्यतः मानवाधिकारों की छाया में जीता है। अधिकारों की यह फैलती हुई चेतना मानव स्वतन्त्रता का एक नया और रोमांचक अध्याय है। किसी भी देश या समाज के सभ्य और सुसंस्कृत होने की कसौटी अब यह नहीं रही कि वह कितना अमीर या बलशाली है बल्कि यह है कि वहां मानवाधिकारों का कितना सम्मान होता है तथा वहां के लोग विभिन्न अधिकारों को लेकर कितना जागरूक होते हैं। जहां तक जनजाति समाज की बात हैं तो प्रारम्भ से ही यह देखा और सुना गया हैं कि यह समाज जंगलों तथा उनकी प्राचीन संस्कृति से जुड़ा हुआ है। इनकी कुछ प्रथाएं और परम्पराएं इसी संस्कृति का अंग है। इन्हीं के कारण कई बार जनजाति सदस्यों के अधिकारों का हनन् भी हो जाता हैं। जनजाति समाज के सदस्य एवं इसका युवा वर्ग इन सब को लेकर क्या सोचता हैं ? कितना जानता हैं? अपने अधिकारों व मानवाधिकारों से कितना परिचित हैं ? यही जानकारी प्राप्त करने हेतु प्रस्तुत अनुसंधान किया गया है। इस

अध्याय में मानवाधिकार जागरूकता के संबंध में उत्तरदाताओं के विचारों को सारणियों में प्रस्तुत आंकड़ों द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है।

संविधान बनने के साथ ही संविधान में मूल अधिकारों को जोड़ा गया। सभी व्यक्तियों को इनका उपभोग करने का अधिकार है। भारतीय संविधान द्वारा भारतीय नागरिकों को सात मूल अधिकार प्रदान किए गए थे, किन्तु 44वें संवैधानिक (1979) संशोधन द्वारा सम्पत्ति के अधिकार को मूल अधिकार के रूप में समाप्त कर दिया गया। इस प्रकार संविधान में छः मूल अधिकारों का वर्णन है परन्तु क्या इन छः अधिकारों की जानकारी सभी को है? इसी जानकारी हेतु चयनित क्षेत्र के सभी उत्तरदाताओं से उनके मूल अधिकारों के बारें में पूछा गया। प्रत्येक उत्तरदाता को यह जानकारी है कि संविधान ने कुल छः मूल अधिकार नागरिकों के लिए बनाये हैं, परन्तु इन सभी छः मूल अधिकारों की जानकारी की स्थिति सारणी 4.1 से चलती है।

सारणी 4.1

युवाओं को मूल अधिकारों की जानकारी है?

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	मूल अधिकार					
		स्मानता का अधिकार	स्वतन्त्रता का अधिकार	शोषण वे विरूद्ध अधिकार	धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार	शिक्षा व संस्कृतिका अधिकार	संवैधानिक उपचारों का अधिकार
युवक	उदयपुर	50 (100.0)	50 (100.0)	35 (70.0)	30 (60.0)	40 (80.0)	10 (20.0)
	डूंगरपुर	50 (100.0)	50 (100.0)	19 (38.0)	20 (40.0)	38 (76.0)	07 (14.0)
	बांसवाड़ा	50 (100.0)	50 (100.0)	25 (50.0)	22 (44.0)	32 (64.0)	08 (16.0)
युवतियां	उदयपुर	50 (100.0)	50 (100.0)	14 (28.0)	20 (40.0)	21 (42.0)	12 (24.0)
	डूंगरपुर	50 (100.0)	50 (100.0)	22 (44.0)	12 (44.0)	40 (80.0)	06 (12.0)
	बांसवाड़ा	50 (100.0)	50 (100.0)	20 (40.0)	20 (40.0)	25 (50.0)	07 (14.0)
योग		**300 (100.0)**	**300 (100.0)**	**135 (45.0)**	**124 (41.3)**	**196 (65.3)**	**50 (16.7)**

उदयपुर क्षेत्र के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से सभी युवक प्रथम व द्वितीय अधिकार अर्थात समानता व स्वतन्त्रता के अधिकार के बारे में जानते हैं। शोषण के विरूद्ध अधिकार कीजानकारी 70 प्रतिशत युवक रखते हैं। धार्मिक स्वतन्त्रता के अधिकार को 60 प्रतिशत युवक जानते है तथा 80 प्रतिशत युवक संस्कृति व शिक्षा के अधिकार तथा महज 20 प्रतिशत युवक संवैधानिक उपचारों के अधिकार से अवगत हैं। इसी प्रकार उदयपुर से चयनित 50 उत्तरदाता युवतियां समानता एवं स्वतन्त्रता से पूर्णतः परिचित हैं लेकिन शोषण के विरूद्ध अधिकार से 28 प्रतिशत युवतियां परिचित हैं। धार्मिक स्वतन्त्रता के अधिकार को 40 प्रतिशत युवतियां जानती हैं। 42 प्रतिशत युवतियां संस्कृति व शिक्षा के अधिकार को तथा 24 प्रतिशत युवतियां संवैधानिक उपचारों के अधिकारों से परिचित हैं।

डूंगरपुर क्षेत्र के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से शोषण के विरूद्ध अधिकार को 30 प्रतिशत, धार्मिक स्वतन्त्रता के अधिकार को 40 प्रतिशत, संस्कृति व शिक्षा के अधिकार को 76 प्रतिशत, तथा महज 14 प्रतिशत संवैधानिक उपचारों के अधिकार को जानते है, वहीं दूसरी और इसी क्षेत्र की 50 युवतियों में से 44 प्रतिशत युवतियां शोषण के विरूद्ध अधिकार को, 24 प्रतिशत धार्मिक, स्वतन्त्रता के अधिकार, 80 प्रतिशत संस्कृति व शिक्षा के अधिकार को तथा 12 प्रतिशत युवतियां संवैधानिक उपचारों के अधिकार को जानती है।

इसी प्रकार बांसवाड़ा क्षेत्र के 50 युवकों में से शोषण के विरूद्ध अधिकार की जानकारी 50 प्रतिशत, 44 प्रतिशत धार्मिक स्वतन्त्रता के अधिकार, 64 प्रतिशत शिक्षा व संस्कृति के अधिकार तथा 16 प्रतिशत युवक संवैधानिक उपचारों के अधिकार से अवगत है। वहीं युवतियों में 40 प्रतिशत शोषण के विरूद्ध अधिकार, 38 प्रतिशत धार्मिक स्वतन्त्रता के अधिकार, 50 प्रतिशत संस्कृति व शिक्षा के अधिकार तथा केवल 14 प्रतिशत युवतियां संवैधानिक उपचारों के अधिकार को जानती है।

इस प्रकार उक्त सारणी से प्रथम दृष्टया ही यह स्पष्ट हो जाता है कि संविधान में वर्णित छः मूल अधिकारों में से प्रथम दो अधिकार समानता व स्वतन्त्रता के अधिकार की जानकारी सभी 300 उत्तरदाताओं को है। यद्यपि इनका पूर्णतया अर्थ क्या है? इस बारे में वे कुछ नहीं जानते। शेष 4 अधिकारों की जानकारी रखने वालों की संख्या काफी कम है। जिनको याद है वे या तो अभी पढ़ रहे हैं अथवा उनका अध्ययन विषय राजनीतिक विज्ञान से संबंधित है। उनकी संख्या भी काफी कम है। कई उत्तरदाताओं का मानना है कि उनके अध्ययन विषय तो अर्थशास्त्र या विज्ञान आदि हैं। अतः हमें मूल अधिकारों की जानकारी कैसे हो सकती है ? जो सर्वथा उपयुक्त नहीं है।

यह अत्यन्त विचारणीय विषय है कि मूल अधिकारों की जानकारी के लिए भी क्या अध्ययन विषय निर्धारण, जिम्मेदार हो सकता है। जिन उत्तरदाताओं ने

मूल अधिकारों की जानकारी दी है वे भी सही–सही मूल अधिकार नहीं बता पाए, उन्होंने जो अधिकार बताए वे इन छः मूल अधिकारों के अर्न्तगत निहित है। इसी आधार पर पता लगाया गया कि किन–किन अधिकारों के प्रति यह समाज जागरूक है। स्पष्टतः कहा जा सकता है कि जनजाति युवा यदि अपने मूल अधिकार को नहीं जानते। अपने पर हुए अत्याचारों को कैसे रोक पाएंगे ? बिना जागरूकता के जनजाति समाज अपने आप को शोषण मुक्त नहीं कर सकता।

समानता का अधिकार

समानता को लोकतांत्रिक व्यवस्था की आधारशिला माना जाता है बिना समानता के लोकतांत्रिक व्यवस्था की कल्पना भी नहीं की जा सकती। सामान्य अर्थ में समानता से आशय यह निकाला जाता है कि समाज में सभी व्यक्तियों को समान अवसर समान स्तर पर प्राप्त हो तथा उनके साथ समान व्यवहार किया जाये। लेकिन यह समानता का वास्तविक अर्थ नहीं है। समानता का वास्तविक अर्थ है एक जैसे लोगों के साथ समान व्यवहार किया जाये। प्रत्येक व्यक्ति को अपना विकास करने के लिए समान अवसर प्राप्त हो। मानवीय गरिमा तथा अधिकारों की दृष्टि से भी समान है। यह जान लेना आवश्यक है कि क्या अनुसंधान हेतु चयनित क्षेत्र के उत्तरदाता समानता के वास्तविक अर्थ को जानते है? समानता के अधिकार को युवा वर्ग किस अर्थ में समझता है।

जनजाति समाज के युवा वर्ग से संविधान में वर्णित मूल अधिकारों की जानकारी ली गई जिसमें सभी 100 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने समानता के अधिकार के बारे में बताया परन्तु मूल अधिकारों में समाहित इस समानता के अधिकार के बारें में जनजाति युवा क्या जानता है ? तथा कितना जानता है ? समानता के अधिकार को किस अर्थ में समझता है ? सभी 300 उत्तरदाताओं ने इस अधिकार के बारे में यही बताया कि समानता के अधिकार का अर्थ है सभी समान है तथा सभी को समान अधिकार प्राप्त है। इसके अतिरिक्त ये समानता के अधिकार के बारें में कुछ नहीं जानते। समानता के अधिकार में कौन से अधिकार आते है ? अथवा किन–किन मामलों में समानता दी गई है। इसका कोई उल्लेख नहीं किया गया है। संविधान में वर्णित समानता का अधिकार प्रत्येक मनुष्य को चाहे वह किसी भी जाति, धर्म अथवा वंश का हो समान समझता है भारत के संविधान के अनुसार राज्य के सभी नागरिकों को कानून का संरक्षण समान रूप से प्राप्त होगा। दूसरे शब्दों में, समता के अधिकारों में यह बात निहित है कि जाति, लिंग, जन्म, स्थान, वर्ण अथवा पंथ के आधार पर राज्य नागरिकों में भेदभाव नहीं करेगा। समता के अधिकार के अन्तर्गत भारत में अस्पृश्यता का उन्मूलन कर दिया गया है। परन्तु समानता के इस अर्थ को कोई निदर्शित युवा नहीं जानता। जनजाति समाज का युवा वर्ग वर्तमान में शिक्षा से तथा उच्च शिक्षा से जुड़ रहा है। परन्तु यदि समानता के अधिकार को वास्तविकता की स्थिति में लाना है तो इन युवाओं को विभिन्न कानूनों, मूल अधिकारों व विभिन्न विकास योजनाओं को सही अर्थो में समझना होगा जहां तक इनकी पहुंच नहीं है।

जनजातियों से सम्बन्धित विशेषाधिकारों की जानकारी

संविधन में जनजातियों के लिए कई विशेषाधिकारों की व्यवस्था की गई है जैसे– पंचायती राज तथा स्थानीय स्वशासन में प्रभावपूर्ण आरक्षण, निःशुल्क शिक्षा, उच्च शिक्षा प्राप्त करने पर छात्रवृति, सरकारी नौकरियों में स्थान सुरक्षित आदि कई व्यवस्थाएं हैं, लेकिन क्या जनजाति युवा वर्ग इसकी जानकारी रखता है। इससे सम्बन्धित वर्णन निम्न प्रकार से दिया गया है।

विशेषाधिकारों के अन्तर्गत ये उत्तरदाता कई विशेषाधिकारों के बारे में जानते हैं जिसमें विशेषकर छात्रवृत्ति, आवास सुविधा, निःशुल्क शिक्षा, कोचिंग, स्कूटी आदि की सुविधाएं हैं। इनमें से कईं विशेषाधिकारों का लाभ इस समाज को आसानी से मिल जाता है। जैसे छात्रावासों एवं आवासीय विद्यालयों में रहने की सुविधा, छात्रावासों एवं आवासीय विद्यालयों में रह रहे छात्र–छात्राओं को मैस भत्ता। वे यह भी जानते हैं कि यह भत्ता अप्रेल 2013 से 1,250 से बढ़ाकर 1,750 रूपये प्रतिमाह किया गया है। 10वीं एवं 12वीं के बच्चों को 75 हजार एवं एक लाख तक की पुरस्कार राशी प्रदान की जाती है आदि। कईं युवा उत्तरदाता विशेषाधिकार शब्द से थोड़े अपरिचित लगे परन्तु जब उन्हें स्पष्ट किया गया कि विशेषाधिकार शब्द क्या है तो वे असानी से बताने लगे। इसके विपरीत कई लोग जो कम पढ़े–लिखे हैं अथवा अनपढ़ हैं उनसे जब विशेषाधिकारों के बारे में पूछा गया तो वे केवल एक शब्द जानते हैं–आरक्षण। जिसका सही–सही अर्थ तो इन्हें नहीं पता पर इसके बारे में इतना जानते हैं कि यह इनके समाज को प्राप्त अधिकार है जो इनके समाज को मिल जाए तो इन्हें नौकरी मिल सकती है।

सारणी 4.2

अत्याचारों का निवारण अधिनियम 1989 की जानकारी

अध्ययन क्षेत्र	युवक			योग	युवतियां			योग	कुल योग			योग
	पूर्ण	कीमित	अनभिज्ञ		पूर्ण	कीमित	अनभिज्ञ		पूर्ण	कीमित	अनभिज्ञ	
उदयपुर	12 (24.0)	16 (32.0)	22 (44.0)	**50 (100.0)**	08 (16.0)	14 (28.0)	28 (56.0)	**50 (100.0)**	20 (20.0)	30 (30.0)	50 (50.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	15 (30.0)	05 (10.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	09 (18.0)	20 (40.0)	21 (42.0)	**50 (100.0)**	24 (24.0)	25 (25.0)	51 (51.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	17 (34.0)	09 (18.0)	24 (48.0)	**50 (100.0)**	10 (20.0)	25 (50.0)	15 (30.0)	**50 (100.0)**	27 (27.0)	34 (34.0)	39 (39.0)	**100 (33.4)**
योग	**44 (29.3)**	**30 (20.0)**	**76 (50.7)**	**150 (50.0)**	**27 (18.0)**	**59 (39.3)**	**64 (42.7)**	**150 (50.0)**	**71 (23.7)**	**89 (29.7)**	**140 (46.7)**	**300 (100.0)**

जनजाति समाज को अन्य वर्गों के समकक्ष रखने तथा उन पर होने वाले अत्याचारों की रोकथाम के लिए 1989 में एक और प्रभावी कानून ''अनुसूचित जाति/जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम''पारित किया गया। अधिनियम की धारा 3(1) के तहत कुछ कार्यों यथा अनुसूचित जाति/जनजाति के किसी व्यक्ति को किसी अखाद्य या घृणाजनक पदार्थ खाने–पीने को विवश करना, बेगार लेना या बंधुआ मजदूरी के लिये विवश करना, इस समाज के किसी सदस्य के स्वामित्व की भूमि को सदोश रूप से अधिभोग में लेना या उस पर खेती करना, उसकी भूमि पर कब्जा करना, इस समाज की किसी महिला सदस्य का अनादर करना, लज्जा भंग करना अथवा उसका लैंगिक शोषण करना आदि को दण्डनीय घोषित किया गया है। इसमें अग्रिम जमानत की व्यवस्था भी नहीं है। इन अपराधों में राजीनामा भी नहीं किया जा सकता। इस अधिनियम द्वारा इस वर्ग को गरिमा एवं सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अवसर उपलब्ध हुआ है। परन्तु क्या जनजाति युवा वर्ग इस अधिनियम की जानकारी रखता है ? इस सम्बन्ध में सारणी 4.2 एवं आरेख 4.2 से जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि इस अधिनियम की जानकारी रखने वालों की संख्या जानकारी न रखने वाले उत्तरदाताओं से काफी कम है। तुलनात्मक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 51 प्रतिशत उत्तरदाता डूंगरपुर के हैं जो इस अधिनियम से सर्वथा अपरिचित हैं इसके पश्चात् 50 प्रतिशत उत्तरदाता उदयपुर के हैं जो इस अधिनियम से अनभिज्ञ हैं। सर्वाधिक 27 प्रतिशत उत्तरदाता बांसवाड़ा के हैं जो इस अधिनियम की पूर्ण जानकारी रखते हैं। तीनों जिलों में सर्वाधीक 46 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो इस अधिनियम से पूर्णतः अनभिज्ञ हैं। तथा पूर्ण जानकारी रखने वालों का प्रतिशत देखा जाए तो महज़ 23 प्रतिशत उत्तरदाता ही है जो इस अधिनियम की पूर्ण जानकारी रखता है कि वास्तव में यह अधिनियम क्या है ? सीमित जानकारी रखने वाले उत्तरदाता केवल इतना जानते हैं कि संविधान ने उनके लिए ऐसा कोई अधिनियम बनाया है इसके अतिरिक्त वे कुछ नहीं जानते। इनमें कई उच्च शिक्षित उत्तरदाता भी हैं जो इस अधिनियम के केवल नाम से परिचित हैं। इसके कार्य, शक्तियां या इस कानून की जानकारी उन्हें नहीं है।

वास्तव में तो इस अधिनियम के पारित होने के बाद से जनजाति समाज मे शोषण व अत्याचारों की संख्या में कमी की अपेक्षा वृद्धि अधिक हुई है। परिणामस्वरूप कहा जा सकता है कि इस अधिनियम के बनने के बाद में जनजाति समाज का अधिकांश भाग इसे नहीं जानता। इसकी पूर्ण जानकारी अभी भी इस समाज को नहीं है। शिक्षा और जन–जागरूकता अभियान जागरूकता लाने में अधिक सफल नहीं रहे हैं। अत्याचारों की संख्या में वृद्धि हो रही है। शोषण होने पर शिकायत कहां की जाए ? इसकी जानकारी भी नहीं है। अतः यह अधिनियम प्रभावशाली सिद्ध नहीं हो रहा है।

सारणी संख्या 4.3 में यह देखने का प्रयास किया गया है कि क्या अत्याचार निवारण अधिनियम की जानकारी और शिक्षा स्तर में कोई सहसम्बन्ध है? उदयपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 12 युवक इस अधिनियम की पूर्ण जानकारी रखते हैंजिसमें से 16 प्रतिशत स्नातक व 08 प्रतिशत स्नातकोत्तर शैक्षिक स्थिति वाले हैं। इसी क्षेत्र की 50 युवतियों में से 08 युवतियां इस अधिनियम की पूर्ण जानकारी रखती हैं जिसमें से 12 प्रतिशत स्नातक व 04 प्रतिशत स्नातकोत्तर शैक्षिक स्थिति वाली हैं।

सारणी 4.3

शैक्षिक स्तर और अत्याचारों का निवारण अधिनियम 1989 की जानकारी

उत्तर–दाता	अध्ययन क्षेत्र	जानकारी	शैक्षिक स्थिति					कुल योग
			साक्षर	प्राथमिक	माध्यमिक	स्नातक	स्नातकोत्तर	
युवक	उदयपुर (50)	पूर्ण	–	–	–	08 (16.0)	04 (8.0)	**12 (4.0)**
		सीमित	–	–	04 (8.0)	10 (20.0)	02 (40.0)	**16 (5.3)**
		अनभिज्ञ	03 (6.0)	02 (4.0)	02 (4.0)	12 (24.0)	03 (6.0)	**22 (7.3)**
	डूंगरपुर (50)	पूर्ण	–	–		10 (20.0)	05 (10.0)	**15 (5.0)**
		सीमित	–	–	01 (2.0)	04 (8.0)	–	**05 (1.7)**
		अनभिज्ञ	02 (4.0)	04 (8.0)	07 (14.0)	14 (28.0)	03 (6.0)	**30 (10.0)**
	बांसवाडा (50)	पूर्ण	–	–	–	09 (18.0)	08 (16.0)	**17 (5.7)**
		सीमित	–	–	04 (8.0)	05 (10.0)	–	**09 (3.0)**
		अनभिज्ञ	02 (4.0)	02 (4.0)	06 (12.0)	12 (24.0)	02 (4.0)	**24 (8.0)**
युवतियां	उदयपुर (50)	पूर्ण	–	–	–	06 (12.0)	02 (4.0)	**08 (2.7)**
		सीमित		–		08 (16.0)	06 (12.0)	**14 (4.7)**
		अनभिज्ञ	04 (8.0)	03 (6.0)	05 (10.0)	12 (24.0)	04 (8.0)	**28 (9.3)**
	डूंगरपुर (50)	पूर्ण	–	–	–	5 (10.0)	04 (8.0)	**09 (3.0)**
		सीमित	03 (6.0)	01 (2.0)	–	14 (28.0)	02 (4.0)	**20 (6.7)**

		अनभिज्ञ	04 (8.0)	03 (6.0)	03 (6.0)	10 (20.0)	01 (2.0)	**21 (7.0)**
	बांसवाडा (50)	पूर्ण	–	–	–	6 (12.0)	04 (8.0)	**10 (3.3)**
		सीमित	01 (2.0)	–	–	18 (36.0)	06 (12.0)	**25 (8.3)**
		अनभिज्ञ	03 (6.0)	06 (12.0)	02 (4.0)	04 (8.0)	–	**15 (5.0)**
कुल योग			**22 (7.3)**	**21 (7.0)**	**34 (11.3)**	**167 (55.7)**	**56 (18.7)**	**300 (100.0)**

डूंगरपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 15 युवक उत्तरदाता इस अधिनियम की पूर्ण जानकारी रखते हैं, जिसमें से 20 प्रतिशत स्नातक व 01 प्रतिशत स्नातकोत्तर शैक्षिक स्थिति वाले है। वहीं दूसरी ओर 50 युवतियों में से 09 युवतियां इस अधिनियम की पूर्ण जानकारी रखती हैं जिसमें से 10 प्रतिशत स्नातक व 08 प्रतिशत स्नातकोत्तर स्तर की शैक्षिक स्थिति वाली हैं।

बांसवाड़ा के 50 युवकों में से 17 युवक इस अधिनियम से पूर्ण परिचित है जिसमें से 16 प्रतिशत स्नातकोत्तर व 18 प्रतिशत स्नातक स्तर की शैक्षिक स्थिति वाले है। इसी क्षेत्र की 50 युवतियों में से महज 10 युवतियां इस अधिनियम की पूर्ण जानकार है जिसमें से 12 प्रतिशत स्नातक व 08 प्रतिशत स्नातकोत्तर हैं।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि उच्च शिक्षित युवा वर्ग ही इस अधिनियम की पूर्ण जानकारी रखता है परन्तु यह भी स्पष्ट होता है कि इस अधिनियम से अनभिज्ञ रहने वाले युवा वर्ग में भी अधिकांश युवा वर्ग उच्च शिक्षित हैं। अतः उच्च शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् भी अत्याचारों का निवारण अधिनियम 1989 की जानकारी सम्पूर्ण युवा वर्ग को नहीं हैं।

अत्याचारों का निवारण अधिनियम 1989 की जानकारी रखने वाले जनजाति युवाओं की संख्या कम है। यद्यपि यह एक कानून है जो जनजातियों पर होने वाले अत्याचारों को रोकने के लिए बनाया गया है परन्तु एक कानून की अपेक्षा सम्पूर्ण मानवाधिकारों की जानकारी के बारे जनजाति युवाओं की क्या स्थिति है। इस सम्बन्ध में निम्न जानकारी प्राप्त होती है।

वर्तमान में मानवाधिकार बहुत ही चर्चा का विषय है। सारणी संख्या 4.4 से स्पष्ट होता है की उदयपुर जिले से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 26 प्रतिशत युवक मानवाधिकारों के बारे में जानकारी रखते हैं। 20 प्रतिशत युवक इतना जानते हैं कि मानवाधिकार मानवों के कुछ अधिकार हैं अर्थात् अत्यन्त सीमित जानकारी रखते हैं तथा 54 प्रतिशत युवक उत्तरदाता तो मानवाधिकार शब्द से भी अनभिज्ञ हैं। इसी जिले में युवतियों से मानवाधिकार के बारे में पूछने पर 34

प्रतिशत युवतियों ने इसकी जानकारी दी। 30 प्रतिशत ने सीमित जानकारी दी एवं 36 प्रतिशत युवतियां तो मानवाधिकार से पूर्णतः अनभिज्ञ है।

अन्य जिलों में भी यही स्थिति है डूंगरपुर में केवल 20 प्रतिशत युवक उत्तरदाता इसकी जानकारी रखते हैं 16 प्रतिशत सीमित जानकारी रखते हैं तथा 64 प्रतिशत उत्तरदाता मानवाधिकार के बारे में कुछ नहीं जानते। इसी प्रकार युवतियों में भी 24 प्रतिशत युवतियां जानतीं हैं कि मानवाधिकार क्या है? 36 प्रतिशत युवतियां सीमित जानकारी रखती हैं तथा 40 प्रतिशत युवतियों को नहीं पता कि मानवाधिकार क्या हैं?

बांसवाड़ा में 24 प्रतिशत युवक उत्तरदाता मानवाधिकारों की जानकारी रखते हैं। 18 प्रतिशत सीमित जानकारी रखते हैं तथा 58 प्रतिशत को इस बारे में कोई जानकारी नहीं है। वहीं युवतियों में भी 26 प्रतिशत उत्तरदाता मानवाधिकारों से परिचित हैं 34 प्रतिशत सीमित जानकारी रखती हैं तथा 40 प्रतिशत को नहीं पता कि मानवाधिकार क्या है?

सारणी 4.4

मानवाधिकारों की जानकारी

अध्ययन क्षेत्र	युवक			योग	युवतियां			योग	कुल योग			कुल योग
	पूर्ण	सीमित	अनभिज्ञ		पूर्ण	सीमित	अनभिज्ञ		पूर्ण	सीमित	अनभिज्ञ	
उदयपुर	13 (26.0)	10 (20.0)	27 (54.0)	**50 (100.0)**	17 (34.0)	15 (30.0)	18 (36.0)	**50 (100.0)**	30 (30.0)	25 (25.0)	45 (45.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	10 (20.0)	08 (16.0)	32 (64.0)	**50 (100.0)**	12 (24.0)	18 (36.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**	22 (22.0)	26 (26.0)	52 (52.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	12 (24.0)	09 (18.0)	29 (58.0)	**50 (100.0)**	13 (26.0)	17 (34.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**	25 (25.0)	26 (18.0)	49 (49.0)	**100 (33.4)**
योग	**35 (11.7)**	**27 (9.0)**	**88 (29.3)**	**150 (50.0)**	**42 (14.0)**	**50 (16.7)**	**58 (19.3)**	**150 (50.0)**	**77 (25.7)**	**77 (25.7)**	**146 (48.7)**	**300 (100.0)**

इस प्रकार तीनों ही जिलों में कुल मिलाकर 25 प्रतिशत उत्तरदाता ही ऐसे हैं जो मानवाधिकारों की पूर्ण जानकारी रखते हैं जबकि 48 प्रतिशत उत्तरदाता मानवाधिकारों से पूर्णतः अनभिज्ञ हैं। शिक्षा का व्यापक प्रचार–प्रसार और जनसंचार के इतने साधनों के पश्चात् भी आज 21वीं शताब्दी में भी इस क्षेत्र का युवा वर्ग मानवाधिकारों से परिचित नहीं हैं। यह अत्यन्त विचारणीय विषय हैं। बहुत कम

युवा इसकी जानकारी रखते हैं। इनके दृष्टिकोण से मानवाधिकार वे अधिकार हैं जो मानवों के लिए हैं जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छ जल, वायु, रोजगार आदि के अधिकार शामिल हैं। इनके अनुसार मानवाधिकार के अन्तर्गत व्यक्ति अपनी इच्छा से कहीं भी आ जा सकता है। उसे सभी सार्वजनिक वस्तुओं का उपयोग करने का अधिकार है। सीमित जानकारी वाले युवाओं को केवल इतना पता है कि मानवाधिकार में उन्हें निःशुल्क शिक्षा मिलती है तथा जो युवा इनसे अनभिज्ञ हैं वे तो बहुत ही अनोखा जवाब देते हैं। उनके अनुसार तो उनके उच्च अध्ययन के विषय विज्ञान अथवा अर्थशास्त्र से सम्बन्धित हैं अतः उन्हें इन सामाजिक विज्ञानों के विषय से सम्बन्धित कोई जानकारी नहीं है।

उपरोक्त वर्णित सारणी 4.4 एवं आरेख 4.3 में तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो सर्वाधिक युवा उदयपुर से हैं जो मानवाधिकारों के बारे में जानकारी रखते हैं 30 प्रतिशत युवा मानवाधिकारों से पूर्णतः परिचित हैं तथा 25 प्रतिशत युवा मानवाधिकारों की सीमित जानकारी रखते हैं। मानवाधिकार के बारे में उदयपुर के युवाओं की जागरूकता का एक कारण महाविद्यालयों द्वारा इस सम्बन्ध में विद्यार्थियों को जागरूक रखना है। कई महाविद्यालयों के अपने परिसर में मुख्य मानवाधिकारों की सूची को महाविद्यालय के सूचना पट्ट पर लगा रखा है। इससे युवाओं को आसानी से मानवाधिकारों की जानकारी मिलती। उदयपुर के पश्चात् 25 प्रतिशत युवा बांसवाड़ा के हैं जो मानवाधिकारों से परिचित हैं तथा 25 प्रतिशत युवा सीमित जानकारी रखते हैं। मानवाधिकारों से सम्बन्धित सबसे कम जानकारी डूंगरपुर के युवाओं को है। केवल 22 प्रतिशत युवा मानवाधिकार से अवगत हैं। यद्यपि डूंगरपुर जिला शिक्षा एवं उच्च शिक्षा की दृष्टि से देखा जाए तो आज जनजाति समाज के अधिकांश युवा अध्ययनरत हैं पर इनका आत्मविश्वास अन्य जिलों के युवक–युवतियों की अपेक्षा काफी कम है। इनमें जागरूकता की कमी है जिसके कारण ये लोग हिचकिचाते हैं। ये अपने हक अथवा अधिकार के लिए भी लोगों के बीच में जाने से सकुचाते हैं। यही कारण है कि डूंगरपुर का युवा अन्य जिलों की तुलना में काफी पीछे है।

सारणी 4.5 के आंकड़े उत्तरदाताओं की शैक्षिक स्थिति और मानवाधिकारों के संबंध में उनकी जानकारी में सम्बन्ध को दर्शाते हैं। उदयपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 13 उत्तरदाता मानवाधिकारों की पूर्ण जानकारी रखते हैं जिसमें से 08 प्रतिशत स्नातकोत्तर तथा 18 प्रतिशत स्नातक स्तर की शैक्षिक स्थिति के हैं। 50 युवतियों में से 17 युवतियां मानवाधिकार की पूर्ण जानकारी रखती हैं, जिसमें से 12 प्रतिशत स्नातक तथा 22 प्रतिशत स्नातकोत्तर स्तर की शैक्षिक स्थिति वाली हैं।

डूंगरपुर के आंकड़े बताते हैं कि यहां के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 10 उत्तरदाता ही मानवाधिकारों की पूर्ण जानकारी रखते हैं जिसमें से 12 प्रतिशत स्नातक व 08 प्रतिशत स्नातकोत्तर स्तर की शैक्षिक स्थिति वाले हैं। युवतियों की बात की जाय तो 50 में से 12 युवतियां मानवाधिकारों की पूर्ण जानकारी रखती हैं

जिसमें से 06 प्रतिशत स्नातकोत्तर व 18 प्रतिशत स्नातक स्तर की शैक्षिक स्थिति वाले हैं।

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं मे से 12 युवक मानवाधिकारों की पूर्ण जानकारी रखते है जिसमें से 16 प्रतिशत स्नातकोत्तर है व 06 प्रतिशत स्नातक। वहीं 50 युवतियों में से 13 युवतियां मानवाधिकारों की पूर्ण जानकारी रखती है जिसमें से 16 प्रतिशत स्नातक व 10 प्रतिशत स्नातकोत्तर शैक्षिक स्थिति वाले हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि मानवाधिकारों की पूर्ण जानकारी रखने वाले उत्तरदाता उच्च शैक्षिक स्थिति वाले है परन्तु यह भी स्पष्ट है कि उच्च शैक्षिक स्थिति वालों में से भी कुछ युवा मानवाधिकारों की सीमित जानकारी रखते हैं और कुछ मानवाधिकारों से पूर्णतः अनभिज्ञ हैं, अर्थात् युवा वर्ग का कुछ भाग उच्च शिक्षित होते हुए भी मानव के अधिकारों को नहीं जानता।

सारणी 4.5

शैक्षिक स्तर और मानवाधिकारों की जानकारी

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	जनकारी	शैक्षिक स्थिति					कुल योग
			साक्षर	प्राथमिक	माध्यमिक	स्नातक	स्नातकोत्तर	
युवक	उदयपुर (50)	पूर्ण	–	–	–	09 (18.0)	04 (8.0)	**13 (4.3)**
		सीमित	–	–	01 (2.0)	07 (14.0)	02 (4.0)	**10 (3.3)**
		अनभिज्ञ	03 (6.0)	02 (4.0)	05 (10.0)	14 (28.0)	03 (6.0)	**27 (9.0)**
	डूंगरपुर (50)	पूर्ण	–	–	–	06 (12.0)	04 (8.0)	**10 (3.3)**
		सीमित	–	–	–	04 (14.0)	04 (14.0)	**8 (2.7)**
		अनभिज्ञ	02 (4.0)	04 (8.0)	08 (16.0)	18 (36.0)	–	**32 (10.7)**
	बांसवाडा (50)	पूर्ण	–	–	01 (2.0)	03 (6.0)	08 (16.0)	**12 (4.0)**
		सीमित	–	–	–	7 (14.0)	2 (4.0)	**9 (3.0)**
		अनभिज्ञ	02 (4.0)	02 (4.0)	09 (18.0)	16 (32.0)	–	**29 (9.7)**
युवतियां	उदयपुर (50)	पूर्ण	–	–	–	11 (22.0)	06 (12.0)	**17 (5.7)**
		सीमित	–	–	–	09 (18.0)	06 (12.0)	**15 (5.0)**

		अनभिज्ञ	04 (8.0)	03 (6.0)	05 (10.0)	06 (12.0)	–	**18 (6.0)**
	डूंगरपुर (50)	पूर्ण	–	–	–	09 (18.0)	03 (6.0)	**12 (4.0)**
		सीमित	–	–	–	14 (28.0)	04 (8.0)	**18 (6.0)**
		अनभिज्ञ	07 (14.0)	04 (8.0)	03 (6.0)	06 (12.0)	–	**20 (6.7)**
	बांसवाडा (50)	पूर्ण	–	–	–	08 (16.0)	05 (10.0)	**13 (4.3)**
		सीमित	–	–	01 (2.0)	15 (30.0)	01 (2.0)	**17 (5.7)**
		अनभिज्ञ	04 (8.0)	06 (12.0)	01 (2.0)	05 (10.0)	04 (8.0)	**20 (6.7)**
कुल योग			**22 (7.3)**	**21 (7.0)**	**34 (11.3)**	**167 (55.7)**	**56 (18.7)**	**300 (100.0)**

जनजाति समाज को आगे बढ़ाने एवं विकास के क्रम में ले जाने के उद्देश्य से सरकार ने कई योजनाओं को प्रारम्भ भी किया है जिसमें जनजाति बालिका की शिक्षा हेतु प्रारम्भ की गई कई योजनाएं भी सम्मिलित हैं। परन्तु क्या जनजाति समाज इन योजनाओं की जानकारी रखता है ? यही जानकारी लेने के उद्देश्य से चयनित जिलों के उत्तरदाताओं से इस संबंध में पूछा गया।

सारणी 4.6

जनजाति बालिका शिक्षा हेतु सरकारी योजनाओं की जानकारी

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	48 (96.0)	02 (4.0)	**50 (100.0)**	50 (100.0)	– (0.0)	**50 (100.0)**	98 (98.0)	02 (2.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	42 (84.0)	08 (16.0)	**50 (100.0)**	41 (82.0)	09 (18.0)	**50 (100.0)**	83 (83.0)	17 (17.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	40 (80.0)	10 (20.0)	**50 (100.0)**	43 (86.0)	07 (14.0)	**50 (100.0)**	83 (83.0)	17 (17.0)	**100 (33.4)**
योग	**130 (86.7)**	**20 (13.3)**	**150 (100.0)**	**134 (89.3)**	**16 (10.7)**	**150 (100.0)**	**264 (88.0)**	**36 (12.0)**	**300 (100.0)**

सारणी संख्या 4.6 के आंकड़े बताते हैं कि डूंगरपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 84 प्रतिशत युवक इन योजनाओं से संबंधित जानकारियां रखते हैं। जबकि 6 प्रतिशत युवक इस बारें में कोई जानकारी नहीं रखते। वहीं दूसरी

तरफ 50 युवतियों में से 82 प्रतिशत युवतियां ऐसी हैं जो जनजाति बालिका शिक्षा से संबंधित सरकारी योजनाओं की जानकारियां रखती हैं और 18 प्रतिशत युवतियां इन सरकारी योजनाओं के बारे में महज़ इतनी जानकारी रखती हैं कि सरकार द्वारा बालिकाओं को निःशुल्क शिक्षा दी जाती है।

उदयपुर जिले के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 96 प्रतिशत उत्तरदाता जनजाति बालिका शिक्षा से संबंधित सरकारी योजनाओं की जानकारी रखते हैं। 4 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं को इन योजनाओं की कोई जानकारी नहीं है। वहीं दूसरी तरफ उदयपुर क्षेत्र की 50 युवतियों में से सम्पूर्ण 100 प्रतिशत युवतियां इन योजनाओं की जानकारी रखती है।

बांसवाड़ा के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से भी 80 प्रतिशत युवक उत्तरदाता सरकारी योजनाओं से परिचित हैं और 20 प्रतिशत ऐसे हैं जो इस बारे में कम जानकारी रखती हैं। वहीं युवतियों की बात की जाए तो 86 प्रतिशत युवतियां सरकारी योजनाओं की जानकारियां रखती हैं एवं 40 प्रतिशत युवतियां कम ही जानती हैं।

इस प्रकार तीनों जिलों के 300 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 88 प्रतिशत उत्तरदाता जनजाति बालिका शिक्षा से सम्बन्धित सरकारी योजनाओं की जानकारी रखते हैं। यदि तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो सर्वाधिक 98 प्रतिशत उत्तरदाता उदयपुर के हैं जो जनजाति बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन करने हेतु सरकार द्वारा लागू की गई योजनाओं की जानकारी रखते हैं। इन 98 प्रतिशत युवक–युवतियों के अनुसार सरकार द्वारा लागू की गई इन योजनाओं के कारण ही आज जनजाति समाज में शिक्षा का स्तर सुधरा है और विशेषकर युवतियां तो इससे सर्वाधिक लाभान्वित हुई हैं। जैसे–जनजाति छात्राओं को उच्च शिक्षा हेतु आर्थिक सहायता देकर इन्हें उच्च शिक्षा हेतु प्रेरित किया जा रहा है। घर से दूर विद्यालय होने पर अकसर बालिकाएं शिक्षा से नाता तोड़ देती हैं इनकी इस समस्या का हल निकालते हुए सरकार इन्हें निःशुल्क साईकिल प्रदान करती है। इसी प्रकार जनजाति बालिकाओं के लिए उदयपुर में 02 जुलाई 2011 से मॉडल पब्लिक आवासिय स्कूलों का संचालन भी प्रारम्भ किया है। साथ ही बालिकाओं को शिक्षा में प्रोत्साहन देने हेतु माध्यमिक शिक्षा बोर्ड प्रतिभावान की 10वीं एवं 12वीं की परीक्षाओं में जिले में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर इन्दिरा प्रियदर्शनी पुरस्कारके तहत क्रमशः 75 हजार व एक लाख रूपये करने के आदेश जारी किये गये हैं। महाविद्यालयों में अध्ययन करने वाली कई छात्राओं को कन्या छात्रावासों में सुविधाएं भी प्राप्त हैं तथा कमरा किराया भी दिया जाता है। कई जनजाति बालिकाएं आवासीय विद्यालयों का भी लाभ उठा रही हैं। स्पष्ट है कि अधिकांश जनजाति बालिका वर्ग हेतु सरकार द्वारा शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए जो योजनाएं लागू कि गई हैं उनमें से अधिकांश योजनाओं का लाभ उठाया जा रहा है।

जनजाति समाज अन्य समाजों की अपेक्षा पिछड़ा हुआ समाज है इसी कारण इस समाज में अधिकारों का हनन् आम बात है। परन्तु क्या जनजाति समाज का युवा इस बात को स्वीकार करता है कि उनके समाज में अधिकारों अथवा मानवाधिकारों का हनन् होता है। यही जानने हेतु चयनित जनजाति युवाओं से इस सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की गई।

उपरोक्त सारणी 4.7 से स्पष्ट होता है कि जनजाति युवाओं के अनुसार जनजाति समाज में मानवाधिकार के उल्लंघन की स्थिति का पता चलता है।उदयपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 52 प्रतिशत के अनुसार जनजाति समाज में मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है जबकि 48 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं का कहना है कि जनजाति समाज में मानवाधिकारों का कोई उल्लंघन नहीं हेाता। जबकि 70 प्रतिशत युवतियां मानती हैं कि मानवाधिकारों का उल्लंघन जनजाति समाज में होता है। जबकि 30 प्रतिशत इसके लिए इन्कार करती हैं। डूंगरपुर में 40 प्रतिशत युवक उत्तरदाता मानते हैं कि जनजाति समाज में मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है जबकि बहुत अधिक 60 प्रतिशत इससे इन्कार करते हैं। वहीं युवतियों में 66 प्रतिशत युवतियां मानती हैं कि जनजाति समाज में मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है जबकि 34 प्रतिशत इस बात को अस्वीकार करती हैं। यानि ज्यादातर जनजाति उत्तरदाता मानवाधिकार के उल्लंघन को स्वीकार करते हैं।

सारणी 4.7

जनजाति समाज में मानवाधिकारों का उल्लंघन

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	**26 (52.0)**	24 (48.0)	**50 (100.0)**	35 (70.0)	15 (30.0)	**50 (100.0)**	61 (61.0)	39 (39.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	20 (40.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	33 (66.0)	17 (34.0)	**50 (100.0)**	53 (53.0)	47 (47.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	24 (48.0)	26 (52.0)	**50 (100.0)**	32 (64.0)	18 (36.0)	**50 (100.0)**	56 (56.0)	34 (34.0)	**100 (33.4)**
योग	**70 (46.7)**	**80 (53.3)**	**150 (50.0)**	**100 (66.7)**	**50 (33.3)**	**150 (50.0)**	**170 (56.7)**	**130 (43.3)**	**300 (100.0)**

बांसवाड़ा में यदि यह प्रतिशत देखा जाए तो 48 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं का मानना है कि जनजाति समाज में मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है जबकि 52 प्रतिशत इस बात को अस्वीकार करते हैं। दूसरी तरफ युवतियों

में 64 प्रतिशत ने जनजाति समाज में मानवाधिकार उल्लंघन को स्वीकार किया है जबकि 36 प्रतिशत युवतियों ने अस्वीकार किया है।

इस प्रकार तीनों ही जिलों में सर्वाधिक 56 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि जनजाति समाज में मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है। तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो सर्वाधिक 47 प्रतिशत युवा डूंगरपुर जिले के हैं जिनका मानना है कि जनजाति समाज में मानवाधिकार का उल्लंघन नहीं होता। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि इनमें से अधिकांश युवा तो यह ही नहीं जानते कि मानवाधिकार क्या हैं? और कौनसा उल्लंघन मानवाधिकार हनन् अथवा उल्लंघन के अन्तर्गत आता है? दूसरा कारण यह है कि इस जनजाति समाज में 'हम' की भावना बहुत अधिक पायी जाती है। ये लोग अपने समाज के प्रति किसी भी प्रकार की नकारात्मकता को किसी के भी सामने प्रकट नहीं करते। इन्हें लगता है कि इससे इनके समाज की बुराई होगी और ये लोग अपने समाज की बुराई बर्दाश्त नहीं करते। डूंगरपुर के पश्चात् बांसवाड़ा जिले में 44 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार जनजाति समाज में कोई मानवाधिकार हनन् नहीं होता है। इनकी मानसिकता भी यही है कि इनके समाज में कुछ बुरा नहीं होता और यदि कुछ होता भी है तो उसे ये लोग अपने स्तर पर सुधारना चाहते हैं।

चयनित क्षेत्र के उत्तरदाताओं में से कुछ उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया कि जनजाति समाज में मानवाधिकार का उल्लंघन होता है तथा कुछ उत्तरदाताओं ने इस बात से इन्कार किया। क्या उत्तरदाताओं के स्वयं के किसी मूल अधिकार का हनन् हुआ है ? उत्तरदाताओं की मानसिक स्थिति के विश्लेषण के लिए यह जानना आवश्यक है। अतः इस संबंध में भी जानकारी हासिल की गई।

सारणी 4.8

युवाओं के मूल अधिकारों का हनन

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	07 (14.0)	43 (86.0)	**50 (100.0)**	11 (22.0)	39 (78.0)	**50 (100.0)**	18 (18.0)	82 (82.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	03 (6.0)	47 (94.0)	**50 (100.0)**	13 (26.0)	37 (74.0)	**50 (100.0)**	16 (16.0)	84 (84.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	08 (16.0)	42 (84.0)	**50 (100.0)**	06 (12.0)	44 (88.0)	**50 (100.0)**	14 (14.0)	86 (86.0)	**100 (33.4)**
योग	**18 (12.0)**	**132 (88.0)**	**150 (100.0)**	**30 (20.0)**	**120 (80.0)**	**150 (100.0)**	**48 (16.0)**	**252 (84.0)**	**300 (100.0)**

उपरोक्त सारणी 4.6 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि उदयपुर क्षेत्र से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 14 प्रतिशत युवको के अनुसार उनके मूल अधिकार का हनन् हुआ है। जबकि 86 प्रतिशत युवक उत्तरदाता अपने किसी भी मूल अधिकार के हनन् को अस्वीकार करते हैं। वहीं दूसरी और युवतियों में भी 22 प्रतिशत युवतियों के अनुसार उनके मूल अधिकार का हनन् हुआ है, जबकि 78 प्रतिशत के अनुसार उनके किसी मूल अधिकार का हनन् नहीं हुआ है।

डूंगरपुर से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 6 प्रतिशत के मूल अधिकार का हनन् हुआ तथा 94 प्रतिशत किसी भी प्रकार के अधिकार के हनन् को अस्वीकार करते है। इसी प्रकार 50 प्रतिशत युवतियों में से भी 26 प्रतिशत मूल अधिकार हनन् को स्वीकार करती हैं तथा 74 प्रतिशत युवतियां मूल अधिकार हनन् को अस्वीकार करती हैं। इसी प्रकार बांसवाड़ा में भी 50 युवक उत्तरदाताओं में से 16 प्रतिशत युवक अपने मूल अधिकार के हनन् का ज़िक्र करते हैं तथा 84 प्रतिशत युवक कहते हैं कि उनके किसी अधिकार का हनन् नहीं हुआ है। दूसरी और युवतियों में भी 12 प्रतिशत युवतियां बताती हैं कि उनके किसी मूल अधिकार का हनन् हुआ तथा 88 प्रतिशत मूल अधिकार के हनन् को अस्वीकार करती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि मूल अधिकारों के हनन् को स्वीकार करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या अस्वीकार करने वाले उत्तरदाताओं से काफी कम है। अध्ययन में चयनित 300 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 84 प्रतिशत उत्तरदाता मूल अधिकारों के हनन् को स्वीकार नहीं करता है। इसका प्रमुख कारण है जागरूकता की कमी। अर्थात ये लोग यह भी नहीं जानते कि सभी मूल अधिकार कौन से हैं ? दूसरी बात यह है कि इनको इसकी जानकारी भी बहुत कम है कि कौन सा हनन् या शोषण मूल अधिकारों के अर्न्तगत आता है। साथ ही ये लोग डरते हैं, घबराते हैं। इसी कारण यह भी नहीं बता पाते कि इनके साथ क्या गलत हुआ है।

तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो सर्वाधिक 18 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का है जिनके अनुसार उनके मूल अधिकार का हनन् हुआ है तथा सर्वाधिक (86%) उत्तरदाता जो बांसवाड़ा के हैं मूल अधिकारों के हनन् को अस्वीकार करते हैं।

जब युवाओं से पूछा गया कि इनके किस मूल अधिकार का हनन् हुआ है तो इनका कहना है कि इन्हें आदिवासी कहकर प्रताड़ित किया जाता है। स्कूल, महाविद्यालय मेंजनजाति छात्र हमेशा ही छिन्न–भिन्न से प्रतीत होते हैं जिसका कारण गैर–जनजाति समाज के बच्चों द्वारा अलग–थलग सा व्यवहार करना है। हमें अक्सर कक्षा में पीछे बैठना पड़ता है। क्योंकि गैर–जनजाति समाज के बच्चे कक्षा में अधिक प्रतिभाशाली होने के कारण आगे की तरफ ही बैठते हैं। इनका मानना है कि यदि संविधान में सभी को समानता का अधिकार दिया गया हैं तो हमे समान क्यों नहीं समझा जाता। शिक्षा के क्षेत्र में भी समय समय पर हमें छात्रवृति, आरक्षण आदि बातों पर उलाहना मिलता है कि हम इसी के दम पर आगे बढ़ते हैं। इसके बिना हमारा कोई वजूद नहीं है। हमें हेय दृष्टि से देखा

जाता है। हमसे बात करना या हमारे साथ रहना गैर–जनजाति समाज के लोगों को स्वीकार नहीं होता। कई बार तो जानकारी के अभाव में हमें ठग लिया जाता हैं। बड़े–बड़े अधिकारियों व अफसरों के पास काम करवाने के लिए चपरासियों को पैसे खिलाने पड़ते हैं। पेंशन लेने जाते हैं तो लम्बी कतार में खड़े रहते हैं। जल्दी लेने के लिए कमीशन देना पड़ता है। गरीबी के कारण कम पैसों से गैर–जनजाति समाज के घरों में नौकरी करनी पड़ती है। यदि किसी दिन बीमारी या अन्य कारण से छुट्टी लेते है तो पैसे काट लिए जाते हैं।

इनसे यह भी पूछा गया कि क्या वे इस शोषण का विरोध करते हैं तो इनका कहना है कि यह हनन् या शोषण अत्यन्त छोटे स्तर पर माना जाता है। अतः इसका विरोध करना, ना करना बराबर है। यदि हम विरोध करते भी हैं तो हमारे स्तर पर करते हैं, जिससे कभी–कभी फायदा भी मिल जाता है लेकिन ज्यादातर स्थितियों में कोई परिणाम ही नहीं निकलता।

जनजाति समाज एक ऐसा समाज है जिसने अपनी बरसों पुरानी परम्पराओं व रिवाजों को सहेज कर रखा है और आज भी उसका पालन व निर्वहन कर रहा है। कुछ प्रथाएं तो सामान्य है परन्तु कुछ प्रथाओं के कारण मानवता त्रस्त हो रही है, कई मानवों के अधिकारों का हनन् हो रहा है। नातरा प्रथा ऐसी ही एक पारम्परिक प्रथा है। इस प्रथा में अविवाहित अथवा विवाहित महिला अपने पति को छोड़कर किसी अन्य पुरूष के साथ चली जाती है तथा उसके साथ ही रहने लगती है। जिसके बारे में इस जनजाति क्षेत्र के सभी उत्तरदाता जानकारी रखते हैं।

सारणी 4.9

युवाओं के मत में नातरा प्रथा मानवाधिकार का हनन

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	26 (52.0)	24 (48.0)	**50 (100.0)**	28 (56.0)	22 (44.0)	**50 (100.0)**	54 (54.0)	46 (46.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	30 (60.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**	32 (64.0)	18 (36.0)	**50 (100.0)**	62 (62.0)	38 (38.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	28 (56.0)	22 (44.0)	**50 (100.0)**	30 (60.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**	58 (58.0)	42 (42.0)	**100 (33.4)**
योग	**84 (28.0)**	**66 (22.0)**	**150 (50.0)**	**90 (30.0)**	**60 (20.0)**	**150 (50.0)**	**174 (58.0)**	**126 (32.0)**	**300 (100.0)**

चयनित क्षेत्र के युवाओं के अनुसार नातरा प्रथा की कुछ अच्छी बाते हैं और कुछ बुरी। इसी को ध्यान में रखकर नातरा प्रथा को समाप्त करने के सम्बन्ध में इस क्षेत्र के युवा वर्ग से चर्चा की गई तथा इनसे पूछा गया कि उनके अनुसार क्या नातरा प्रथा मानवाधिकार का उल्लंघन है ? सारणी 4.9 के आंकड़ों से इस सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। जनजाति समाज का बहुत बड़ा भाग मानवाधिकार की जानकारी नहीं रखता परन्तु मानवाधिकार के साथ अधिकार शब्द जुड़ने के कारण नातरा प्रथा के पक्ष एवं विपक्ष में तर्क प्राप्त हुए।

उदयपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं से इस सम्बन्ध में पूछने पर 52 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं ने नातरा प्रथा के पक्ष में तर्क दिये हैं वहीं 48 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं ने इस प्रथा को मानवाधिकार का हनन् माना है। युवतियों से इस सम्बन्ध में पूछने पर 56 प्रतिशत युवतियां नातरा प्रथा को मानवाधिकार का हनन् मानती हैं और 44 प्रतिशत इसके विपक्ष में तर्क देती हैं। इसी प्रकार डूंगरपुर के युवाओं से भी इस सम्बन्ध में जानकारी हासील की गई। 50 युवकों में से 60 प्रतिशत नातरा प्रथा के पक्ष में है। 40 प्रतिशत विपक्ष में है। वहीं युवतियों में 64 प्रतिशत नातरा प्रथा के पक्ष में हैं तथा 36 प्रतिशत विपक्ष में अपना मत देती हैं।

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 56 प्रतिशत उत्तरदाता नातरा प्रथा को मानवाधिकार का हनन् मानते हैं। 44 प्रतिशत इसके विपक्ष में तर्क देते हैं। बांसवाड़ा की 50 युवतियों में से 60 प्रतिशत युवतियां नातरा प्रथा को के पक्ष में तर्क देती हैं तथा 40 प्रतिशत विपक्ष में तर्क देती हैं।

इस प्रकार इस जनजाति समाज में नातरा प्रथा को समाप्त करने के प्रश्न

पर जहां एक और पक्ष में कई विचार और तर्क हैं वहीं दूसरी और इसके विपक्ष में भी तर्क हैं। तीनों ही जिलों के कुल 58 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस बात को स्वीकार किया है कि नातरा प्रथा मानवाधिकारों का हनन् है। तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो सर्वाधिक 62 प्रतिशत युवा उत्तरदाता डूंगरपुर के हैं जो नातरा प्रथा के पक्ष में तर्क देते हैं। तथा 58 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ा का है जो इस प्रथा को प्रतिबंधित करवाना चाहता है। वहीं दूसरी और सर्वाधिक 46 प्रतिशत युवा उदयपुर क है जो इस प्रथा को समाप्त करने के पक्ष में हैं और 42 प्रतिशत युवा बांसवाड़ा के हैं जो इस प्रथा को समाप्त नहीं करना चाहता।

नातरा प्रथा को समाप्त करने के पक्ष में अपना मत देने वालों का कहना है कि इस प्रथा को कानूनी रूप से समाप्त कर लेना चाहिए क्योंकि इस प्रथा से बच्चों के अधिकारों का हनन् होता है। विवाह के पश्चात् महिलाएं तो अपनी पसंद–नापसंद के अनुसार साथी का चुनाव कर लेती हैं परन्तु, इसके बाद उनके बच्चों का पालन–पोषण अधूरा–सा रह जाता है। उन्हे मां का प्यार नहीं मिल

पाता, सौतेली मां के अत्याचार सहन करने पड़ते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चों का शारीरिक व मानसिक विकास प्रभावित होता है। वहीं दूसरी और इसके विपक्ष में अपना तर्क देने वालों का कहना है कि नातरा प्रथा में महिला अपने इच्छित पुरुष के साथ रहती है अर्थात् विवाह के बाद यदि महिला अपने वैवाहिक जीवन से खुश नहीं है तो, वह उसे छोड़कर अपनी पसंद के पुरुष के साथ जीवन निर्वाह कर सकती है। यह महिला का अधिकार है और यदि इस प्रथा को समाप्त कर दिया गया तो यह महिलाओं के अधिकारों का हनन् होगा क्योंकि प्रत्येक मनुष्य अपनी पसंद के साथी के साथ जीवन–निर्वाह का अधिकार रखता है। कई बार महिलाएं अपने पति द्वारा किए गए अत्याचारों से तंग आकर भी भाग जाती हैं तो यह कदम वह अपनी मर्यादा और जान बचाने के लिए उठाती हैं और यदि इस स्थिति में महिला किसी अन्य पुरूष के साथ भाग जाती है तो इसमें कुछ गलत नहीं है।

वर्तमान जनजाति समाज आज भी डायन प्रथा का दंश झेल रहा है। इसके कई प्रकरण हर रोज समाचार पत्रों में पढ़ने को मिलते हैं। डायन प्रथा से चयनित क्षेत्र के सभी उत्तरदाता परिचित हैं। सारणी संख्या 4.10 से डायन प्रथा में उत्तरदाताओं के विश्वास की जानकारी प्राप्त होती है।

उदयपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं से डायन प्रथा में उनके विश्वास के बारे में पूछने पर 20 प्रतिशत युवकों ने कहा कि वे डायन प्रथा में विश्वास करते हैं जबकि 80 प्रतिशत युवक इस प्रथा में विश्वास नहीं करते। 50 युवतियों में से 28 प्रतिशत युवतियां इस प्रथा में विश्वास करती हैं तथा 72 प्रतिशत इस प्रथा में विश्वास नहीं करती। डूंगरपुर के युवक उत्तरदाताओं से इस बारे में पूछने पर 32 प्रतिशत युवक डायन प्रथा मे विश्वास जताते है। 68 प्रतिशत युवक इस डायन प्रथा को नहीं मानते। वहीं युवतियों में 40 प्रतिशत युवतियां डायन प्रथा में विश्वास करती हैं तथा 60 प्रतिशत इस प्रथा में अविश्वास जताती हैं।

सारणी 4.10

डायन प्रथा में उत्तरदाताओं का विश्वास

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	10 (20.0)	40 (80.0)	**50 (100.0)**	14 (28.0)	36 (72.0)	**50 (100.0)**	24 (24.0)	76 (76.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	16 (32.0)	34 (68.0)	**50 (100.0)**	20 (40.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	36 (36.0)	64 (64.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	15 (30.0)	35 (70.0)	**50 (100.0)**	18 (36.0)	32 (64.0)	**50 (100.0)**	33 (33.0)	67 (67.0)	**100 (33.4)**

योग	41 (13.7)	109 (36.3)	150 (100.0)	52 (17.3)	98 (32.7)	150 (100.0)	93 (31.0)	207 (69.0)	300 (100.0)

बांसवाड़ा में यदि इस प्रतिशत को देखा जाए तो 30 प्रतिशत युवक उत्तरदाता इस प्रथा में विश्वास जताते हैं लेकिन 70 प्रतिशत उत्तरदाता डायन प्रथा में कतई विश्वास नहीं करते। 36 प्रतिशत युवतियां डायनप्रथा को मानती हैं तथा 64 प्रतिशत नहीं मानती।

तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो डायन प्रथा में विश्वास रखने वाले सर्वाधिक उत्तरदाता डूंगरपुर में है। डूंगरपुर का 36 प्रतिशत युवा वर्ग डायन प्रथा मे विश्वास रखता है तथा सर्वाधिक 76 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का है जो डायन प्रथा में विश्वास नहीं करता है।

तथ्य संकलन के दौरान उत्तरदाताओं से अनौपचारिक रूप से बातचीत करने तथा घुमाफिरा कर प्रश्न करने पर यह स्पष्ट हुआ कि वे डायन प्रथा में भय या अनिष्ट के कारण विश्वास रखते हैं और उससे भयभीत भी हैं।

अनुसंधान में प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण करके यह जानने का प्रयास किया गया कि किस शैक्षणिक स्तर वाले उत्तरदाताओं का डायन प्रथा में विश्वास अधिक है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि तीनों ही जिलों के 27 प्रतिशत युवक उत्तरदाता ऐसे हैं जो डायन प्रथा में विश्वास करते हैं। जिसमें से 23 प्रतिशत से अधिक माध्यमिक स्तर व 04 प्रतिशत स्नातक एवं उच्च शिक्षा स्तर के हैं। वहीं दूसरी और 73 प्रतिशत के लगभग युवा डायन प्रथा में विश्वास नहीं करते जिनमें से 70 प्रतिशत युवक उच्च स्तर की शिक्षा प्राप्त है एवं माध्यमिक स्तर तक शिक्षित लगभग 3 प्रतिशत युवा भी डायन प्रथा में विश्वास नहीं करते।

सारणी 4.11

शैक्षणिक स्तर व डायन प्रथा में विश्वास

उत्तरदाता	विश्वास	माध्यमिक स्तर	स्नातक व उच्च स्तर	योग
युवक 150 (50.00)	हां	35 (23.3)	06 (4.0)	41 (27.03)
	नहीं	04 (2.7)	105 (70.0)	109 (72.7)
युवतियां 150	हां	36 (24.0)	16 (10.7)	52 (34.7)

(50.0)	नहीं	02 (1.3)	96 (64.0)	**98** **(65.3)**
योग 300 (100.0)	हां	71 (23.7)	22 (7.3)	**93** **(31.0)**
	नहीं	06 (2.0)	201 (67.0)	**207** **(69.0)**
कुल योग		**77** **(25.7)**	**223** **(74.3)**	**300** **(100.0)**

इसी प्रकार यदि तीनों जिलों की युवती उत्तरदाताओं के आंकड़ों का आंकलन किया जाये तो डायन प्रथा में विश्वास करने वाली मात्र लगभग 35 प्रतिशत युवतियों में से 24 प्रतिशत युवतियां है जिनका शैक्षिक स्तर माध्यमिक स्तर का है, तथा 10 प्रतिशत ऐसी युवतियां हैं जो उच्च स्तर की शैक्षिक स्थिति के उपरांत भी डायन प्रथा में विश्वास रखती हैं। सर्वाधिक 64 प्रतिशत युवतियां जो डायन प्रथा में विश्वास नहीं रखती, का शैक्षिक स्तर स्नातक व उच्च स्तर का है।

सभी 300 उत्तरदाताओं की बात की जाय तो 300 में से 69 प्रतिशत डायन प्रथा में विश्वास नहीं करते वरन् मात्र 31 प्रतिशत ही करते हैं। उच्च शिक्षा का प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता है क्योंकि उच्च शिक्षित 74 प्रतिशत युवाओं में से 67 प्रतिशत युवा इस प्रथा में विश्वास नहीं करते मात्र 7.3 प्रतिशत ही करते हैं। इसके विपरीत माध्यमिक स्तर तक शिक्षित युवा (24.7) में से 23 प्रतिशत डायन प्रथा में विश्वास करते हैं और मात्र 2 प्रतिशत नहीं करते।

क्षेत्रीय (अध्ययन के तीन जिलें) में स्थित शैक्षिक स्तर के आधार पर डायन प्रथा में विश्वास को सारणी 4.12 में देखा व जांचा जा सकता है। शिक्षा का प्रभाव (युवक और युवतियों में) क्रमशः उदयपुर, डूंगयपुर एवं बांसवाड़ा में डायन प्रथा में विश्वास में स्पष्टतः दृष्टिगोचर हो रहा है, फिर भी डूंगयपुर में तुलनात्मक रूप से विश्वास अधिक करते हैं और वह भी भय के कारण।

सारणी 4.12

चयनित अध्ययन क्षेत्र में शैक्षिक स्तर और डायन प्रथा में विश्वास

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	जानकारी	शैक्षिक स्थिति					कुल योग
			साक्षर	प्राथमिक	माध्यमिक	स्नातक	स्नातकोत्तर	
युवक	उदयपुर (50) (100.0)	हां	03 (6.0)	02 (4.0)	04 (8.0)	01 (2.0)	—	**10** **(20.0)**
		नहीं	—	—	02	29	09	**40**

					(4.0)	(58.0)	(18.0)	**(80.0)**
	डूंगरपुर (50) (100.0)	**हां**	02 (4.0)	04 (8.0)	08 (16.0)	01 (2.0)	01 (2.0)	**16 (32.0)**
		नहीं	–	–	–	27 (54.0)	07 (14.0)	**34 (68.0)**
	बांसवाडा (50) (100.0)	**हां**	02 (4.0)	01 (2.0)	09 (18.0)	03 (6.0)	–	**15 (30.0)**
		नहीं	–	01 (2.0)	01 (2.0)	23 (46.0)	10 (20.0)	**35 (70.0)**
युवतियां	**उदयपुर (50) (100.0)**	**हां**	03 (6.0)	03 (6.0)	05 (10.0)	02 (4.0)	01 (2.0)	**14 (28.0)**
		नहीं	1 (2.0)	–	–	24 (48.0)	11 (22.0)	**36 (72.0)**
	डूंगरपुर (50) (100.0)	**हां**	07 (14.0)	04 (8.0)	03 (6.0)	05 (10.0)	01 (2.0)	**20 (40.0)**
		नहीं	–	–	–	24 (48.0)	06 (12.0)	**30 (60.0)**
	बांसवाडा (50) (100.0)	**हां**	04 (8.0)	05 (10.0)	02 (4.0)	07 (14.0)	–	**18 (36.0)**
		नहीं	–	01 (2.0)	–	21 (42.0)	10 (20.0)	**32 (64.0)**
कुल योग			**22 (7.3)**	**21 (7.0)**	**34 (11.3)**	**167 (55.7)**	**56 (18.7)**	**300 (100.0)**

उपरोक्त सारणी युवाओं के शैक्षिक स्तर और उनके डायन प्रथा में विश्वास के सहसम्बन्ध को स्पष्ट करती हैं। सारणीनुसार उदयपुर के स्नातक स्तर के 58 प्रतिशत उत्तरदाता इस प्रथा को नहीं मानते। जबकि 12 प्रतिशत स्नातकोत्तर व 48 प्रतिशत स्नातक शैक्षिक स्थिति वाली युवतियांइस प्रथा में विश्वास नहीं करती। इसी प्रकार डूंगरपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 34 युवक डायन प्रथा में विश्वास नहीं करते जिसमें से 24 युवक स्नातक स्तर के हैं और 50 युवतियों में से 30 युवतियां डायन प्रथा में विश्वास नहीं करती हैं जिसमें से 48 प्रतिशत स्नातक और 12 प्रतिशत स्नातकोत्तर हैं।

बांसवाड़ा के 50 में से 35 युवक उत्तरदाता डायन प्रथा में विश्वास नहीं करते जिसमें से अधिकांश अर्थात 46 प्रतिशत स्नातक व 20 प्रतिशत स्नातकोत्तर शैक्षिक स्थिति वाले हैं। जबकि दूसरी और स्नातकोत्तर की 20 प्रतिशत युवतियां भी इस प्रथा में विश्वास नहीं करती।

इस प्रकार उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि उच्च शैक्षिक स्थिति वाला अधिकांश युवा वर्ग डायन प्रथा में विश्वास नहीं करता हैं। डायन प्रथा में विश्वास करने वाले उत्तरदाता की शैक्षिक स्थिति निम्न हैं और इसी कारण वो इस कुप्रथा में फंसे हुए हैं।

डायन प्रथा में विश्वास से संबंधित आंकड़ों से पता चलता है कि आज भी इस कुप्रथा में जनजाति समाज का विश्वास कायम है। परन्तु क्या ये समाज इस कुप्रथा को मानवाधिकारों का उल्लंघन मानता है इसी सम्बन्ध में उत्तरदाताओं से बात की गई कि क्या डायन प्रथा मानवाधिकार का उल्लंघन है ?

सारणी 4.13

डायन प्रथा मानवाधिकारों का उल्लंघन

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	19 (38.0)	31 (62.0)	**50 (100.0)**	33 (66.0)	17 (34.0)	**50 (100.0)**	52 (52.0)	48 (48.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	20 (40.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	25 (50.0)	25 (50.0)	**50 (100.0)**	45 (45.0)	55 (55.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	30 (60.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**	31 (62.0)	19 (38.0)	**50 (100.0)**	61 (61.0)	39 (39.0)	**100 (33.4)**
योग	**69 (46.0)**	**81 (54.0)**	**150 (100.0)**	**89 (59.3)**	**61 (40.7)**	**150 (100.0)**	**158 (55.7)**	**142 (47.3)**	**300 (100.0)**

सारणी से स्पष्ट होता है कि उदयपुर क्षेत्र के 50 युवकों से जब पूछा गया कि क्या डायन प्रथा मानवाधिकारों का उल्लंघन है? प्राप्त तथ्यों के अनुसार उदयपुर के 38 प्रतिशत युवक मानते हैं कि डायन प्रथा मानवाधिकारों का उल्लंघन है लेकिन ज्यादतर 62 प्रतिशत के अनुसार नहीं मानते। वहीं दूसरी ओर युवतियों के विचार देखे जाएं तो 66 प्रतिशत के अनुसार डायन प्रथा मानवाधिकारों का उल्लंघन है और 34 प्रतिशत के अनुसार नहीं हैं।

सारणी के अनुसार स्पष्ट होता है कि डूंगरपुर क्षेत्र में 50 युवकों में से 40 प्रतिशत युवक इस विचार से सहमत हैं कि डायन प्रथा मानवाधिकार का उल्लंघन है तथा 60 प्रतिशत युवक उत्तरदाता इस विचार से असहमत हैं। वहीं 50 युवतियों

में से 50 प्रतिशत डायन प्रथा को मानवाधिकार का उल्लंघन मानती हैं तथा 50 प्रतिशत युवतियां इससे असहमत हैं।

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं से इस सम्बन्ध में पूछने पर 60 प्रतिशत डायनप्रथा को मानवाधिकार का उल्लंघन मानते हैं तथा 40 प्रतिशत इस विचार को गलत मानते हैं। वहीं 50 युवतियों में से 62 प्रतिशत युवतियां मानती हैं कि डायन प्रथा मानवाधिकारों का उल्लंघन है तथा 38 प्रतिशत युवतियां इससे इन्कार करती हैं।

सभी 300 उत्तरदाताओं में से 55 प्रतिशत उत्तरदाता डायन प्रथा को मानवाधिकारों का उल्लंघन मानते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो सर्वाधिक 61 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ा का है जिसके अनुसार डायन प्रथा मानवाधिकारों का उल्लंघन है तथा सर्वाधिक 55 प्रतिशत युवा वर्ग डूंगरपुर का है जिसके अनुसार डायन प्रथा मानवाधिकार का उल्लंघन नहीं है। डायनप्रथा को मानवाधिकार का उल्लंघन मानने वालों का कहना है कि इस प्रथा से अंधविश्वास और अज्ञानता को बढ़ावा मिल रहा है लोग विज्ञान के इस युग में भी इस जैसी दकियानूसी विचारों और प्रथाओं को मानते हैं। जिस महिला पर डायन का आरोप लगा होता है वह स्वयं को समाज व सामाजिक कार्यों से अलग पाती है। न तो उससे कोई व्यवहार रखा जाता है और न ही कोई उससे सम्पर्क रखता है। परिणामस्परूप वह महिला मानसिक रूप से पीड़ित हो जाती है। लोग उसे देखकर दूर भागने लगते हैं। उससे बात न करनी पड़े इसके लिए महिलाएं कई बार अपना मुंह घूंघट में छिपा लेती हैं। कई महिलाओं को तो मार–पीटकर जान से मार देने की कोशिश भी की जाती है। यह व्यवहार मानवता के खिलाफ है। हर स्त्री–पुरूष को आम जिन्दगी जीने का अधिकार है। यदि उससे यह अधिकार छिन जाता है तो यह मानवाधिकार का हनन् है।

वहीं दूसरी ओर डायन प्रथा को मानवाधिकार का उल्लंघन नहीं मानने वालों का कहना है कि यदि किसी महिला के कारण किसी भी प्राणी के जीवन को नुकसान पहुंचे तो उसे सजा देना या प्रताड़ित करना गलत नहीं है। यदि किसी महिला से किसी भी व्यक्ति अथवा प्राणी को जान का खतरा है तो ऐसी महिला से दूरी रखना ही सबसे अच्छा उपाय है। लेकिन डायन प्रथा का विश्वास करने वाले यह नहीं जानते कि किसी स्त्री को डायन कौन घोषित करता है और क्यों ? भोपा स्वयं या किसी विशेष प्रभावशाली व्यक्ति के कहने पर यह कार्य करता है। यह अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखने या किसी व्यक्तिगत हित की ओट में यह करता है। भोपा जंगली जड़ी–बुटियों का जानकार भी होता है। उन्हीं का गलत प्रयोग कर विशिष्ट महिला को डायन घोषित कर चमत्कारिक प्रभाव गांव के लोगों के सामने प्रस्तुत करता है और लोग चमत्कृत हो भोपा पर विश्वास कर लेते हैं।

जनजाति समाज को पिछड़ी हुई दशा से बाहर निकालने के लिए कई प्रयास किये जा रहे है। यह प्रयास आवश्यक भी है क्योंकि अगर ऐसा नहीं किया

गया तो जनजाति समाज अपनी पिछड़ी दशा की छवि से कभी बाहर नहीं निकल पायेगा। इन प्रयासों में सरकार व प्रशासन द्वारा डायन प्रथा को समाप्त करने के प्रयास भी सम्मिलित है। परन्तु क्या जनजाति समाज का युवा मानता है कि डायन प्रथा के समाप्त करने हेतु किसी के द्वारा कदम उठाये जा रहे है इन्हीं विचारों को जानने हेतु उत्तरदाताओं से इस संबंध में बात की गई।

सारणी 4.14

डायन प्रथा को समाप्त करने हेतु प्रयास

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	प्रयास				
		पुलिस	प्रशासन	जनजाति नेता	समाज	योग
युवक	उदयपुर	17 (34.0)	22 (44.0)	07 (14.0)	04 (8.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	13 (26.0)	11 (22.0)	23 (46.0)	03 (6.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	19 (38.0)	21 (42.0)	05 (10.0)	05 (10.0)	**50 (100.0)**
युवतियां	उदयपुर	20 (40.0)	11 (22.0)	12 (24.0)	07 (14.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	14 (28.0)	18 (36.0)	16 (32.0)	02 (4.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	17 (34.0)	13 (26.0)	12 (24.0)	08 (16.0)	**50 (100.0)**
योग		**100 (33.3)**	**96 (32.0)**	**75 (25.0)**	**29 (9.7)**	**300 (100.0)**

आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि जनजाति युवाओं के अनुसार वर्तमान में डायन प्रथा को समाप्त करने हेतु किनके द्वारा प्रयास किये जा रहे हैं। उदयपुर क्षेत्र के 50 युवक उत्तरदाताओं से इस संबंध में पूछने पर 34 प्रतिशत युवकों के अनुसार डायन प्रथा को समाप्त करने में पुलिस का महत्वपूर्ण योगदान है, 44 प्रतिशत के अनुसार प्रशासन इसमें अपना सहयोग देता है। 14 प्रतिशत के अनुसार जनजाति नेता इसमें सहायता करते है तथा इन सभी युवकों के अनुसार जनजाति समाज की भूमिका इस संबंध में ना समान है। किसी भी युवक ने डायन प्रथा को समाप्त करने में समाज की किसी भी प्रकार की भूमिका को नगण्य (8%) बताया है। इसी प्रकार यदि युवतियों की बात की जाए तो इसी क्षेत्र की 50 युवतियों में से 40 प्रतिशत युवतियों ने पुलिस द्वारा प्रयास करना बताया, वहीं 22 प्रतिशत ने

प्रशासन का नाम दिया, 24 प्रतिशत युवतियों ने जनजाति नेताओं के सहयोग को सराहा है तथा 14 प्रतिशत के अनुसार इस संबंध में समाज भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

इसी प्रकार डूंगरपुर के 50 युवकों में से 26 प्रतिशत युवकों के अनुसार डायन प्रथा को समाप्त करने हेतु पुलिस द्वारा प्रयास जारी है। 46 प्रतिशत जनजाति नेता द्वारा प्रयास करना स्वीकार करते हैं तथा मात्र 6 प्रतिशत युवक मानते हैं कि समाज भी इस संबंध में प्रयास कर रहा है। इस क्षेत्र के युवक वर्ग के अनुसार प्रशासन 22 प्रतिशत द्वारा इस संबंध में कोई विशेष कदम नहीं उठाया जा रहा है। वहीं दूसरी और इसी क्षेत्र की 50 युवतियों में से 28 प्रतिशत के अनुसार पुलिस का सहयोग है, 36 प्रतिशत प्रशासन का सहयोग मानती है। 32 प्रतिशत जनजाति नेताओं द्वारा प्रयास को स्वीकार करती हैं तथा 4 प्रतिशत के अनुसार समाज इस संबंध में कड़े कदत उठाता है।

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं से इस संबंध में पूछने पर 38 प्रतिशत युवक पुलिस का सहयोग मानते है 42 प्रतिशत युवक प्रशासन का सहयोग मानते है। 10 प्रतिशत ने जनजाति नेताओं का प्रयास माना है तथा इतने ही लोगों (10%) ने समाज का सहयोग स्वीकार किया है। दूसरी तरफ इस क्षेत्र की 50 युवतियों में से 34 प्रतिशत युवतियां मानती हैं कि डायन प्रथा को समाप्त करने हेतु पुलिस द्वारा आवश्यक प्रयास किये जा रहे है। 26 प्रतिशत युवतियों के अनुसार इस हेतु प्रशासन सकारात्मक रवैया अपना रहा है, 24 प्रतिशत युवतियां जनजाति नेताओं का सहयोग मानती है तथा 16 प्रतिशत समाज का साथ देते हुए उसकी सराहना करती है।

इस प्रकार स्पष्टतः सारणी अनुसार विदित होता है कि सर्वाधिक 50 प्रतिशत युवा वर्ग जो कि उदयपुर का है का मानना है कि डायन प्रथा को समाप्त करने हेतु प्रशासन का योगदान है। इनके अनुसार प्रशासन समय–समय पर विभिन्न कानूनों को काम में लेकर इस प्रथा को समाप्त करने का प्रयास करता रहता है तथा 39 प्रतिशत युवा वर्ग पुलिस के सहयोग को स्वीकार करता है। सर्वाधिक 48 प्रतिशत युवा वर्ग डूंगरपुर का है जो जनजाति नेताओं को इस हेतु लोगों को जागरूक करने में सक्षम मानता है। इनका मानना है कि जनजाति समाज के नेता लोग समाज को आगे बढ़ाने हेतु प्रेरित करते है तथा उन्हें अपने भाषणों से समझाने की कोशिश करते है कि जनजाति समाज केवल इसलिए पीछे है क्योंकि वह कई कुप्रथाओं से जकड़ा हुआ है यदि यह समाज इन कुप्रथाओं से नाता तोड़ता है तो उसे समृद्ध बनने से कोई नहीं रोक सकता। इसी प्रकार सर्वाधिक 26 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ा का है जो समाज द्वाराजनजाति समाज में डायन प्रथा को समाप्त करने में प्रयास को स्वीकार करता है। यदि सभी 300 उत्तरदाताओं की बात की जाय तो सर्वाधिक 33.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि डायन प्रथा को समाप्त करने में पुलिस द्वारा प्रयास किये जा रहे हैं।

जनजाति समाज का अधिकांश युवा वर्ग समाज का विरोध करता है और कहता है कि जनजाति समाज के पिछड़ेपन का कारण इनका अपना समाज है जो इन्हें और इस समाज के लोगों अंधविश्वास और कुप्रथाओं की बेड़ियों में जकड़ कर रख रहा है यदि ये लोग इनसे निकलना भी चाहें तो भी समाज के रीति–रिवाजों के बंधन इन्हें अपनी और खींच लेते है। इनका मानना है कि जनजाति समाज में डायन प्रथा का सर्वाधिक असर है जो अन्य समाज से कहीं अधिक है। समाज द्वारा इस प्रथा को समाप्त करने हेतु कोई प्रयास नहीं होता और इसी कारण दिन–प्रतिदिन जनजाति समाज इन कुप्रथाओं के दलदल में धंसता जा रहा है।

दागना प्रथा

दागना प्रथा को परम्परागत प्रथा माना जाता है जो कई क्षेत्रों में आज भी प्रचलित है। कईं युवा इसकी जानकारी रखते हैं और कईं युवा नहीं रखते। यह एक ऐसी प्रथा है जिसमें किसी भी व्यक्ति को कोई भी बीमारी हो उससे निजात पाने के लिए जनजाति समाज के लोग ड़ाम लगवाते है जिसमें बीमार व्यक्ति के शरीर का किसी विशेष नस को जलाया जाता है और यह मान्यता है कि उससे वह व्यक्ति ठीक हो जाता है। यह प्रथा सबसे ज्यादा बच्चों पर आजमाई जाती है। निम्न सारणी से जनजाति क्षेत्र के चयनित युवा वर्ग की दागना प्रथा के बारे में जानकारी का पता चलता है।

सारणी 4.15

युवाओं को दागना प्रथा की जानकारी

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	18 (36.0)	32 (64.0)	**50 (100.0)**	22 (44.0)	28 (56.0)	**50 (100.0)**	40 (40.0)	60 (60.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	30 (60.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**	27 (54.0)	23 (46.0)	**50 (100.0)**	57 (57.0)	43 (43.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	28 (56.0)	22 (44.0)	**50 (100.0)**	21 (42.0)	29 (58.0)	**50 (100.0)**	49 (49.0)	41 (41.0)	**100 (33.4)**
योग	**76 (50.7)**	**74 (49.3)**	**150 (100.0)**	**70 (46.7)**	**82 (53.3)**	**150 (100.0)**	**146 (48.7)**	**154 (51.3)**	**300 (100.0)**

उदयपुर क्षेत्र से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं से जब इस प्रथा की जानकारी के बारे में पूछा गया तो 36 प्रतिशत ने दागना प्रथा की जानकारी दी और 64 प्रतिशत युवकों ने इस बारे में अनभिज्ञता जताई। जबकि युवतियों में 44

प्रतिशत ने इस प्रथा के बारे में बताया और 56 प्रतिशत ने इस सम्बन्ध में इन्कार कर दिया। डूंगरपुर में 50 युवक उत्तरदाताओं में से 60 प्रतिशत ने इस सम्बन्ध में जानकारी दी व 40 प्रतिशत ने अनभिज्ञता जताई। वहीं 50 युवतियों में से 54 प्रतिशत युवतियां दागना प्रथा के बारे में जानती हैं और 46 प्रतिशत नहीं जानती। बांसवाड़ा में 50 युवक उत्तरदाताओं में से 56 प्रतिशत युवक उत्तरदाता दागना प्रथा की जानकारी रखते हैं जबकि 44 प्रतिशत युवक उत्तरदाता इस प्रथा से अनजान हैं। वहीं इस क्षेत्र की 50 युवतियों में से 42 प्रतिशत युवतियों को दागना प्रथा की जानकारी है और 58 प्रतिशत इस प्रथा से अनभिज्ञ है।

इस तुलनात्मक दृष्टि से सर्वाधिक 57 प्रतिशत युवा वर्ग डूंगरपुर का है जो दागना प्रथा की जानकारी रखता हैं तथा सर्वाधिक 60 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का है जो इस दागना प्रथा से अनभिज्ञ है। अनुसंधान के दौरान कई उत्तरदाताओं द्वारा इस बात को स्वीकार किया गया वह डाम लगाने से ठीक हुए हैं, पर कई उत्तरदाताओं ने इन्कार भी किया है। तीनों जिलों के सर्वाधिक 51 प्रतिशत उत्तरदाता दागना प्रथा की जानकारी नहीं रखते।

मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बच्चों की अविकसित योग्यताओं, क्षमताओं, शक्तियों और रूचियों को इस प्रकार निर्देशित करना कि वे अधिक से अधिक उपयोगी बन सके। अतः शिक्षा व्यक्ति का इस प्रकार से मार्गदर्शन करती है कि वह अपने परिवार, समाज तथा राष्ट्र के लिए उपयोगी अंग बनता है। क्या यही शिक्षा मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता लाने में सहयोग दे पायी है ? इसी संबंध में उत्तरदाताओं से जानकारी प्राप्त की गई।

सारणी 4.16

क्या वर्तमान शिक्षा से मानवाधिकारों के प्रति चेतना जाग्रत हुई ?

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	15 (30.0)	35 (70.0)	**50 (100.0)**	17 (34.0)	33 (66.0)	**50 (100.0)**	32 (32.0)	68 (78.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	08 (16.0)	42 (84.0)	**50 (100.0)**	11 (22.0)	39 (78.0)	**50 (100.0)**	19 (19.0)	81 (81.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	13 (26.0)	37 (74.0)	**50 (100.0)**	15 (30.0)	35 (70.0)	**50 (100.0)**	28 (28.0)	82 (82.0)	**100 (33.4)**
योग	**36 (24.0)**	**114 (76.0)**	**150 (100.0)**	**43 (28.7)**	**107 (71.3)**	**150 (100.0)**	**79 (26.3)**	**221 (73.7)**	**300 (100.0)**

सारणी संख्या 4.16 एवं आरेख 4.7 में वर्णित आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि उदयपुर से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं से जब इस संबंध में विचार पूछे गऐ कि क्या वर्तमान शिक्षा द्वारा मानवाधिकारों के प्रति चेतना जागृत हुई है ? तो 30 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार वर्तमान शिक्षा ने मानवाधिकार के प्रति चेतना जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। परन्तु 70 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं के अनुसार वर्तमान शिक्षा केवल किताबी ज्ञान है जो व्यवहारिक जीवन में उपयोगी नहीं है। वर्तमान शिक्षा में अधिकारों को पढ़ाया जा रहा है परन्तु मानवाधिकार से संबंधित कोई विशेष विवरण नहीं दिया गया जिससे की उसे याद रखा जा सके। इसी संबंध में युवतियों से भी जानकारी प्राप्त की गई। 50 युवतियों में से 34 प्रतिशत इस तथ्य से सहमत हैं कि वर्तमान शिक्षा मानवाधिकार के प्रति चेतना जागृत कर रही है। परन्तु 66 प्रतिशत के अनुसार वर्तमान शिक्षा की मानवाधिकारों के प्रति जागृति लाने में कोई भूमिका नहीं है।

इसी प्रकार डूंगरपुर से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से महज 16 प्रतिशत वर्तमान शिक्षा को महत्वपूर्ण मानते हैं। इनके अनुसार वह स्वयं वर्तमान शिक्षा के कारण ही यह जानते हैं कि मानवाधिकार क्या है? जबकि 84 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं के अनुसार वर्तमान शिक्षा नीति मानवाधिकारों की जागृति के संबंध में कमजोर है। 50 युवतियों में से 22 प्रतिशत युवतियां मानती हैं कि वर्तमान शिक्षा मानवाधिकारों के संबंध में जागरूकता ला रही है परन्तु 78 प्रतिशत युवतियां इस विचार से असहमत हैं।

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 26 प्रतिशत युवक उत्तरदाता वर्तमान शिक्षा से सन्तुष्ट है तथा मानवाधिकार से संबंधित जागरूकता से भी सन्तुष्ट हैं जबकि 74 प्रतिशत युवक उत्तरदाता मानते हैं कि वर्तमान शिक्षा से केवल अधिकारों की जानकारी मिलती है परन्तु मानवाधिकारों के संबंध में स्पष्टतः नहीं बताया जाता। यदि मानवाधिकार को वास्तविकता की स्थिति में लाना है तो मानवाधिकार को एक अवधारणा के रूप में पढ़ाया जाय तभी इसे स्पष्टतः समझा और जाना जा सकता है अन्यथा यह मानवाधिकार प्रत्येक नागरिक की पहुंच से दूर हि रहेंगे। इसी तरह से 50 युवतियों से इस संबंध में पूछने पर 30 प्रतिशत युवतियां मानती हैं कि वर्तमान शिक्षा मानवाधिकार के संबंध में जागरूकता ला रही है और 70 प्रतिशत युवतियां कहती हैं कि वर्तमान शिक्षा मानवाधिकार की जागरूकता के लिए कोई विशेष प्रयास नहीं कर रही है।

इस प्रकार तीनों ही जिलों का तुलात्मक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 32 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का है जिनके अनुसार वर्तमान शिक्षा मानवाधिकारों के प्रति चेतना जागृत करने में सफल हुई है तथा तीनों ही जिलों के 73 प्रतिशत उत्तरदाता मानवाधिकारों के प्रति चेतना जागृत करने में वर्तमान शिक्षा की भूमिका को नगण्य मानते हैं। सर्वाधिक 81 प्रतिशत युवा वर्ग डूंगरपुर के हैं

जिनके अनुसार वर्तमान शिक्षा मानवाधिकार के संबंध में जागरूकता लाने में असफल रही है।

शिक्षा के अधिकार का जनजाति समाज पर प्रभाव

संविधान संशोधन अधिनियम 2002 ने भारत के संविधान में अन्त स्थापित अनुच्छेद 21(क) के तहत मौलिक अधिकार के रूप में छः से चौदह वर्ष के आयु समूह में सभी बच्चों को मुफ्त व अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान रखा है। निःशुल्क व अनिवार्य बाल शिक्षा का अर्थ है कि औपचारिक स्कूल जो कतिपय अनिवार्य मानदण्डों और मानको को पूरा करता है में सन्तोषजनक और एक समान गुणवत्ता वाली पूर्णकालिक प्रारम्भिक शिक्षा प्रत्येक बच्चें का अधिकार है।

प्रत्येक बच्चें को निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा मिलने का अर्थ है कि आगे वाली पीढ़ी में ना के बराबर निरक्षर होगी। अर्थात सभी शिक्षित होगे। इस अधिकार का समाज पर प्रभाव पड़ेगा। जनजाति समाज पर शिक्षा के अधिकार का क्या प्रभाव पड़ा यह जानने का प्रयास करते हुए चयनित जनजाति सदस्यों से इस संबंध में जानकारी ली गई।

इन सदस्यों का मानना है कि शिक्षा के अधिकार का हमारे समाज पर यह प्रभाव पड़ा कि वर्तमान बच्चे विद्यालय जाने लगे हैं, लोगों मे शिक्षा को लेकर जागरूकता आयी है। जनजाति लोग शिक्षा के महत्व को समझने लगे है। पहले आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण अभिभावक अपने बच्चों को पढ़ने नहीं भेजते थे साथ ही महंगाई के इस दौर में घर का खर्च और बच्चों की पढ़ाई दोनो संभव नहीं है। परन्तु निःशुल्क शिक्षा के प्रावधान के बाद बच्चों के लिए शिक्षा के द्वार खुल गए है अब बच्चे पढ़ने लगे है। 6–14 वर्ष के बच्चे शिक्षा ग्रहण करने के बाद उच्च शिक्षा की ओर भी उन्मुख हो रहे है और आगे बढ़ने की ललक बढ़ रही है। बच्चों को आगे बढ़ता देख अभिभावक भी खुश होते है और उन्हें आगे बढ़ने व पढ़ने हेतु प्रोत्साहित करने लगे है। समाज में साक्षरों की संख्या बढ़ रही है और समाज शिक्षित हो रहा है।

कुछ लोग इससे नाखुश भी है जिनका मानना है कि इस अधिकार का न तो समाज पर और न ही उसके सदस्यों पर इसका कोई प्रभाव पड़ा है क्योंकि जो अपने बच्चें को पढ़ाना चाहते थे वो तो पहले भी पढ़ाते थे चाहे पैसा खर्च करके, परन्तु जो लोग बच्चों को नहीं पढ़ाना चाहते वो नही पढ़ा रहे हैं। इन लोगों का मानना है कि आजकल अच्छी नौकरियों की कमी है बच्चे पढ़ लिखकर बेरोजगार बन रहे हैं। इनके अनुसार केवल इतनी पढ़ाई काफी है जिसमें थोड़ा पढ़ा जा सके और थोड़ा हिसाब किया जा सके। इसके अलावा पढ़ लिखकर बेरोजगार बनने से

अच्छा है केवल साक्षर होकर कोई काम सीख लो कम से कम कोई रोजगार तो होगा।

आज के प्रगतिशील समाज में संचार माध्यमों के द्वारा समाज में एक नई क्रान्ति आई है। विशेषकर समाचार पत्रों, रेडियो तथा दूरदर्शन के माध्यम से यह क्रान्ति आग की तरह फैली है। वर्तमान युग में प्रकाशन तथा संचार से आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक अधिकारों की समुचित अभिव्यक्ति द्वारा एक सकारात्मक भूमिका की अपेक्षा की जा सकती है। वर्तमान युग मीडिया का युग कहा जाता है और आज मीडिया अर्थात जनसंचार के साधनों की पहुंच घर–घर तक है।

जनसंचार के साधन यथा दूरदर्शन, अखबार, रेड़ियो, मोबाईल आदि हर तरह से सूचनाओं को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुंचाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ऐसे में यह जानाना आवश्यक है कि क्या ये जनसंचार के साधन मानवाधिकार के प्रति जागरूकता फैलाने में अपना योगदान देते है ? इसी जिज्ञासा को शांत करने हेतु चयनित जिलों के सभी उत्तरदाताओं से इस संबंध में जानकारी ली गई।

सारणी 4.17

मानवाधिकारों के प्रति चेतना के प्रसार में जनसंचार के साधनों की भूमिका

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	15 (30.0)	35 (70.0)	**50 (100.0)**	19 (38.0)	31 (62.0)	**50 (100.0)**	34 (34.0)	66 (66.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	18 (36.0)	32 (64.0)	**50 (100.0)**	14 (28.0)	36 (72.0)	**50 (100.0)**	32 (32.0)	68 (68.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	10 (20.0)	40 (80.0)	**50 (100.0)**	20 (40.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	30 (30.0)	70 (70.0)	**100 (33.4)**
योग	**43 (28.7)**	**107 (71.3)**	**150 (100.0)**	**53 (35.3)**	**97 (64.67)**	**150 (100.0)**	**96 (32.0)**	**204 (68.0)**	**300 (100.0)**

सारणी 4.13 एवं आरेख 4.8 के अनुसार उदयपुर जिले से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 30 प्रतिशत युवक ही मानते हैं कि जनसंचार के साधन मानवाधिकार के प्रति जागरूकता फैलाने मे अपनी भूमिका निभाते है। इनके अनुसार दूरदर्शन तथा अखबार के कारण हम दुनिया व दुनिया के लोगों से संपर्क में रहते हैं। टेलीविजन के माध्यम से ही हमें सही गलत के मायने पता चलते हैं

तथा गलत होने पर कार्यवाही क्या करनी है? इसकी जानकारी भी हमें इनसे ही मिलती है। दूरदर्शनएवं अखबार में सरकार द्वारा चलायी जाने वाली विभिन्न योजनाओं की जानकारी मिलती है। 'जागो ग्राहक जागो'जैसे विज्ञापनों से उपभोक्ताओं के अधिकारों का पता चलता है। ऐसी कई सूचनाएं व जानकारी है जो जनसंचार के साधनों से मिलती है। वहीं दूसरी और 70 प्रतिशत युवकों का मानना है कि जनसंचार के साधनों की मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में कोई भूमिका नहीं है जनसंचार के साधनलोगों में जागरूकता कम और फुहड़ता एवं अश्लिलता ज्यादा फैलाते हैं। दूरदर्शन में महिलाओं का अंग प्रदर्शन होता है और अखबार में साबुन, शैम्पू व वैवाहिक विज्ञापनों की भरमार होती है। मीडिया जिस प्रकार बेबाक होकर गलतियों को उजागर करता था वहीं आज अपना मुंह नोटों से दबाकर अपनी छवि को धूमिल करता नजर आ रहा है अर्थात् आज जनसंचार के साधनों की भूमिका मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने के क्षेत्र में नगण्य रह गयी है। वहीं इसी क्षेत्र की 62 प्रतिशत युवतियां भी यही मानती हैं कि जनसंचार के साधनों का आज कोई महत्व नहीं रह गया है और मानवाधिकार के क्षेत्र में तो बिल्कुल नहीं। इसके विपरीत 38 प्रतिशत युवतियां मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में मीड़िया की भूमिका को अहम मानती हैं।

इसी तरह डूंगरपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं से भी इसी संबंध में पूछा गया तो वहां भी 36 प्रतिशत युवक मानते हैं कि मानवाधिकार के प्रति जागरूकता फैलाने में जनसंचार के साधनों ने अपनी भूमिका निभाई है और 64 प्रतिशत युवकों के अनुसार यह तथ्य एकदम गलत है। 50 युवतियों से इस बारे में पूछने पर 28 प्रतिशत युवतियों ने इस संबंध मे पूछने पर सहमती जताई। जबकि 72 प्रतिशत युवतियां इस बात से असहमत थी कि जनसंचार के साधन किसी भी तरह से मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में अपनी भूमिका निभाते हैं।

यदि तीनों ही जिलों की बात की जाय तो सभी 300 उत्तरदाताओं में से 68 प्रतिशत उत्तरदातामानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में मीड़िया की भूमिका को नगण्य मानते हैं।

बांसवाड़ा जिले के 50 युवक उत्तरदाताओं से भी इस संबंध मे जानकारी ली गई जिसमें महज 20 प्रतिशत युवक उत्तरदाता मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में जनसंचार के साधनों की भूमिका को अहम मानते हैं जबकि 80 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं के अनुसार जनसंचार के साधनों का मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में कोई योगदान नहीं लगता। वहीं युवतियों में से 40 प्रतिशत मानती हैं कि आज प्रत्येक खबर व सूचना जनसंचार के माध्यम से ही मिलती है। अतएव प्रत्येक प्रकार की जागरूकता में संचार के साधनों का अहम हाथ है जबकि 60 प्रतिशत युवतियों के अनुसार जनसंचार के साधनों की कोई महत्वता नहीं लगती तथा मानवाधिकार के संबंध में ये साधन ऐसा कोई कार्यक्रम अथवा सूचना नहीं देते जो लोगों में मानवाधिकार के प्रति जागरूकता ला सके।

इस प्रकार तीनों ही जिलों का अध्ययन करने से एक ही बात स्पष्ट होती है कि जनसंचार के साधनों ने अपनी छवी को लोगों के समक्ष सही ढ़ंग से प्रस्तुत नहीं किया। तीनों ही जिलों में मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में जनसंचार के साधनों की भूमिका को मानने वालों का प्रतिशत ना मानने वालों से काफी कम है जिससे स्पष्टतः दृष्टिगत होता है कि वास्तव में जनसंचार के साधनों की भूमिका मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने मे नगण्य साबित हुई है।

सारणी 4.18

मानवाधिकारों के प्रति चेतना के प्रसार में जनसंचार साधनो की भूमिका के पक्ष में तर्क

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र (उत्तरदाता)	पक्ष तर्क					योग
		विभिन्न कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता	नई योजनाओं की जानकारी	विभिन्न विज्ञापनों द्वारा जानकारी	लोगों से संपर्क में रहते	कोई उत्तर नहीं	
युवक	उदयपुर (50)	06 (12.0)	08 (16.0)	3 (6.0)	12 (24.0)	21 (42.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर (50)	11 (22.0)	09 (18.0)	13 (26.0)	05 (10.0)	12 (24.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा (50)	07 (14.0)	10 (20.0)	10 (20.0)	04 (8.0)	19 (38.0)	**50 (100.0)**
युवतियां	उदयपुर (50)	15 (30.0)	10 (20.0)	08 (16.0)	07 (14.0)	10 (20.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर (50)	14 (28.0)	12 (24.0)	06 (12.0)	08 (16.0)	10 (20.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा (50)	18 (36.0)	03 (6.0)	15 (36.0)	10 (20.0)	4 (8.0)	**50 (100.0)**
योग	**300 (100.0)**	**71 (23.7)**	**52 (17.3)**	**55 (18.3)**	**46 (15.3)**	**76 (25.4)**	**300 (100.0)**

उपरोक्त सारणी 4.16 के आंकड़े स्पष्ट करते है कि मानवाधिकारों के प्रति चेतना फैलाने में जनसंचार साधनों की भूमिका के पक्ष में उत्तरदाताओं ने क्या तर्क दिये हैं। उदयपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में 12 प्रतिशत के अनुसार जनसंचार के साधन विभिन्न कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता फैलाते है, 16 प्रतिशत के अनुसार नई–2 योजनाओं की जानकारी मिलती है, 06 प्रतिशत के अनुसार विभिन्न प्रकार के विज्ञापनों से जानकारी प्राप्त होती है तथा 24 प्रतिशत के अनुसार लोगों से संपर्क मे रहते हैं। वहीं 50 युवतियों में से 16 प्रतिशत के

अनुसार विज्ञापनों द्वारा जानकारी, 14 प्रतिशत के अनुसार लोगों से संपर्क रहता है, 20 प्रतिशत के अनुसार नई–नई योजनाओं की जानकारी तथा 30 प्रतिशत के अनुसार कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता में सहायक है।

डूंगरपुर के आंकड़ों के आधार पर 50 में से 18 प्रतिशत उत्तरदाता नई–2 योजनाओं की जानकारी, 10 प्रतिशत लोगों से संपर्क, 22 प्रतिशत कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता तथा 26 प्रतिशत विभिन्न विज्ञापनों द्वारा जानकारी को स्वीकार करते हैं। वहीं दूसरी ओर युवतियों में 12 प्रतिशत के अनुसार विभिन्न विज्ञापनों द्वारा जानकारी मिलती हैं। 16 प्रतिशत के अनुसार लोगों के संपर्क में रहते है, 24 प्रतिशत के अनुसार नई योजनाओं की जानकारी मिलती हैं तथा 28 प्रतिशत के अनुसार विभिन्न कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता फैलती हैं।

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 08 प्रतिशत के अनुसार लोगों से संपर्क रहता है, 14 प्रतिशत के अनुसार विभिन्न कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता, 20 प्रतिशत के अनुसार नई योजनाओं की जानकारी व 20 प्रतिशत के अनुसार विज्ञापनों से जानकारी मिलती हैं। इसी क्षेत्र की 50 युवतियों में से 06 प्रतिशत नई योजनाओं की जानकारी, 20 प्रतिशत लोगों से संपर्क, 30 प्रतिशत विज्ञापनों द्वारा जानकारी तथा 36 प्रतिशत कार्यक्रमों के प्रति जानकारी मिलने में सहयोगी बन गई।

मानवाधिकारों के प्रति चेतना जागृत करने में जनसंचार साधनों की भूमिका के पक्ष में दिए गए विभिन्न तर्कों में सर्वाधिक 23 प्रतिशत उत्तरदाता विभिन्न कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता फैलाने वाले तर्क को अपना मत देते हैं।वहीं दूसरी ओर इस सम्बन्ध में कोई जवाब नहीं देने वालों का प्रतिशत भी कम नहीं है। उदयपुर के 31 प्रतिशत, डूंगरपुर के 22 प्रतिशत तथा बांसवाड़ा के 23 प्रतिशत उत्तरदाता इस सम्बन्ध में कोई जवाब नहीं देते।

सारणी 4.19

मानवाधिकारों के प्रति चेतना के प्रसार में जनसंचार साधनो की भूमिका के विपक्ष में तर्क

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र (उत्तरदाता)	विपक्ष तर्क			
		बेकार विज्ञापन	फूहड़ता	निरर्थक समाचार	भ्रष्टाचार
युवक	उदयपुर (50)	30 (60.0)	18 (36.0)	15 (30.0)	20 (40.0)
	डूंगरपुर (50)	16 (32.0)	19 (38.0)	30 (60.0)	21 (42.0)
	बांसवाड़ा (50)	36 (72.0)	12 (24.0)	30 (60.0)	18 (36.0)

युवतियां	**उदयपुर (50)**	17 (34.0)	21 (42.0)	23 (46.0)	15 (30.0)
	डूंगरपुर (50)	25 (50.0)	19 (38.0)	30 (60.0)	24 (48.0)
	बांसवाड़ा (50)	29 (58.0)	27 (54.0)	18 (36.0)	7 (14.0)
योग	**300 (100.0)**	**153 (51.0)**	**116 (38.7)**	**146 (48.7)**	**105 (35.0)**

सारणी 4.19 में वर्णित आंकड़े मानवाधिकारों के प्रति चेतना फैलाने में जनसंचार साधनों की भूमिका के विपक्ष के तर्क को स्पष्ट करते हैं। सारणी में उदयपुर के आंकड़े बताते है कि 50 युवक उत्तरदाताओं में से 30 प्रतिशत के अनुसार जनसंचार के साधनों से बेमतलब की खबरें मिलती है, 36 प्रतिशत के अनुसार फुहड़ता दिखती है, 40 प्रतिशत के अनुसार ये साधन पैसे खाकर सही तथ्य छुपा लेते है तथा 60 प्रतिशत के अनुसार तो इनमें केवल बेकार के विज्ञापनों का भरमार है। वहीं इस क्षेत्र की 50 युवतियों में से 30 प्रतिशत युवतियां सही तथ्य छुपाने, 34 प्रतिशत बेकार विज्ञापन, 42 प्रतिशत फुहड़ता व अश्लीलता तथा 46 प्रतिशत बेमतलब की खबरों के पक्ष में है।

ऐसे ही डूंगरपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 32 प्रतिशत के अनुसार बेकार विज्ञापन, 38 प्रतिशत के अनुसार फुहड़ता व अश्लिलता, 42 प्रतिशत पैसा खाकर सही तथ्य छुपाने तथा 46 प्रतिशत बेमतलब की खबरों का बोलबाला मानते हैं। दूसरी और 50 युवतियों में से 38 प्रतिशत युवतियां जनसंचार के साधनों से फुहड़ता व अश्लिलता फैलना मानती है, 48 प्रतिशत सही तथ्य छुपाने के पक्ष में है, 50 प्रतिशत बेकार के विज्ञापन तथा 60 प्रतिशत मानती है कि इनमें बेमतलब की खबरें ही आती हैं।

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 24 प्रतिशत युवक जनसंचार के साधनों को फुहड़ता में, 36 प्रतिशत पैसे खाने में, 60 प्रतिशत बेमतलब की खबरों में तथा 72 प्रतिशत बेकार के विज्ञापनों में आगे मानते है। वहीं इसी क्षेत्र की युवतियों की बात की जाय तो 50 में से 14 प्रतिशत मानती है कि जनसंचार के साधन पैसे खाकर सही तथ्य छुपाते है, 36 प्रतिशत बेमतलब की खबरों के पक्ष में है, 54 प्रतिशत मानती है कि इनमें फूहड़ता व अश्लिलता अधिक है, तथा 58 प्रतिशत के अनुसार बेकार के विज्ञापनों का अधिक स्थान हैं।सभी 300 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 51 प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि जनसंचार के साधनों में बेकार के विज्ञापनों का बोलबाला है।

जनजाति समाज के चयनित उत्तरदाताओं से यह जानने का प्रयास किया गया कि जनजाति समाज तथा युवाओं का मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता ना

होने के पीछे क्या कारण हैं? उक्त सारणी के आंकड़े यह स्पष्ट करते है। उदयपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 30 प्रतिशत के अनुसार संकोच, 40 प्रतिशत के अनुसार अशिक्षा, 50 प्रतिशत के अनुसार जागरूकता संबंधी विशेष कार्यक्रमों का अभाव तथा 56 प्रतिशत के अनुसार अज्ञानता इसका प्रमुख कारण हैं। जबकि 50 युवतियों में से 34 प्रतिशत के अनुसार अज्ञानता, 36 प्रतिशत के अनुसार संकोच, 40 प्रतिशत के अनुसार अशिक्षा तथा 72 प्रतिशत के अनुसार जागरूकता संबंधी कार्यक्रमों के अभाव के कारण ही मानवाधिकारों के प्रति जागृति कम हैं।

इसी प्रकार डूंगरपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 20 प्रतिशत संकोच को, 30 प्रतिशत अज्ञानता को, 56 प्रतिशत विशेष कार्यक्रमों के अभाव को, तथा 60 प्रतिशत अशिक्षा को प्रमुख कारण मानते हैं। वहीं 50 युवतियों में से 26 प्रतिशत मानती है कि संकोची प्रवृति के कारण जनजाति सदस्य मानवाधिकारों को नहीं जानते, जबकि 30 प्रतिशत अशिक्षा, 38 प्रतिशत अज्ञानता व 40 प्रतिशत जागरूकता संबंधी कार्यक्रमों के अभाव को इसका मुख्य कारण मानती हैं।

सारणी 4.20

मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता ना होने के कारण

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र (उत्तरदाता)	विपक्ष तर्क			
		अज्ञानता	अशिक्षा	निर्लिप्तता	जागरूकता संबंधी विशेष कार्यक्रमों का अभाव
युवक	उदयपुर (50)	28 (56.0)	20 (40.0)	15 (30.0)	25 (50.0)
	डूंगरपुर (50)	15 (30.0)	30 (60.0)	10 (20.0)	28 (56.0)
	बांसवाड़ा (50)	10 (20.0)	21 (42.0)	12 (24.0)	30 (60.0)
युवतियां	उदयपुर (50)	17 (34.0)	20 (40.0)	18 (36.0)	36 (72.0)
	डूंगरपुर (50)	19 (38.0)	15 (30.0)	13 (26.0)	20 (40.0)
	बांसवाड़ा (50)	22 (44.0)	32 (64.0)	10 (20.0)	18 (36.0)
योग	**300 (100.0)**	**111 (37.0)**	**138 (46.0)**	**78 (26.0)**	**157 (52.3)**

बांसवाड़ा के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 20 प्रतिशत अज्ञानता को, 24 प्रतिशत संकोच को, 42 प्रतिशत अशिक्षा को तथा 60 प्रतिशत विशेष कार्यक्रमों के अभाव को कारण मानते हैं। जबकि 50 युवतियों में से 20 प्रतिशत संकोच को, 36 प्रतिशत जागरूकता संबंधी कार्यक्रमों को, 44 अज्ञानता को तथा 64 प्रतिशत अशिक्षा को इसका मुख्य कारण मानती हैं।

इस प्रकार मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता ना होने के पीछे मुख्य कारणों में सर्वाधिक मत मानवाधिकारों के संबंध में जागरूकता संबंधी विशेष कार्यक्रमों के अभाव को माना गया हैं।

मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता नहीं होने के पीछे के कारणों का विश्लेषण करें तो कह सकते हैं कि सरकार जनजाति समाज को अपने अधिकारों तथा मानवाधिकारों के प्रति जागरूक करने हेतु कई प्रयास कर रही है इसके पश्चात् भी जनजाति समाज अपने अधिकारों व मानवाधिकारों से वंचित है। अत्याचारों का शिकार होने पर भी ये कहीं शिकायत नहीं कर पाते ? इसके पीछे क्या कारण निहित है यही जानने हेतु चयनित क्षेत्रों के युवाओं से इस संबंध में उनके विचार लिए गये। युवाओं ने अपने विचारों द्वारा इसके कारण बताये कि जनजाति समाज के सदस्यों के पास इन सब बातों के लिए समय ही नहीं है। ये लोग अपना सारा दिन खेत व घर के कामों में ही निकाल लेते है। घर के पुरूष घर से बाहर और महिलाएं घर में काम करती है। ये लोग दिन रात मेहनत करके केवल पैसा कमाने की कोशिश करते हैं जिससे की ये अपने बच्चों को बेहतर भविष्य दे सके। अपने पर साहूकार के कर्ज हैं तो उतार सके। चयनित युवकों का कहना है कि सरकार मानवाधिकार के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए नुक्कड़ नाटकों का आयोजन करती है, विद्यालयों व महाविद्यालयों में इस पर भाषण करवाती है। मानवाधिकार दिवस मनाया जाता है। परन्तु ये सब पर्याप्त नहीं है।

जनजाति समाज के सदस्य अभी भी किसी भी नयी सोच अथवा वस्तु को अपनाने से डरते है। उन्हें लगता है कि वे कमजोर हैं और लोग इसका फायदा उठा सकते है और इसी कारण ये लोग किसी की बात को सुनने, समझने या मानने की कोशिश नहीं करते। युवा वर्ग के अनुसार वास्तव में तो सरकार द्वारा कोई कारगर प्रयास किये ही नहीं जा रहे है। जो कार्यक्रम चल रहे हैं वो अत्यन्त छोटे स्तर पर हैं जहां तक जनजाति समाज की पहुंच नहीं है। इनके लिए जो बरसों से चला आ रहा है वही इनकी परम्परा है। शिक्षा के व्यापक प्रचार–प्रसार नहीं होने के कारण भी येअंधविश्वास के शिकार हैं। महिलाएं घरेलू हिंसा का शिकार हर रोज होती है। स्त्रीयां नातरे चली जाती है। कदम–कदम पर मानवाधिकार हनन् होता है परन्तु जानकारी और जागरूकता के अभाव में यह वर्षों से चला आ रहा है। अशिक्षा, अंधविश्वास, अज्ञानता, संकोच एवं निर्लिप्तता इसके प्रमुख कारण हैं।

मानवाधिकारों के संरक्षण के सम्बन्ध में विमर्श

मानवाधिकार से संबंधित सभी प्रकार के विवरणों के पश्चात् उत्तरदाताओं से यह भी पूछा गया कि क्या आपके समाज में मानवाधिकारों के संरक्षण को लेकर कोई चर्चा होती है? आश्चर्य की बात थी कि 300 उत्तरदाताओं में से किसी भी क्षेत्र के किसी एक भी उत्तरदाता ने इस संबंध में हां नही कहा। सभी युवाओं का यही कहना था कि जनजाति समाज मानवाधिकारों के पूरे अर्थ को ही नहीं जानता तो इसके संरक्षण को लेकर क्या चर्चा करेगा। यहां तक कि इनका तो यह भी कहना है कि ये मानवाधिकार शब्द ही हमारे व हमारे समाज के लिए अपरिचित है। हमने इसके बारे में कभी नहीं सुना।

जागरूकता के अभाव में मानवाधिकार अथवा मानव के अधिकारों का संरक्षण करना मुश्किल सा लगता है। ऐसा नहीं है कि केवल अशिक्षित लोग इससे अपरिचित है बल्कि कई शिक्षित व्यक्ति भी इस बारें में कोई जानकारी नहीं रखते। स्वाभाविक है कि जनजाति समाज व इसका प्रत्येक वर्ग हर रोज अत्याचार व शोषण का शिकार हो। 21वीं सदी के इस युग में जहां शिक्षा का इतना प्रचार प्रसार है, मीडिया व जनसंचार के साधनों की पहुंच घर–घर तक है सरकार की नई–नई योजनाएं विकास कार्यक्रमों को लागू कर रही है, मानवाधिकारों की यह स्थिति विचारणीय विषय है।

जनजाति वर्ग की पिछड़ी हुई दशा के पिछे क्या कारण हो सकता है ? 21वीं सदी में भी यह वर्ग अपने अधिकारों से अनभिज्ञ है क्या, इसके पीछे गैर–जनजाति समाज किसी भी तरह उत्तरदायी हो सकता है। यहीं जानने का प्रयास करते हुए सभी क्षेत्रों के चयनित 300 उत्तरदाताओं से पूछा गया कि क्या गैर–जनजाति समाज के लोगों द्वारा जनजाति समाज का शोषण हो रहा है।

सारणी 4.21

गैर–जनजाति समाज के लोगों द्वारा शोषण

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	15 (30.0)	35 (70.0)	**50 (100.0)**	20 (40.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	35 (35.0)	65 (65.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	20 (40.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	25 (50.0)	25 (50.0)	**50 (100.0)**	45 (45.0)	55 (55.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	13 (26.0)	37 (74.0)	**50 (100.0)**	32 (64.0)	18 (36.0)	**50 (100.0)**	45 (45.0)	55 (55.0)	**100 (33.4)**
योग	**48 (32.0)**	**102 (68.0)**	**150 (100.0)**	**77 (51.3)**	**73 (48.7)**	**150 (100.0)**	**125 (41.7)**	**175 (58.3)**	**300 (100.0)**

उपरोक्त विषय में उदयपुर क्षेत्र से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 30 प्रतिशत उत्तरदाता मानते है कि गैर–जनजाति समाज के लोग उनका शोषण करते है वहीं 70 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार यह केवल भ्रामक तथ्य है। इसी क्षेत्र की 50 युवतियों से जब पूछा गया तो उनमें से 40 प्रतिशत युवतियों के अनुसार आज भी गैर–जनजाति समाज येन–केन प्रकारेण जनजाति समाज का शोषण करता ही जा रहा है।

डूंगरपुर क्षेत्र के 50 युवक उत्तरदाताओं से इस बारें में पूछने पर 40 प्रतिशत युवक ने इस इस बात पर सहमति जताई कि गैर–जनजाति समाज जनजाति समाज का शोषण करता है। 60 प्रतिशत के अनुसार गैर–जनजाति समाजों ने अब अपनी मानसिकता बदली है। जबकि 50 युवतियों से इस बारें में पूछने पर आधी अर्थात 50 प्रतिशत युवतियांइससे सहमत है तथा 50 प्रतिशत इससे असहमत है।

बांसवाड़ा क्षेत्र के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 26 प्रतिशत युवक उत्तरदाता इस बात को मानते है तथा 74 प्रतिशत युवक उत्तरदाता इससे असहमत है। इसके विपरीत युवतियों में 64 प्रतिशत मानती है कि वास्तव में गैर–जनजाति समाज आज भी जनजाति समाज का शोषण कर रहा है तथा 36 प्रतिशत के अनुसार यह यकिनन गलत है ऐसा कुछ भी नहीं है।

इस प्रकार सभी 300 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 58.3 प्रतिशत उत्तरदाता गैर–जनजाति समाज के लोगों द्वारा जनजाति समाज के शोषण को अस्वीकार करते हैं। यदि तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो प्रतिशत डूंगरपुर व बांसवाड़ा के क्रमशः 45–45 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि गैर–जनजाति समाज द्वारा जनजाति समाज का शोषण होता है। इन उत्तरदाताओं का कहना है कि आज जब समानता के अधिकार का चारों तरफ बोलबाला है फिर भी शोषण के स्वरूप देखे जा सकते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में भी कदम–कदम पर हम पर यह आरोप लगाये जाते है कि हम आरक्षण प्राप्त करके आगे बढ़ते है। हमें आगे बढ़ने के लिए अधिक प्रतिशत अंकों की आवश्यकता भी नहीं होती। यदि हमें सरकारी नौकरी भी मिलती है तो भी हमारी योग्यता पर शक किया जाता है।

युवाओं का यह भी कहना है कि जनजाति समाज की कई अनपढ़ महिलाएं गैर–जनजाति समाज के घरों में कपड़े व बर्तन करके अपना व अपने परिवार का भरण–पोषण करती है उनको भी अधिक काम करवा कर कम मजदूरी दी जाती है। यह भी एक तरह का शोषण ही है। गैर–जनजाति समाज के लोग जनजाति समाज के लोगों से बात करने से भी कतराते है। उन्हें हमसे बात करने या हमसे दोस्ती रखने में संकोच होता है। जनजाति समाज आज भी अपनी संस्कृति को साथ लेकर चलता है परन्तु ये गैर–जनजाति समाज के लोगों के लिए पिछड़ापनकहलाता है। आज भी मजदूरों को उनकी पूरी मजदूरी नहीं दी जाती। साहूकार अधिक ब्याज लेकर कम रकम देते है। गैर–जनजाति समाज ने किसी भी

प्रकार का बदलाव जनजाति समाज के लोगों के प्रति नहीं किया है। आज भी उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है। गैर–जनजाति समाज के ये भी नहीं चाहते कि जनजाति समाज पढ़–लिखकर आगे बढ़े क्योंकि इनका मानना है यदि ये लोग पढ़–लिख गये तो हम पर अपनी हुकूमत चलायेगे और हमें इनके हाथों के नीचे काम करना पड़ेगा।

गैर–जनजाति समाज द्वारा शोषण होने पर जनजाति सदस्यों द्वारा क्या कदम उठाए जाते हैं?

अनुसंधान हेतु चयनित क्षेत्र क युवा उत्तरदाताओं से इस संबंध में उनके विचार पूछे गये कि गैर–जनजाति समाज के लोगों द्वारा शोषण होने पर उनकी प्रतिक्रिया क्या होती हैं ? वे क्या करते हैं किस तरह के कदम उठाते है? यद्यपि अधिकांश युवाओं का मानना है कि गैर–जनजाति समाज द्वारा किसी भी प्रकार से जनजाति समाज का शोषण नहीं किया जाता।

परन्तु, कुछ युवा उत्तरदाताओं ने अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए कहा कि इसमें कोई अतिशयोक्ति नही है कि गैर–जनजाति समाज द्वारा जनजाति समाज के लोगों का शोषण आज भी होता है। परन्तु अब यह बात हम भी जानते है कि कानून सबके लिए है तथा गलत काम करने पर सजा सबको मिलती है। हम भी शिकायत करना जान गये है। उत्तरदाताओं के अनुसार यदि अब कोई हमारा शोषण करता है या हमें बेवजह भला–बुरा कहता है तो हम पुलिस का सहारा लेते हैं। पुलिस द्वारा हमारें प्रति सकारात्मक रवैया अपनाया जाता है। पुलिस हमारी सहायता करती है और दोषी को सजा दी जाती है।

यह तो स्पष्ट हो गया कि कुछ जनजाति युवा मानते हैं कि जनजाति समाज के सदस्यों का मानवाधिकार के अन्तर्गत शोषण होता है। गैर–जनजाति समाज द्वारा भी और स्वयं के समाज के सदस्यों के द्वारा भी, परन्तु यह जानना आवश्यक है कि क्या सरकार व कानून द्वारा इनकी सहायता की जाती है ? इसी उद्देश्य से चयनित जनजाति युवाओं से यह पूछा गया कि जनजाति समाज के सदस्यों का शोषण होने पर पुलिस की क्या भूमिका रहती है ?

सारणी 4.22

जनजाति समाज के लोगों का शोषण रोकने में पुलिस की भूमिका

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	पुलिस की भूमिका		
		सकारात्मक	नकारात्मक	योग
युवक	उदयपुर	32 (64.0)	18 (36.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	30 (60.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**

	बांसवाड़ा	41 (82.0)	09 (18.0)	**50 (100.0)**
युवतियां	**उदयपुर**	29 (58.0)	21 (42.0)	**50 (100.0)**
	डूंगरपुर	28 (56.0)	22 (44.0)	**50 (100.0)**
	बांसवाड़ा	38 (76.0)	12 (24.0)	**50 (100.0)**
योग		**198 (66.0)**	**102 (34.0)**	**300 (100.0)**

उदयपुर क्षेत्र के चयनित 50 युवकों से इस संबंध मे पूछने पर 64 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं द्वारा पुलिस की भूमिका को सकारात्मक व सहयोगात्मक बताया है। वहीं 36 प्रतिशत युवकों ने पुलिस की भूमिका को नकारात्मक व सहयोगात्मक बताया है। वहीं दूसरी और इसी क्षेत्र की 50 युवतियों से इस संबंध में पूछने पर 58 प्रतिशत ने सकारात्मक व सहयोगात्मक भूमिका को स्वीकार किया तथा 42 प्रतिशत ने नकारात्मक व असहयोग भूमिका को स्वीकार किया।

डूंगरपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं से इस संबंध में पूछने पर 60 प्रतिशत ने सकारात्मक व सहयोगात्मक भूमिका बताया तथा 40 प्रतिशत ने नकारात्मक व असहयोगात्मक भूमिका बताया। वहीं 50 युवतियों से इस बारें में पूछने पर 56 प्रतिशत ने सकारात्मक व सहयोगात्मक तथा 44 प्रतिशत ने नकारात्मक और असहयोगात्मक भूमिका को स्वीकार किया है।

बांसवाड़ा के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं से पुलिस की भूमिका को जानने के लिए जानकारी ली गई। जिसमें 82 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं ने सकारात्मक व सहयोगात्मक भूमिका तथा 18 प्रतिशत ने नकारात्मक व असहयोगात्मक भूमिका बताई। इसी तरह 50 युवतियों मे से 76 प्रतिशत युवतियां पुलिस की भूमिका को सहयोगात्मक व सकरात्मक बताती है तथा 24 प्रतिशत ने असहयोगात्मक व नकारात्मक बतायी है।

तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो सर्वाधिक 79 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ा का है जिनके अनुसार जनजाति समाज के सदस्यों की मानवाधिकार के तहत शोषण होने पर पुलिस की भूमिका सकारात्मक व सहयोगात्मक होती है। कुछ युवाओं के अनुसार अब पुलिस हमारी भी सुनती है और दोषिओं को सजा देने में हमारी सहायता करती है। हमें शोषण से मुक्त कराती है। समय–समय पर हमें विभिन्न कानूनों से अवगत भी कराती है। आजकल तो पुलिस विभाग द्वारा विद्यालयों व महाविद्यालयों में सेमिनार व गोष्ठियों के द्वारा युवाओं को विभिन्न

नियमों व कानूनों से अवगत कराया जाता है। अतः पुलिस द्वारा सकारात्मक भूमिका का सहयोग बताया गया है।

इसी प्रकार सर्वाधिक 42 प्रतिशत युवा वर्ग डूंगरपुर का है। जिनके अनुसार पुलिस केवल गैर–जनजाति समाज व पैसे वाले लोगों की है। जनजाति समाज हर रोज अत्याचार का शिकार होता है। कभी घरेलू हिंसा द्वारा तो कभी गैर–जनजाति समाज के सदस्यों द्वारा अत्याचार से, पुलिस द्वारा हर बार हमें जानकारी के अभाव में गुमराह किया जाता है। पुलिस की भूमिका हमेशा नकारात्मक व असहयोगात्मक रही है। सड़क सुरक्षा सप्ताह के तहत कई बार अवैद्य वसूली की जाती है। शराब के पैसो के लिए भी मारपीट की जाती है। यदि किसी भी अपराध की रिपोर्ट लिखवाने जाते है तो पुलिस हमसे ऐसे सवाल करती है मानों अपराधी कोई और नहीं हम है। पुलिस का काम है जनता की रक्षा करना परन्तु रक्षक खुद भक्षक बन गयी है। अतः पुलिस में ईमानदार व देशहित में काम करने वालों की आवश्यकता है।

जनजाति समाज के लोगों का शोषण होने पर सभी 300 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 66 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने पुलिस की भूमिका सकारात्मक व सहयोगात्मक बताई है।

जनजाति समाज अन्य समाजों की अपेक्षा विकास मे पीछे है जिसका प्रमुख कारण है इस समाज की सामाजिक समस्याएं। जिनका निराकरण अत्यन्त आवश्यक है। इस हेतु समाज व सरकार दोनों का सहयोग अपेक्षित है। यद्यपि सरकार जनजाति समाज मे पायी जाने वाली विभिन्न समस्याओं के निराकरण हेतु लगातार प्रयासरत है परन्तु जनजाति युवा पीढ़ी इस बात को स्वीकार करती है या नहीं। इसी संबंध मे चयनित उत्तरदाताओं से बात की गई। प्राप्त तथ्य सारणी संख्या 4.21 में प्रस्तुत है।

सारणी 4.19 एवं आरेख 4.9 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि उदयपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 74 प्रतिशत युवक उत्तरदाता इस बात को स्वीकार करते हैं कि सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सरकार प्रयास कर रही है जबकि 26 प्रतिशत इस बात को अस्वीकार करते है। वहीं चयनित 50 युवतियों मे से 60 प्रतिशत इस बात से सहमत है जबकि 40 प्रतिशत असहमत है।

सारणी 4.23

सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सरकार द्वारा प्रयास

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	37 (74.0)	13 (26.0)	**50 (100.0)**	30 (60.0)	20 (40.0)	**50 (100.0)**	67 (67.0)	33 (33.0)	**100 (33.3)**

डूंगरपुर	28 (56.0)	22 (44.0)	**50 (100.0)**	41 (82.0)	9 (18.0)	**50 (100.0)**	69 (69.0)	31 (31.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	32 (64.0)	18 (36.0)	**50 (100.0)**	38 (76.0)	12 (24.0)	**50 (100.0)**	70 (70.0)	30 (30.0)	**100 (33.3)**
योग	**97 (64.7)**	**53 (35.3)**	**150 (100.0)**	**109 (72.7)**	**41 (27.3)**	**150 (100.0)**	**206 (68.7)**	**94 (31.3)**	**300 (100.0)**

डूंगरपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 56 प्रतिशत मानते है कि सरकार प्रयास कर रही है परन्तु 44 प्रतिशत के अनुसार इसमें सरकार की कोई भूमिका नहीं है। वहीं 50 युवतियों में से सर्वाधिक 82 प्रतिशत युवतियॉ सरकार की भूमिका की सरहाना करती है और महज 18 प्रतिशत इस से असहमत है।

इसी प्रकार बांसवाड़ा से चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 64 प्रतिशत युवक उत्तरदाता मानते है कि सरकार सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु प्रयास कर रही है। जबकि 36 प्रतिशत इस संबंध में सरकार को नाकाम मानते है। वहीं 50 युवतियों में से 76 प्रतिशत इस बात का समर्थन करती है और 24 प्रतिशत इससे असहमत है।

तीनों जिलों की बात की जाए तो 300 में से सर्वाधिक 68 प्रतिशत उत्तरदाता सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सरकारी प्रयासों को स्वीकार करते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो सर्वाधिक 70 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ा का है जिनके अनुसार जनजाति समाज में पाई जाने वाली विभिन्न सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सरकार अपना अमूल्य योगदान दे रही है। अत्याचारों का निवारण अधिनियम 1989 के द्वारा अस्पृश्यता उन्मूलन तथा जनजाति सदस्यों को अत्याचारों से बचाने हेतु कदम उठाये गये। डायन जैसी कुप्रथाओं से बचाने के लिए कठोर कानूनों का निर्माण किया गया है। समाज को अंधविश्वास तथा अज्ञानता से दूर करने के लिए शिक्षा का सर्वाधिक प्रचार–प्रसार किया जा रहा है। प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से अधिक उम्र के लोगों को भी शिक्षा से जोड़ने का प्रयास किया गया। महिलाओं की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए महिलाओं के लिए भी कई कानून पारित किये गये है। बाल श्रम उन्मूलन क लिए भी कठोर दण्ड का प्रावधान रखा गया है। अतः स्पष्टतः कहा जा सकता है कि सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सरकार ने कारगर प्रयास किये है और कर रही है।

इसी तरह सर्वाधिक 33 प्रतिशत युवा वर्ग उदयपुर का है जिनके अनुरूप सरकार जनजाति समाज की समस्याओं को दूर करने के लिए कुछ नहीं कर रही। सरकारें चाहें तो कठोरता से नियमों को लागू करके तथा दण्ड की व्यवस्था करके कई समस्याओं का निराकरण कर सकती है परन्तु कई बार तो सरकार द्वारा ही शोषण हो जाता है। सरकार ने कई कानून ऐसे भी बनाये है जिससे की हमारे

अधिकारों का हनन् स्वतः हो जाता है। जैसे सरकार ने महिलाओं की सुरक्षा के लिए कई विशेष प्रावधानों की व्यवस्था कर दी है परन्तु इन्हीं कानूनों का कई बार दुरूपयोग होता है। महिलाऐं झूठा इल्जाम लगा के कई बार पुरूषों को फंसा देती है और ऐसी स्थिति में पुलिस भी महिलाओं का कहना मानती है, पुरूषों का नहीं। संक्षेप में सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सरकार द्वारा किये गये प्रयासों की अवहेलना की अपेक्षा प्रोत्साहन अधिक मिला है।

सरकार ने जनजाति समाज के सदस्यों के लिए कई प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था की है। समाज के सदस्यों का शोषण होने पर भी सरकार द्वारा सहायता की जाती है। वर्तमान में सरकारी संस्थाओं के साथ–साथ कई गैर सरकारी संस्थाएं भी स्थापित की गई है, परन्तु क्या यह गैर सरकारी संस्थाएं वास्तव में जनजाति समाज को सहायता प्रदान कर रही है ? अत्याचारों के निवारण में इन स्वयं सेवी संस्थाओं का क्या और कितना योगदान है, यहीं जानने हेतु चयनित क्षेत्र के उत्तरदाताओं से इस बारें में जानकारी प्राप्त की गई।

उदयपुर के चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं से इस संबंध में पूछने पर 34 प्रतिशत युवकों के अनुसार तो स्वयं सेवी संस्थाओं का योगदान है परन्तु 66 प्रतिशत युवकों के अनुसार मानवाधिकार संरक्षण हेतु स्वयं सेवी संस्थाओं का कोई योगदान नहीं है। वहीं 50 युवतियों में से 40 प्रतिशत के अनुसार तो स्वयं सेवी संस्थाओं के योगदान को स्वीकार करती है जबकि 60 प्रतिशत युवतियां अस्वीकार करती हैं।

सारणी 4.24

स्वयं–सेवी संस्थाओं का योगदान

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	17 (34.0)	33 (66.0)	**50 (100.0)**	20 (40.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	37 (37.0)	63 (63.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	13 (26.0)	37 (74.0)	**50 (100.0)**	18 (36.0)	32 (64.0)	**50 (100.0)**	31 (31.0)	69 (69.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	20 (40.0)	30 (60.0)	**50 (100.0)**	21 (42.0)	29 (58.0)	**50 (100.0)**	41 (41.0)	59 (59.0)	**100 (33.4)**
योग	**50 (33.3)**	**100 (66.7)**	**150 (100.0)**	**59 (39.3)**	**91 (60.7)**	**150 (100.0)**	**109 (36.3)**	**191 (63.7)**	**300 (100.0)**

डूंगरपुर के 50 युवकों में से 26 प्रतिशत युवक इस बात को स्वीकार करते हैं कि मानवाधिकार संरक्षण हेतु स्वयं सेवी संस्थाएं अपना योगदान देती है जबकि

74 प्रतिशत इस बात से इन्कार करते है, वहीं युवतियों में 36 प्रतिशत इस बात को मानती है तथा 64 प्रतिशत के अनुसार इन संस्थाओं के योगदान नगण्य है।

बांसवाड़ा के 50 युवकों से इस संबंध में पूछने पर 40 प्रतिशत युवकों ने इस बात का समर्थन किया तथा 60 प्रतिशत ने इस बात से इन्कार कर दिया कि मानवाधिकार संरक्षण ने स्वयं सेवी संस्थाओं का योगदान है, 50 युवतियों में से 42 प्रतिशत ने इस बात को स्वीकार ही किया तथा 58 प्रतिशत ने अस्वीकार किया ।

तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो सर्वाधिक 41 प्रतिशत बांसवाड़ा के है जिनके अनुसार मानवाधिकार संरक्षण में स्वयं सेवी संस्थाओं का योगदान है तथा सर्वाधिक 69 प्रतिशत युवा वर्ग डूंगरपुर का है जिनके अनुसार मानवाधिकार संरक्षण में स्वयं सेवी संस्थाओं का कोई योगदान नहीं है।

इस युवा वर्ग से विभिन्न स्वयं सेवी संस्थाओं के नाम भी पूछे गये जिनमें सर्वाधिक संस्थाओं के नाम भी बांसवाड़ा के युवा वर्ग ने दिये जिनमें प्रोग्रेस संस्थान, प्रगति ग्रामीण विकास संस्थान, वागड़ विकास संस्थान, वागदरा विकास संस्थान, दिशा समिति, वागड़ वसन्धुरा बड़ोदिया आदि प्रमुख हैं। इसके पश्चात् उदयपुर की संस्थाओं में आस्था संस्थान, जतन संस्थान, एक्सेस डवलपमेन्ट, जनजाति महिला जागरूकता संस्थान आदि प्रमुख है। ऐसे ही डूंगरपुर में वागड़ मजदुर और किसान संगठन,मुस्कान संस्थान, हृदय संस्थान आदि प्रमुख हैं।

उपरोक्त वर्णित संस्थानों में अधिकांश संस्थाऐं महिलाओं के प्रति हिंसा, जेन्ड़र असमानता, महिला सशक्तिकरण, निराश्रित बालकों को सहारा देना, निःशुल्क वस्तुओं का वितरण जनजातियों के विकास हेतु उन्हें जागरूक करने संबंधी कार्यो पर अधिक जोर दे रही है।

तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो स्वयं सेवी–संस्थाओं के योगदान को स्वीकार करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या अस्वीकार करने वालो से कम है। सभी 300 उत्तरदाताओं में से 63.7 प्रतिशत उत्तरदाता मानवाधिकार संरक्षण में स्वयं सेवी संस्थाओं की भूमिका को अस्विकार करता है। अतः संक्षेप में जनजाति समाज में मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाने में स्वयं–सेवी संस्थाएं अधिक सफल सिद्ध नहीं रही हैं।

भारतीय ग्रामीण जीवन में सदियों से भूमि और उसके स्वामित्व का विशेष महत्व रहा है। आजादी के पूर्वतक भू–स्वामित्व में एक स्थायित्व दृष्टीगोचर होता था। उपनिवेश वादी व्यवस्था ने भारत में भूमि के स्वामित्व एवं भु–सम्पत्ति के क्रय–विक्रय की नई प्रवृतियों को प्रारम्भ किया। आजादी के बाद यह प्रवृत्ति ओर तेज हो गई।जनजाति एवं गैर–जनजाति समाज में भू–स्वामित्व के हस्तान्तरण के स्वरूप में काफी अन्तर है। जनजाति समाज की जमीन (अधिकांशतः पहाड़ी एवं जंगल की)पर सरकारी एवं व्यक्तिगत गैरः–सरकारी कब्जे एवं बहकाकर कस्बे किये गए। सरकार ने कानून बनाए तो बेनाम भूमि पर गैर–जनजाति और

भूमाफियाओं के कब्जे देखे जा सकते हैं।उसका हस्तान्तरण कभी तीव्र तो कभी धीमी गति से होता आया है। इस भूमि हस्तान्तरण(सही मायने में यह हस्तान्तरण न कहकर कब्जा करने की प्रवृति है) की प्रक्रिया में सामाजिक व्यवस्था को बहुत हद तक प्रभावित किया है। स्वतन्त्रता के बाद भारतीय गांवों में भी काफी भूमि हस्तान्तरण हुआ है। जब कोई व्यक्ति अपनी भूमि को किसी कारण वश बेचता है और जब दूसरा व्यक्ति उस भूमि को खरीदता है तो इस तरह होने वाले भूमि के लेन देन को भूमि स्वामित्व का हस्तान्तरण कहते हैं।

सारणी 4.25

परिवार की भूमि की बिक्री

अध्ययन क्षेत्र	युवक			युवतियां			कुल योग		
	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	10 (20)	40 (80)	**50 (100)**	14 (28)	36 (72)	**50 (100)**	24 (24.0)	76 (76.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	13 (26)	37 (74)	**50 (100)**	18 (36)	32 (64)	**50 (100)**	31 (31.0)	69 (69.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	19 (38)	31 (62)	**50 (100)**	20 (40)	30 (60)	**50 (100)**	39 (39.0)	61 (61.0)	**100 (33.4)**
योग	**42 (28.0)**	**108 (72.0)**	**150 (100)**	**52 (34.7)**	**98 (65.3)**	**150 (100)**	**94 (31.3)**	**206 (68.7)**	**300 (100.0)**

वर्तमान में जनजाति परिवारों की भूमि पर गैर–जनजाति लोगों की निगाह है। वैधानिक रूप से यह सम्भव नहीं है अतः नए–नए तरीके विकसीत किये गए हैं। फिर भी भूमि का मूल्य बढ़ने के कारण ज्यादातर जनजाति परिवार भूमि की बिक्री कर रहे हैं ओर कुछ जो नगर में बसने के कारण भी भूमि बेच रहे हैं। आर्थिक कारण सबसे महत्वपूर्ण हैं। यद्यपि जनजातियों की भूमि उपजाऊ और कृषि योग्य होती है जो अहस्तान्तरणीय है, परन्तु तत्काल आर्थिक कारणें एवं अनुपजाउ भूमि या पानी की कमी के कारण से ये लोग अपनी भूमि की बिक्री कर देते हैं, जिनका उल्लेख आगे की सारणियों में किया गया है।

उपरोक्त सारणी से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं में से कितनों के परिवार द्वारा भूमि का हस्तान्तरण किया गया है तथा इसका उनके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा।सारणी के आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि उदयपुर के 20 प्रतिशत युवक उत्तरदाताओं के परिवार ने अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया है तथा 80 प्रतिशत ने नहीं किया। इसी क्षेत्र की युवतियों में 28 प्रतिशत के परिवार ने भूमि का हस्तान्तरण किया तथा 72 प्रतिशत ने अपनी भूमि को नहीं बेचा है। डूंगरपुर के 100 युवक उत्तरदाताओं में से 26 प्रतिशत के परिवार

ने भूमि का हस्तान्तरण किया है तथा 74 प्रतिशत के युवकों की किसी भूमि का हस्तान्तरण नहीं हुआ, वहीं 100 चयनित युवतियों में से 36 प्रतिशत के परिवार की भूमि का हस्तान्तरण नहीं हुआ। 64 प्रतिशत युवतियों के परिवार में भूमि का हस्तान्तरण नहीं हुआ।

बांसवाड़ा के 100 युवको में से 38 प्रतिशत के परिवार की भूमि का हस्तान्तरण हुआ है तथा 62 प्रतिशत के परिवार में उनकी भूमि का हस्तान्तरण नहीं हुआ। वहीं इस क्षेत्र की चयनित 100 युवतियों में से 40 प्रतिशत के परिवार में भूमि का हस्तान्तरण हुआ तथा 60 प्रतिशत के परिवार की भूमि का हस्तान्तरण नहीं हुआ। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि सभी 300 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 68.33 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जिन्होंने अथवा उनके परिवार ने किसी भूमि का हस्तान्तरण नहीं किया। इन उत्तरदाताओं का मानना है कि इनके लिए तो जमीन ही सब कुछ है यदि उसे भी दे दिया तो उनके जीवन यापन के लिए कुछ नहीं बचेगा इनका आर्थिक जीवन पूर्णतया कृषि पर निर्भर है। वहीं दूसरी और 31 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जिनकी भूमि का हस्तान्तरण किया गया है। इन उत्तरदाताओं में से कुछ उत्तरदाताओं ने भूमि का हस्तान्तरण पैसो की अचानक होने वाली जरूरत के कारण किया।

चयनित उत्तरदाताओं से यह जानने का प्रयास किया गया कि भूमि हस्तान्तरण का उनके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा तो इस संबंध में इनका कहना है कि भूमि हस्तान्तरण से इनकी कमजोर आर्थिक स्थिति और भी कमजोर हो गई। भूमि पर तो ये कृषि करके अपना जीवन यापन जैसे–तैसे कर लेते थे परन्तु जब से भूमि का हस्तान्तण हुआ है अब वो भी बन्द हो गया है। अब स्वयं की जगह दूसरे की भूमि पर मजदूरी करनी पड़ती है। जब कृषि का समय नही होता है तो नरेगा या बाहर के घरों में काम करके गुजर–बसर चलाते है। जमीन की कीमत ज्यादा थी परन्तु कम पढ़े लिखे होने व जानकारी के अभाव में पैसो में हमसे भूमि ले ली गई। जब तक व्यक्ति के पास जमीन होती है तब तक वह स्वयं को सुरक्षित समझता है कि बुरा वक्त आने पर यहीं जमीन हमें उस बुरे समय में सहारा देगी। पर जब व्यक्ति भूमि विहिन हो जाता है तो मानो उसके सर से छत चली जाती है।

इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि यद्यपि भूमि हस्तान्तरण के मामले बहुत कम है परन्तु जितने है उनकी आर्थिक स्थिति निम्नतर हो गई है। भूमि हस्तान्तरण से उनका आर्थिक व सामाजिक दोनो जीवन विशेष रूप से प्रभावित हुए है।

सारणी 4.26

भूमि बिक्री के कारण

उत्तरदाता	अध्ययन	कारण	योग

	क्षेत्र (उत्तरदाता)	बच्चों की उच्च शिक्षा हेतु	बेकारी के कारण	विवाह हेतु	आकस्मिक पैसे की जरूरत	
युवक (50)	उदयपुर (50)	04 (8.0)	—	02 (4.0)	04 (8.0)	**10 (20.0)**
	डूंगरपुर (50)	02 (4.0)	6 (12.0)	03 (6.0)	02 (4.0)	**13 (26.0)**
	बांसवाड़ा (50)	08 (16.0)	01 (2.0)	06 (12.0)	04 (8.0)	**19 (38.0)**
युवतियां (50)	उदयपुर (50)	06 (12.0)	04 (8.0)	03 (6.0)	01 (2.0)	**14 (28.0)**
	डूंगरपुर (50)	03 (6.0)	08 (16.0)	05 (10.0)	02 (4.0)	**18 (36.0)**
	बांसवाड़ा (50)	05 (10.0)	—	04 (8.0)	10 (20.0)	**19 (38.0)**
योग	**300 (100.0)**	**28 (9.3)**	**19 (6.3)**	**23 (7.7)**	**24 (8.0)**	**94 (31.3)**

उपरोक्त सारणी में उत्तरदाताओं द्वारा भूमि हस्तान्तरण के कारणों पर प्रकाश डाला गया है। उनके अनुसार किसी के घर में विवाह था तो किसी के घर में बीमारी का संकट। ऐसी स्थिति में अधिक पैसो की जरूरत ने इन्हें भूमि के हस्तान्तरण हेतु मजबूर कर दिया। कुछ उत्तरदाताओं को अपने बच्चों को उच्च शिक्षा हेतु बाहर भेजना था तथा कुछ उत्तरदाताओं को अपना कच्चा मकान पक्का करवाना था उसकी मरम्मत करवानी थी अर्थात स्पष्टतः हर तरह से भूमि के हस्तान्तरण का मूल कारण आर्थिक स्थिति का कमजोर होना पाया गया। उदयपुर के 50 युवक उत्तरदाताओं में से 04 प्रतिशत में विवाह हेतु, 08 प्रतिशत ने पैसो की आकस्मिक जरूरत तथा 08 प्रतिशत ने बच्चों की उच्च शिक्षा हेतु अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया। वहीं 50 युवतियों में से 2 प्रतिशत के परिवार ने पैसे की जरूरत, 06 प्रतिशत ने विवाह हेतु, 08 प्रतिशत ने बीमारी के कारण तथा 12 प्रतिशत ने बच्चों की उच्च शिक्षा हेतु भूमि का हस्तान्तरण किया।

डूंगरपुर के 50 युवकों के परिवारों में से 4–4 प्रतिशत ने पैसो की अचानक जरूरत व बच्चों की उच्च शिक्षा हेतु अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया तथा 06 प्रतिशत ने विवाह और 12 प्रतिशत ने बीमारी के कारण अपनी भूमि को बेचा। जबकि 50 युवतियों में से 04 प्रतिशत के परिवार ने पैसों के कारण, 06 प्रतिशत ने बच्चों की उच्च शिक्षा हेतु, 10 प्रतिशत ने विवाह हेतु व 16 प्रतिशत ने बीमारी के कारण अपनी भूमि हस्तान्तरित की।

परम्परागत भूमि, चाहे वन क्षेत्र में हो या बाहर, उसको कृषि योग्य बनाकर कृषि उत्पादन करना जनजाति परिवारों के लिए आसान कार्य नहीं है। अनुसंधानकर्ता ने यह जानने का प्रयास भी किया है कि भूमि की बिक्री का क्या पारिवारीक आय से कोई सम्बन्ध है ? इसे निमन सारणी 4.27 एवं 4.28 में देखा जा सकता है।

सारणी 4.27

युवाओं के परिवार की मासिक आय व भूमि बिक्री की प्रवृति

उत्तरदाता	भूमि बिक्री	10,000 हजार से कम	10 से 25 हजार	25 से 50 हजार	50 हजार से अधिक	योग
युवक 150 (50.0)	हां	16 (10.7)	18 (12.0)	05 (3.3)	03 (2.0)	**42 (23.0)**
	नहीं	43 (28.7)	20 (13.3)	16 (10.7)	29 (19.3)	**108 (72.0)**
युवतियां 150 (50.0)	हां	21 (14.0)	21 (14.0)	07 (4.7)	03 (2.0)	**52 (34.7)**
	नहीं	24 (16.0)	15 (10.0)	21 (14.0)	38 (25.3)	**98 (65.3)**
योग 300 (100.0)	हां	37 (12.3)	39 (13.0)	12 (4.0)	06 (2.0)	**94 (31.3)**
	नहीं	67 (22.3)	35 (11.7)	37 (12.3)	67 (22.3)	**206 (68.7)**
कुल योग		**104 (34.7)**	**74 (24.7)**	**49 (16.3)**	**73 (24.3)**	**300 (100.0)**

प्रस्तुत सारणी के आंकड़े दर्शाते है कि भूमि को बेचने वाले उत्तरदाताओं के परिवार की मासिक आय कितनी है ? तथा किस मासिक आय वाले परिवारों ने भूमि को बेचा है।

तीनों जिलों के चयनित 150 युवक उत्तरदाताओं के परिवार की बात की जाय तो सर्वाधिक 12 प्रतिशत युवकों के परिवार ने अपनी भूमि का बेचान किया है। उनके परिवार की मासिक आय 10 से 25 हजार है। तथा सर्वाधिक 28 प्रतिशत युवकों ने अपनी भूमि को नहीं बेचा उनके परिवार की मासिक आय 10 हजार से कम है।

तीनों ही जिलों का चयनित 150 युवतियों की बात की जाय तो सर्वाधिक 14–14 प्रतिशत युवतियों के परिवार ने अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया है, जिनके परिवार की मासिक आय क्रमशः 10000 हजार से कम व 10 से 25 हजार के मध्य है। सर्वाधिक 25 प्रतिशत उत्तरदाता (युवतियां) के परिवार ने अपनी भूमि का हस्तान्तरण नहीं किया है, जिनके परिवार की मासिक आय 50 हजार से अधिक है।

युवक–युवतियां दोनो की बात की जाय तो सभी 300 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 13 प्रतिशत के परिवार ने अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया है जिन उत्तरदाताओं के परिवार की मासिक आय 10–25 हजार के मध्य है।

उन उत्तरदाताओं के परिवार ने भूमि का हस्तान्तरण सबसे कम किया है जिनके परिवार की मासिक आय 50 हजार से अधिक है, इनके द्वारा भूमि हस्तान्तरण का कारण था इनकी लघु व अनुपजाऊ भूमि। आर्थिक स्थिति अच्छी होने से इन्हे भूमि का हस्तान्तरण करने की आवश्यकता नहीं थी परन्तु, भूमि का आकार छोटा होने एवं उसके अनुपजाऊ होने के कारण इन्हें भूमि को बेचना पड़ा।

ऐसे ही 25 से 50 हजार की मासिक आय वाले परिवारों ने भी अपनी भूमि का हस्तान्तरण कम ही किया है। जिन्होंने किया है वे तात्कालिन परिस्थितियों में अपनी आर्थिक स्थिति को सम्भालना चाहते थे, अर्थात पैसों की अचानक जरूरत होने पर इन्होंने अपनी भूमि को बेंचा। भूमि हस्तान्तरण करने वाले परिवारों का सबसे कम प्रतिशत 10 हजार से कम मासिक आय वालों का है क्योंकि इनकी आय का एकमात्र स्त्रोत इनकी भूमि ही है परन्तु इस आय वर्ग के जिन परिवारों ने भूमि का हस्तान्तरण किया है वो बहुत ही विपरीत परिस्थितियों में किया है। जब इनके परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत कमज़ोर थी तो उसे सम्भालने के लिये उन्हें ऐसा करना पड़ा।

भूमि हस्तान्तरण करने वालों का सर्वाधिक प्रतिशत 10 से 25 हजार की मासिक आय वालों का है। इस समूह के सर्वाधिक परिवारों ने अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया है, कुछ सामाजिक–सांस्कृतिक रीति–रिवाजों को पुरा करने में इन्हें अपनी भूमि को बेंचना पड़ा। स्पष्टतः भूमि हस्तान्तरण का सबसे बड़ा कारण आर्थिक कमजोरी रहा है। भूमि हस्तान्तरण करने वाले सर्वाधिक परिवार कम मासिक आय वाले हैं।

सारणी 4.28

युवाओं के परिवार की मासिक आय और भूमि का हस्तान्तरण

उत्तरदाता	अध्ययन क्षेत्र	हस्तान्तरण	मासिक आय (हजार में)				कुल योग
			5 हजार से कम	10–25	25–50	50 हजार से अधिक	

युवक	उदयपुर (50)	हां	01 (2.0)	05 (10.0)	02 (4.0)	02 (4.0)	**10 (3.3)**
		नहीं	14 (28.0)	08 (16.0)	10 (20.0)	08 (16.0)	**40 (13.3)**
	डूंगरपुर (50)	हां	07 (14.0)	04 (8.0)	01 (2.0)	01 (2.0)	**13 (4.3)**
		नहीं	15 (30.0)	06 (12.0)	03 (6.0)	13 (26.0)	**37 (12.3)**
	बांसवाडा (50)	हां	08 (16.0)	09 (18.0)	02 (4.0)	—	**19 (6.3)**
		नहीं	14 (28.0)	06 (12.0)	03 (6.0)	08 (16.0)	**31 (10.3)**
युवतियां	उदयपुर (50)	हां	03 (6.0)	08 (16.0)	03 (6.0)	—	**14 (4.7)**
		नहीं	10 (20.0)	01 (10.0)	08 (16.0)	17 (34.0)	**36 (12.0)**
	डूंगरपुर (50)	हां	10 (20.0)	06 (12.0)	01 (2.0)	01 (2.0)	**18 (6.0)**
		नहीं	08 (16.0)	09 (18.0)	06 (12.0)	09 (18.0)	**32 (10.7)**
	बांसवाडा (50)	हां	08 (16.0)	07 (14.0)	03 (6.0)	02 (4.0)	**20 (6.7)**
		नहीं	06 (12.0)	05 (10.0)	07 (14.0)	12 (24.0)	**30 (10.0)**
योग		हां	37 (12.3)	39 (13.0)	12 (4.0)	06 (2.0)	**94 (31.3)**
		नहीं	67 (22.3)	35 (11.7)	37 (12.3)	67 (22.3)	**206 (68.7)**
कुल योग			**104 (34.7)**	**74 (24.7)**	**49 (16.3)**	**73 (24.3)**	**300 (100.0)**

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं के परिवार की मासिक आय और उनका भूमि के हस्तान्तरण करने के बीच क्या सह–संबंध है ? अर्थात इस सारणी से यह जानकारी मिलती है कि किस मासिक आय वर्ग के परिवार ने भूमि का हस्तान्तरण अधीक किया है तथा किस वर्ग ने कम किया हैं।

आंकड़े बताते हैं कि उदयपुर के 5 हजार से कम मासिक आय वर्ग के परिवारों में से 04 प्रतिशत ने अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया हैं। 25–50 हजार आय वर्ग के 05 प्रतिशत ने तथा 50 हजार से अधिक आय वर्ग के परिवारों में भी

02 प्रतिशत ने भूमि हस्तान्तरण किया है जबकि सर्वाधिक परिवारों में 13 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार ने अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया हैं, जो कि 10–25 हजार मासिक आय वर्ग के अन्तर्गत हैं।

इसी तरह डूंगरपुर के युवक उत्तरदाताओं के परिवार में 50 हजार से अधिक आय वर्ग के 02 प्रतिशत परिवार, 25–50 हजार आय वर्ग के भी 11 प्रतिशत परिवार 10–25 हजार आय वर्ग 10 प्रतिशत परिवार तथा सर्वाधिक 17 प्रतिशत परिवार 5 हजार से कम आय वर्ग वाले हैं जिन्होंने अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया हैं। बांसवाड़ा के युवक उत्तरदाताओं के परिवार में से 05 प्रतिशत 25–50 हजार आय वर्ग वाले, 16 प्रतिशत 5 हजार से कम आय वर्ग वाले, तथा 16 प्रतिशत 10–25 हजार आय वर्ग वाले ऐसे परिवार है जिन्होंने अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया हैं। जबकि 50 हजार से अधिक आय वाले 2 प्रतिशत परिवार ने अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सर्वाधिक भूमि की बिक्री करने वाले परिवार मध्यम आय वर्ग के हैं, और कमज़ोर आर्थिक स्थिति के कारण ही अपनी भूमि का हस्तान्तरण किया है।

प्राचीन काल से ही जनजाति समाज का जंगलों में एवं इसके इर्द–गिर्द गुजरा हैं। जनजातियों के लिये ये जंगल इनको मूल आवश्यकताओं की तरह इनके अभिन्न अंग हैं। जिस तरह विकसित समाजों की कल्पना भौतिक सुख–सुविधाओं के बिना नहीं की जा सकती हैं वैसे ही जनजातियों को भी जंगलों से अलग करके नहीं देखा जा सकता। ये जंगल, पहाड़, नदियां, तालाब आदि जनजातियों के लिये पूजनीय है। इनके मन में इन सभी प्राकृतिक संसाधनों के प्रति आगाध प्रेम व श्रृद्धा है।

परन्तु चूंकि विकास के इस दौर में जनजाति क्षेत्रों को साथ लेकर चलने के लिये सरकार द्वारा प्रयास किये जा रहे है। रेल, सड़क, बिजली और उद्योगों को विकसित करने के लिये सरकार को जंगलों को अपने अधिन करना पड़ रहा है। जिसके परिणामस्वरूप जनजाति समाज सरकार के विरोध में खड़ा हो गया है और जंगलों पर अपना अधिकार जता रहा हैं। वर्तमान में जल, जंगल जमीन अभियान ने अपना जोर पकड़ा है, जिसके अन्तर्गत आदिवासी समाज प्राकृतिक संसाधनों के लिए संघर्षरत है। जनजाति समाज इन प्राकृतिक संसाधनों को अपने अधिकार में लेना चाहता है और संविधान तथा सरकार द्वारा इन संसाधनो से संबंधित बनाये गये कानूनों का विरोध कर रहा है।

सारणी 4.29

जंगलों पर जनजातियों के अधिकार के बारे में राय

अध्ययन	युवक	युवतियां	कुल योग

क्षेत्र	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग	हां	नहीं	योग
उदयपुर	31 (62.0)	19 (38.0)	**50 (100.0)**	27 (54.0)	23 (46.0)	**50 (100.0)**	58 (58.0)	42 (42.0)	**100 (33.3)**
डूंगरपुर	45 (90.0)	5 (10.0)	**50 (100.0)**	32 (64.0)	18 (36.0)	**50 (100.0)**	77 (77.0)	23 (23.0)	**100 (33.3)**
बांसवाड़ा	38 (76.0)	12 (24.0)	**50 (100.0)**	33 (66.0)	17 (34.0)	**50 (100.0)**	71 (71.0)	29 (29.0)	**100 (33.4)**
योग	**114 (76.0)**	**36 (24.0)**	**150 (100.0)**	**92 (61.3)**	**58 (38.7)**	**150 (100.0)**	**206 (68.7)**	**94 (31.3)**	**300 (100.0)**

उदयपुर के चयनित युवक उत्तरदाताओं में से 62 प्रतिशत के अनुसार जंगलों पर जनजातियों का अधिकार है तथा 38 प्रतिशत युवक इस बात को स्वीकार नही करते। वहीं इसी क्षेत्र की युवतियों से इस संबंध में पूछने पर 54 प्रतिशत ने इस मत के प्रति सहमति बताई व 46 प्रतिशत ने असहमति जताई।

डूंगरपुर के चयनित 50 युवकों में से 90 प्रतिशत युवक जंगलों पर अपना अधिकार मानते है तथा 10 प्रतिशत इस बात से इन्कार करते है वहीं चयनित 50 युवतियों में से 64 प्रतिशत मानती है कि जंगल जनजातियों के हैं और 36 प्रतिशत युवतियां इससे असहमत है।

बांसवाड़ा की बात की जाय तो चयनित 50 युवक उत्तरदाताओं में से 76प्रतिशत ने जंगल को अपनी सम्पति बताया है। वहीं 24 प्रतिशत इस बात से अहसमत है। चयनित युवतियों में से 66 प्रतिशत युवतियों के अनुसार जंगल जनजातियों के अधिकार क्षेत्र में है तथा 34 प्रतिशत के अनुसार जंगल सार्वजनिक सम्पत्ति है।

स्पष्टतः कहा जा सकता है कि सभी 300 उत्तरदाताओं में से अधिकांश जनजाति युवा सदस्य (68.7) प्रतिशत जंगल को जनजातियों की सम्पत्ति मानते है। इसके अनुसार प्रारम्भ से ही जंगल जनजातियों का शरण स्थली रहे हैं। हमने व हमारे पूर्वजों ने जंगल की व इसके वनों, वन्य जीवों की सुरक्षा की है। इस दृष्टि से सम्पूर्ण जंगल व जंगल के वनों पर हमारा अधिकार है।

जंगलों पर जनजातियों का अधिकार बताने वाले युवाओं का तर्क है कि यदि जंगलों को हमारे अधिकार क्षेत्र से छीन लिया गया तो इसका विनाश निश्चित है न तो वनों की और ना ही वन्य जीवों की सुरक्षा हो पायेगी। सभी संकटग्रस्त स्थिति में आ जायेंगे। वनों की कटाई वन्य जीवों की तस्करी बढ़ जायेगी साथ ही जनजाति सदस्यों पर भी इसका असर पड़ेगा क्योंकि इन जंगलों में ही चारागाह क्षेत्र मिलते है, ईधन के लिए सुखी लकड़ियां मिलती है, कुछ

जड़ी–बूटियों से दवाईयों का निर्माण भी होता है जिसके द्वारा जनजातियों को आकस्मिक समस्या आने पर दूर जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इस प्रकार जनजाति सदस्यों के अनुसार जंगलों का इनके जीवन में विशेष महत्व है और कुछ हद तक जंगल इनके जीवन का अभिन्न अंग है।

इसके विपरीत 31 प्रतिशत युवा उत्तरदाता इन विचारधाराओं के विपरीत है। इनके अनुसार प्रकृति ने प्रत्येक प्राकृतिक वस्तु सभी को समान रूप से दी है। जंगल प्रकृति का ही एक भाग है और इस पर सभी का समान अधिकार है। केवल यहां निवास करने या इसकी देख–भाल के एवज में प्रकृति के किसी एक समूह विशेष के क्षेत्राधिकार में सम्मिलित नहीं किया जा सकता। जंगल तो सभी के है किसी जाति/वर्ग विशेष के नहीं हो सकते और यदि वास्तव में इन पर किसी का अधिकार है तो वो है वन्य जीव। क्योंकि यदि जंगलों का विनाश हुआ तो वन्य जीवों का रहना मुश्किल हो जाएगा।

सारांशतः कहा जा सकता है कि अधिकांश जनजाति सदस्यों के अनुसार जंगलो पर केवल उनका अधिकार है और इसे उनसे छिना नहीं जाना चाहिये।

युवाओं को जल, जंगल, जमीन अभियान की जानकारी

अध्ययन क्षेत्र के चयनित युवाओं से इस संबंध में बात की गई कि क्या वे इस ''जल, जंगल जमीन अभियान'' के बारे में जानकारी रखते हैं तो यह जानकर आश्चर्य हुआ कि जिस अभियान को लेकर जनजाति समाज चर्चा में है हर रोज धरना, प्रदर्शन, रैलियां, मोर्चा आदि निकाले जा रहे हैं उस अभियान के बारे में इस क्षेत्र के कम लोग ही जानकारी रखते हैं। इनमें से कई युवा सदस्यों ने बताया कि वो स्वयं इससे संबंधित रैली में जा चुके हैं। जब उनसे पूछा गया कि आप बिना किसी जानकारी के रैली में क्या कर रहे थे तो कुछ सदस्यों का कहना था कि हमें क्या लेना–देना की ये क्या और कैसी रैलीया है हमें तो बस इतना बताया जाता है कि हमें अपने जंगल, पानी व जमीन की रक्षा करनी है, नहीं तो सरकार हमसे ये सब छिन लेगी।

कुछ युवा सदस्य ऐसे भी थे जिन्होंने इस अभियान के बारे में सुन रखा था जिसके आधार पर उन्होंने जानकारी दी कि प्राकृतिक संसाधनों जिन पर जनजातियों का अधिकार को कुछ लोग अनैतिक तरीके से छिनने की कोशिश कर रहे है और सरकार इसकी अनदेखी कर रही है। इसलिए जनजाति समाज एकजुट होकर सरकार व उसके नियमों के विरूद्ध लड़ाई लड़ रहा है, और लड़ेगा

इस अभियान की जानकारी रखने वाले लोगों के अनुसार सभी प्राकृतिक संसाधन–जल, जंगल जमीन पर हमारा अधिकार है, जनजाति समाज पूर्णतया इन पर ही निर्भर है इन्हीं से ये समाज अपना जीवन यापन करता है ओर सरकार अनैतिक तरीको से ये प्राकृतिक संसाधन छिन रही है जो गलत है। इस अभियान

के जरिये लाखों जनजाति लोग जो प्राकृतिक संसाधनों से जुड़े व्यवसाय करने वाले लोगों के कारण अपना सब कुछ खो चुके है, न्याय की, अपने अधिकार की मांग कर रहे है। इन लोगों के अनुसार ये प्राकृतिक संसाधन बहुत ही कम दामों में इन नगर निगम व नगर निकाय अधिकारियों के हाथ में जा रहे है और इनके हाथों में जाने के बाद इसकी कोई सार संभाल नहीं होगी साथ ही जनजाति समाज का जीवन यापन कठिन हो जायेगा जो पूरी तरह से इन्हीं पर निर्भर है इसलिए इस अभियान के द्वारा हम जनजाति समाज ओर प्राकृतिक संसाधनों (जल, जंगल जमीन) दोनो को बचाने की कोशिश कर रहे है।

सारांश

प्रस्तुत अध्ययन में उत्तरदाताओं की मानवाधिकार एवं इनकी विभिन्न प्रथाओं के संबंध मे जानकारी से संबंधित तथ्यों के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि तीनों ही क्षेत्र में सभी युवा समानता व स्वतन्त्रता के मूल अधिकार से परिचित हैं, परन्तु इन अधिकारों के वास्तविक अर्थ को नहीं जानते। अत्याचारों का निवारण अधिनियम (1989) की जानकारी बहुत कम युवाओं को है और जो युवा इस अधिनियम की जानकारी रखते हैं वह उच्च शिक्षित हैं। इसी प्रकार मानवाधिकारों की पूर्ण जानकारी रखने वाले युवाओं का प्रतिशत भी काफी कम है। चयनित उत्तरदाताओं में से अधिकांश (88 प्रतिशत) उत्तरदाता जनजाति बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन करने हेतु सरकार द्वारा लागू की गई योजनाओं की जानकारी रखते हैं।

सर्वाधिक युवाओं के अनुसार जनजाति समाज में मानवाधिकारों का हनन् होता है। परन्तु इनके स्वयं के किसी मूल अधिकार हनन् को अधिकांश उत्तरदाता अस्वीकार करते हैं। इसी प्रकार सर्वाधिक (58 प्रतिशत) युवा जनजाति समाज में प्रचलित डायन प्रथा में विश्वास नहीं रखते परन्तु विश्वास रखने वाले उत्तरदाताओं का प्रतिशत भी खासा कम नहीं है। इस प्रथा को मानने वाले अधिकांश युवाओं की शैक्षिक स्थिति कमजोर है। तीनों जिलों के सर्वाधिक उत्तरदाता डायन प्रथा को मानवाधिकार का उल्लघंन मानते हैं। तथा इस प्रथा को समाप्त करने में पुलिस की भूमिका को सर्वाधिक उत्तरदाता मानते हैं। ऐसे ही चयनित उत्तरदाता में से लगभग 51 प्रतिशत उत्तरदाता दागना प्रथा की जानकारी नहीं है।

मानवाधिकारों के संबंध में जानकारी देने मे वर्तमान शिक्षा के योगदान को सर्वाधिक उत्तरदाता अस्वीकार करते हैं। इस संबंध में जनसंचार के साधनों के योगदान को भी अधिकांश उत्तरदाता नहीं मानते हैं। मानवाधिकारों के संबंध में जानकारी के अभाव का मुख्य कारण विशेष कार्यक्रमों का न होना बताया गया है। सर्वाधिक उत्तरदाताओं ने गैर–जनजाति सदस्यों द्वारा जनजाति सदस्यों के शोषण को अस्वीकार किया है। तथा जो सदस्य शोषण को स्वीकार करते हैं उन्होंने इस संबंध में पुलिस की भूमिका को सकारात्मक बताया है। सर्वाधिक उत्तरदाताओं द्वारा स्वीकार किया गया कि जनजाति समाज की समस्याओं को दूर करने हेतु

सरकार द्वारा प्रयास किये जा रहे हैं। परन्तु किसी भी प्रकार की समस्या अथवा अत्याचारों के निवारण में किसी स्वयं–सेवी संस्था के योगदान को अस्वीकार किया है।

वर्तमान में भूमि की बिक्री की प्रवृतियां बढ़ी है। अतः चयनित उत्तरदाताओं से इस संबंध में जानकारी ली गई यद्यपि अधिकांश उत्तरदाताओं द्वारा उनकी किसी भी प्रकार की भूमि की बिक्री को अस्वीकार किया गया है तथा जिनकी भूमि की बिक्री हुई है, उनका मुख्य कारण उनकी कमजोर आर्थिक स्थिति सामने आई है। तीनों जिलों के सर्वाधिक (68) प्रतिशत उत्तरदाता जंगलों को जनजातियों की सम्पति मानते हैं तथा उसे उनके अधिकार क्षेत्र में रखना चाहते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि जनजाति युवा कई अधिकारों की जानकारी रखते हैं परन्तु उसकी पूर्ण जानकारी नहीं है। शिक्षित होने के बावजूद कई ऐसी प्रथाऐं जो मानवों के अधिकारों का हनन् करती है, से जुड़े हुए हैं। जल, जंगल व भूमि जैसे मुद्दों को लेकर सचेत है। परन्तु मानवाधिकार से संबंधित जानकारी का अभाव है अतः जनजाति युवाओं को इस संबंध में जानकारी देना अत्यन्त आवश्यक है।

❑❑❑

5

कुछ समस्यात्मक सामाजिक प्रथाएं : वैयक्तिक अध्ययन

पिछले अध्याय में जनजाति समाज में मानवाधिकार से संबंधित मुद्दे एवं जागरूकताओं का विश्लेषण किया गया था। जिसमें चयनित उत्तरदाताओं से मानवाधिकारों, मूल अधिकारों, विभिन्न सरकारी योजनाओं की जानकारी से संबंधित तथ्यों को सम्मिलित किया गया था। साथ ही डायन प्रथा नातरा प्रथा तथा दागना प्रथा के संबंध में उत्तरदाताओं के विचारों का विश्लेषण किया गया था।

प्रस्तुत अध्याय में जनजाति समाज मे पाई जाने वाली विभिन्न सामाजिक समस्याओं एवं प्रथाओं की विस्तारपूर्वक विवेचन किया जा रहा है। जनजाति समाज मे कई ऐसी प्रथाएं व सामाजिक समस्याएं प्रचलित हैं जो इस समाज के सदस्यों को किसी न किसी तरह से पीड़ित करती हैं। इन प्रथाओं में डायन प्रथा, नातरा प्रथा व दागना प्रथा मुख्य रूप से सम्मिलित है जिनके कारण जनजाति सदस्यों का शोषण दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इनके साथ ही महिलाओं और बच्चों के अधिकारों के हनन् से सम्बन्धित समस्याएं भी बढ़ रही हैं। इन समस्याओं को गहनता से समझने और अध्ययन करने हेतु वैयाक्तिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है।चूंकि यह अध्ययन युवाओं पर आधारित है अतः प्रयास किया गया है कि वैयक्तिक अध्ययन युवाओं से सम्बन्धित हों तथा जो शेष वैयक्तिक अध्ययन सम्मिलित हैं वे भी युवाओं द्वारा दी गई जानकारी पर ही आधारित हैं।

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति गुणात्मक पद्धति का ही एक रूप है। जिसमें किसी व्यक्ति, संस्था या समुदाय के बारें में पूर्ण एवं गहन जानकारी प्राप्त की जाती है। समाजशास्त्र में वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग सर्वप्रथम हर्बर्ट स्पेन्सर ने किया था।

इस अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत किसी एक सामाजिक इकाई से संबंधित सभी पक्षों का व्यापक, सूक्ष्म तथा गहन अध्ययन किया जाता है। वैयक्तिक अध्ययन का एक मानक स्वरूप 1952 में एडवर्ड एच. स्पाइसर (1952) ने तैयार किया।

प्रस्तुत अनुसंधान में भी उक्त स्वरूप बिन्दुओं समस्या, घटनाक्रम, प्रासंगिक कारक, परिणाम व विश्लेषण के आधार पर ही वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है। जिसमें चयनित अनुसंधान क्षेत्र के तीनों जिलो से 5–5 वैयक्तिक अध्ययन किये गये हैं। इस अध्याय में तीनो जिलों में एक ही प्रकार की समस्या से संबंधित वैयक्तिक अध्ययनों को एक साथ संकलित किया जा रहा है जिनका विवरण निम्न प्रकार से है –

अध्ययन क्षेत्र	वैयक्तिक अध्ययन
उदयपुर	5
डूंगरपुर	5
बांसवाड़ा	5
कुल	15

ये अध्ययन डायन प्रथा, नातरा प्रथा, दागना प्रथा, महिला हिंसा व बाल शोषण से सम्बन्धित है। इनमें डायन प्रथा, नातरा प्रथा व दागना प्रथा मानवाधिकार के मौलिक अधिकार के तहत जीवन जीने के अधिकार, क्रुरता व अमानवीय व्यवहार से बचाव का अधिकार, सुरक्षा के अधिकार और राहत पाने के अधिकारों का प्रत्यक्ष रूप से हनन् है तथा बाल शोषण व महिला हिंसा स्वतन्त्रता व समानता के अधिकार के हनन् के साथ ही शोषण के विरूद्ध मौलिक अधिकार का हनन् है। इस अध्याय में कुछ ऐसे स्वरूपों की चर्चा की जा रही है जिनका सम्बन्ध जनजाति जगत में व्याप्त कतिपय उन प्रचलनों से है जो अध्ययित क्षेत्र में विद्यमान है। इन घटनाओं को दो स्वरूपों में देखा जा सकता है। पहला, उन तथ्यों को प्रस्तुत करना जो इन प्रचलनों के साथ जुड़े हैं। दूसरा, इन तथ्यों के साथ मानव अधिकार के प्रसंगों को जोड़ना। वर्तमान समाज में बहुत से तथ्य ऐसे हैं जिनका सम्बन्ध मानव अधिकारों के उल्लधंन से नहीं है लेकिन ऐसी घटनाएं सामान्यतः उन सामाजिक आधारों की और अवश्य संकेत करती हैं जिनकी स्थापना की आवश्यकता है।

सम्पूर्ण इतिहास में मानव के सामाजिक जीवन और मानवीय प्रतिष्ठा का बहुत आदर नहीं रहा है। प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिष्ठा से रहने का अधिकार है। चाहे वह जनजाति समाज हो या तथाकथित सभ्य समाज। यदि अन्धविश्वास के आधार पर किसी कार्य या किसी व्यक्ति को प्रताड़ित किया जाता है तो उसे मानव अधिकार का संरक्षण प्राप्त करने का अधिकार है विशेष रूप से उन लोगों के लिए जो अपने कार्यों के लिये बिना प्रमाण के दण्डित किये जाते हैं। उदाहरण के लिए डायन प्रथा जिन्हें बिना प्रमाण के प्रमाणित किया जाता है। यदि वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो जिन शक्तियों अथवा कृत्यों के आधार पर डायन कहकर स्त्रियों को प्रताड़ित किया जाता है उनका कोई प्रमाण नहीं है। यदि बिना प्रमाण के उन पर आरोप लगाया जाता है और प्रताड़ित करने का प्रयास किया जाता है तो उन्हें मानव अधिकारों के संरक्षण कि आवश्यकता है।

प्रस्तुत अध्याय में दक्षिण राजस्थान के ऐसे ही प्रसंगों की चर्चा है जिन पर मानवाधिकारों के हस्तक्षेप की आवश्यकता है। चयनित क्षेत्र की सबसे गंभीर समस्या डायन प्रथा है जिसके संबंध में निम्न प्रकार से वर्णन किया जा रहा है :–

डायन प्रथा : वैयक्तिक अध्ययन

मानव अधिकारों का हनन वस्तुतः जीवन की ही अवमानना है। जीवन की त्रुटिपूर्ण व विपरीत समझ ही व्यक्ति को आत्मकेन्द्रित व परपीड़क बनाती है। फिर ऐसा मनुष्य कभी स्वार्थवश या फिर कभी निम्न वृतियों से संचालित निष्प्रयोजन दूसरों के लिए कांटा बनता रहता है। परिणाम होता है, मानव का मानव के हाथों उत्पीड़न। ऐसा ही एक उत्पीड़न जनजाति समाज में डायन प्रथा के रूप में पाया जाता है

इस प्रथा से महिलाएं प्रभावित हैं। 'डायन' से तात्पर्य उस महिला से है जिसके द्वारा किसी को छूने पर अथवा देखने पर वह बीमार हो जाए। ऐसा माना जाता है कि उस महिला की नजर खराब है। इन्हें 'कड़क नजर वाली' महिला भी कहा जाता है। यह मान्यता भी है कि जो महिलाएं किसी विशेष दिन यथा मंगलवार और रविवार को जन्म लेती हैं अधिकांशतः वे महिलाएं डायन होती हैं और उन्ही की नजर कड़क होती है। एक अत्यन्त आश्चर्यजनक तथ्य यह भी है कि डायन केवल महिला होती है पुरूष नहीं अर्थात् कड़क नजर सिर्फ महिलाओं की होती है पुरूषों की नहीं। ये महिलाएं किसी से दुश्मनी होने पर उसके परिवार के सदस्यों को अधिकांशतः बच्चों को प्रताड़ित करती हैं। ये महिलाएं धोणती भी हैं। अगर ये किसी के पीछे–पीछे चलते हुए कोई राग गाती हैं तो आगे चलने वाला धोणने (जोर–जोर से सर हिलाना)लग जाता है और बीमार हो जाता है। ये महिलाएं किसी का खाना–पीना छुड़वा सकती हैं, पढ़ाई से दूर कर सकती हैं, मानसिक रूप से बीमार कर सकती हैं, यहां तक की किसी को जान से भी मार सकती हैं।

प्रत्येक स्त्री–पुरूष को सभी मनुष्यों के समान सम्मान से जीवन जीने का अधिकार है। परन्तु जनजाति समाज में पायी जाने वाली यह प्रथा प्रताड़ित महिला के इस अधिकार को सिरे से खारिज कर रही है और हर रोज एक महिला इस प्रथा से पीड़ित अपने मानवाधिकार के हनन को भोग रही है। चयनित जिलों के डायन प्रथा से सम्बन्धित सभी वैयक्तिक अध्ययनों का विश्लेषण आगे दिया गया है–

केस 1							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
अ	अशिक्षित		60 वर्ष	खेती/मजदूरी		5000 से 6000	
मूल निवास : सरकण साई (डूंगरपुर)							

मानवाधिकार हनन के क्रम में डायन प्रथा रूपी कुप्रथा से प्रताड़ित महिला 'अ' कई सालों से डायन होने का दंश झेल रही हैं। उक्त महिला डूंगरपुर जिले की सरकण साई गांव की मूल निवासी हैं, अपने पति व सबसे छोटे बेटे–बहू के साथ रहती हैं। इसके तीन बेटे व दो बेटियां हैं। जिनका विवाह हो चुका है। दोनों बड़े बेटों के दो–दो बच्चे हैं परन्तु तीसरे बेटे के कोई बच्चा नहीं है। महिला अनपढ़ है परन्तु उन्होने अपने सभी बच्चों को पढ़ाया है। तीनों बेटों ने क्रमशः 8वीं, 10वीं तथा 11वीं की पढ़ाई कर रखी है। बड़े दो बेटे प्राईवेट नौकरी करते हैं तथा तीसरा बेटा मकानों की कारीगरी का कार्य करता है। महिला के पति खेतों की रखवाली करते हैं और ये महिला स्वयं खेतों के साथ–साथ कभी–कभी नरेगा में काम करने भी जाती हैं। इस प्रकार इस परिवार की मासिक आय 5000 से 6000 है जिससे यह परिवार मुश्किल से अपना भरण–पोषण कर पाता है।

महिला 'अ' कई वर्षों से इसी गांव की मूल निवासी हैं और वर्षों से इस कुप्रथा से पीड़ित हैं। इस महिला को डायन होने का आरोप तब मिला जब गांव का ही एक व्यक्ति उसके घर गया और कुछ समय पश्चात् असकी मृत्यु हो गई। गांव वालों का कहना है कि उक्त महिला ने उस व्यक्ति को चाय में कुछ मिलाकर पिला दिया परिणामस्वरूप उस व्यक्ति के पेट में गांठ हो गई। कुछ समय पश्चात् वह गांठ पेट में ही फूट गई और उस व्यक्ति की मृत्यु हो गई। यहां तक कि इस महिला पर तो उसके अपने पोते को ही खा जाने का आरोप भी है जिसकी उम्र लगभग 17–18 वर्ष थी। अर्थात उसके पोते की मृत्यु का कारण भी उसे ही माना जाता है।

इस महिला के सम्बन्ध में गांव वालों से भी बात की गई। गांव के लोगों का कहना है कि वो तो किसी को डायन नहीं कहते डायन जैसा कुछ होता ही नहीं है। इस सम्बन्ध में पूछने पर गांव के लोग चुप हो जाते हैं, या जवाब देने में

आनाकानी करते हैं। इस प्रकार किसी भी तरह इस तरह के सवालों से पीछा छुड़ाने की कोशिश करते हैं। गांव के लोग यह बात जानते हैं कि किसी को डायन कहकर प्रताड़ित करना गैर–कानूनी है। डायन के सम्बन्ध में जो विचार एवं मान्यताए गांव वालों की हैं वह अत्यन्त गहनता से पूछने पर तथा सुचनाएं गुप्त रखने के विश्वास पर ही मिलीं। गांव के लोग जानते हैं कि यदि यह उजागर हो गया कि हम डायन महिलाओं के प्रति कैसी धारणाएं रखते हैं तो सजा हो सकती है।

जब अनौपचारिक रूप से गांव वालों से बात की गई तब उन्होंने डायन के सम्बन्ध में बताया की डायन का प्रकोप इतना बुरा है कि कई बार तो जान लेकर ही छोड़ता है। इसी गांव की आंगनवाड़ी कार्यकर्त्ता का भी यही मानना है कि उक्त महिला की वजह से वह स्वयं भी एक बार बीमार हुई है और स्वस्थ होने में उसे बहुत समय लग गया था। पड़ोसियों व रिश्तेदारों से भी बात हुई तो उन्होंने उक्त महिला तथा इस जैसी अन्य महिलाओं के प्रकोप से बचने के लिये कई नुस्खे भी बताए। इनके अनुसार ऐसी महिलाओं को नाराज़ करने से बचना चाहिए। परन्तु यदि किसी कारणवश ऐसा हो जाए कि ऐसी कोई महिला नाराज़ हो जाए या किसी बात से गुस्सा हो जाए तो उसके उस स्थान से हटते ही उसके पैरों की धूल को अपने ऊपर से उतार कर फेंक देना चाहिए। इससे उसका प्रकोप कम हो जाता है।

गांव के लोग इस महिला से दूर रहते हैं, उससे कोई व्यवहार नहीं रखा जाता। उससे बात नहीं की जाती। उसे देखकर लोग मुंह फेर लेते हैं। गांव की महिलाएं घूंघट डाल लेती हैं। गांव के लोगों की मान्यता है कि ऐसी औरत को कभी नाराज़ नहीं करना चाहिए इसीलिये वो जो मांगती है उसे दे दिया जाता है, जो कहती है मान किया जाता है। कैसे भी करके उसे उस स्थान से हटाने की कोशिश की जाती है जहां वह है। ऐसी महिलाओं को कई बार मारपीट कर सजा देने की कोशिश भी की जाती है। उस महिला के प्रति लोगों का यह व्यवहार अमानवीयता का प्रदर्शन करता है।

महिला 'अ' इस प्रथा से पीड़ित होने के कारण समाज से पूरी तरह से पृथक होकर अपना जीवन–यापन कर रही है। घर से बाहर निकलने पर वे केवल अपना काम करके पुनः अपने घर में आ जाती है। न तो वे किसी से बात करती हैं, न कोई उससे बात करता है। उम्र के इस पड़ाव में भी यह महिला एक अपराधी तथा अछूत जैसा जीवन–यापन कर रही है। उक्त महिला स्वयं भी जानती हैं कि गांव वाले उन्हे क्या समझते हैं तथा उन्हे लेकर उनके मन में क्या विचार हैं। लेकिन वे अपना जीवन जी रही हैं। वे ये मानती हैं कि उनकी आधी से अधिक उम्र निकल गई और जो बची है वो भी निकल जाएगी। दुःख केवल इतना है कि वे सामान्य जीवन नहीं जी सकती। दूसरे लोगों की तरह एक साथ बैठकर अपने सुख–दुःख को किसी के साथ बांट नहीं सकती। न तो वे किसी के घर

जाती है ना ही कोई उनके घर आना पसंद करता है। अगर कुछ काम होता भी है तो वे सामने से बात कर लेती हैं और उससे काम हो तो वह लोग प्रेम से बात कर लेते हैं। खुशी इस बात की है कि भले डर से ही सही पर जब भी उससे बात होती है खुशी–खुशी और प्रेम से की जाती है। उनके लिये इतना ही बहुत है।

पीड़ित महिला तथा उसके परिवार वालों से भी इस सम्बन्ध में बात की गई कि क्या आपने गांवो वालों द्वारा किये जाने वाले इस व्यवहार की शिकायत पुलिस प्रशासन अथवा जनजाति नेता किसी से की ? तो इस सम्बन्ध में पीड़ित महिला का कहना है कि प्रत्यक्ष रूप से इस प्रकार का कोई व्यवहार नहीं किया जाता जिसकी शिकायत की जा सके। जो व्यवहार किया जाता है वो पीठ पीछे किया जाता है। हमारे सामने तो सब अच्छे से बोलते हैं। इसका एहसास नहीं कराया जाता कि हमें लेकर वे लोग क्या सोचते हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि डायन नामक कुप्रथा ने उक्त महिला के जीवन को बहुत प्रभावीत किया है। ये महिला सामान्य जीवन नहीं जी पा रही हैं। गांव के लोगों द्वारा मानसिक रूप से प्रताड़ित हो रही हैं। यद्यपि इस महिला ने गांव वालों, रिश्तेदारों व पड़ौसियों के प्रति कोई नाराजगी नहीं जताई परन्तु उनका दुःख उनके चेहरे पर साफ झलकता है। महिला का जीवन घर और खेतों तक सिमट कर रह गया है। लोगों के इस व्यवहार के कारण ही कई बार ना तो वे किसी का सुख–दुःख बांट पाती हैं, ना ही स्वयं का सुख–दुःख साझा कर पाती हैं।

ये कभी–कभी स्वयं को कोसने लगती हैं कि आखिरकार उनके साथ ही ऐसा क्यों हुआ। ऐसा जीवन जीने से क्या फायदा जिसमें लोग उनसे दूर भागे। उन्हे अपने पर लगा यह डायन का आरोप एक अभिशाप लगता है जो उनके अनुसार उनकी मृत्यु के बाद भी उनके साथ ही जाएगा।

केस 2							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
ब	प्राथमिक		45 वर्ष	खेती		12से15 हजार	
मूल निवास : झाड़ोल (उदयपुर)							

प्रताड़ित महिला 'ब' उदयपुर जिले के झाड़ोल तहसील की निवासी हैं। ये अपने सास–श्वसुर, पति व बच्चों के साथ कई सालों से यहीं रहती हैं। महिला की उम्र–45 वर्ष हैं और प्राथमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त की है। इनके खेत बहुत बड़े है जिसके कारण इनका पूरा परिवार खेतों में ही काम करता है। पति की उम्र–52 वर्ष हैं, वे खेतों के साथ–2 त्यौंहारों व विवाह आदि के समय में घरों के रंग–रोगन

का कार्य करते हैं। महिला के सास–श्वसुर की उम्र लगभग 65 व 72 वर्ष है। ये भी महिला व उसके पति के साथ खेतों मे काम करते हैं। महिला के 2 बच्चे हैं, दोनों ही बेटे हैं एक बेटा 10वीं की परीक्षा दे रहा है तथा दूसरा बेटा 7वीं की परीक्षा दे रहा है। इस परिवार की मासिक आय 12000 से 15000 हजार है।

उक्त महिला सामान्य जीवन जी रहीं थीं लेकिन एक दिन अचानक इनका झगड़ा पड़ोस की एक दूसरी महिला से हो गया, बात हाथापाई तक आगे बढ़ गई, परन्तु दोनों के परिवार वालों व गांव वालों की मदद से दोंनों को समझाइश करके झगड़ा खत्म किया गया। दूसरे दिन जब इस महिला से झगड़ा करने वाली महिला की बेटी स्कूल पहुंची तो वह प्रार्थना के समय धूणने लगी। स्कूल के अध्यापकों ने उसे संभाला पर वह ठीक नहीं हुई। तत्पश्चात् उसके अध्यापकों ने बच्ची के पिता को फोन करके उन्हें बुलाया, माता–पिता उसे घर ले गए। घर आते ही वह बच्ची ठीक हो गई। बच्ची के परिवार वालों को शक हुआ कि कहीं बच्ची को कुछ भूत–प्रेत तो नहीं लगा ? परन्तु तब वे लोग शान्त रहे। दूसरे दिन पुनः वह बच्ची स्कूल गयी और फिर से धूणने लगी, स्कूल वालों ने बच्ची के अभिभावकों को पाबंद किया कि जब तक बच्ची ठीक ना हो जाये उसे स्कूल ना भेजा जाए।

बच्ची के परिवार वालों को यकीन हो गया कि उनकी पड़ोस वाली महिला ने ही उनकी बच्ची को बीमार किया है। उसके बाद से जब भी किसी बच्चे को कोई तकलीफ होती महिला 'ब' पर शक किया जाता। धीरे–धीरे पूरे गांव ने महिला 'ब' के डायन होने की पुष्टि कर दी।

बात यहां तक पहुंच गई कि जिस महिला से पीड़ित महिला का झगड़ा हुआ था उस महिला के पति व परिवार के दो अन्य पुरूष सदस्यों ने पीड़ित महिला पर डायन का आरोप लगाकर उससे मारपीट कर दी। कुल्हाड़ी व पत्थरों से लेस होकर आये व पीड़िता को चोटें पहुंचाई। महिला के परिवार वालों ने जैसे–तैसे उन हथियारबंद लोगों से अपनी व महिला की जान बचाई।

पीड़ित महिला ने अगले ही दिन पुलिस उपधीक्षक को परिवाद सौंप न्याय की मांग की। परिणामस्वरूप झाड़ोल पुलिस ने सभी आरोपियों को न्यायालय में पेश किया तथा जमानत मुचलकों पर छः माह के लिये पाबंद किया इसके बावजूद हमलावरों ने पुनः मारपीट की। पीड़ित महिला ने पुनः कार्यवाही की मांग की है।

पड़ौसियों व रिश्तेदारों से जब पीड़ित महिला के संबंध मे बात की तो उनका मानना है कि यह महिला सामान्य थी परन्तु अब पता नहीं वह ऐसा व्यवहार क्यों कर रही है ? उनका मानना है कि वो महिला को डायन तो नहीं कहते परन्तु ये मानते है कि अब वे बच्चों पर जादू टोना करने लगी है क्योंकि जो भी बच्चा उसके आस–पास दिखता है वह बीमार हो जाता है।

गांव वालों का मानना है कि ये महिला जादू–टोना करके बच्चों को अपने वश में करने की कोशिश करती हैं। जिससे भी इसका झगड़ा या बहस होती है उसका बच्चा बीमार हो जाता है तो इसका क्या मतलब निकालें ? यह महिला डायन है, इसकी नजर खराब है। गांव के लोगों ने अब इस महिला से बात करना और किसी भी प्रकार का व्यवहार करना छोड़ दिया है। गांव वाले अपने बच्चों को इसके आसपास भी नहीं फटकने देते।

पीड़ित महिला के परिवार वालों से बात की तो उनका कहना है कि गांव वाले जबरदस्ती हमें बदनाम कर रहे हैं, यहां कोई डायन नहीं रहती। हमारे घर में भी बच्चे हैं हम भी झगड़ा करते हैं, यहां तो कोई बीमार नहीं होता। पीड़ित महिला के बच्चे कहते हैं कि हमारी मां डायन नहीं है लोगों को समझाईये वो उन्हे ऐसा ना कहें।

पीड़ित महिला से जब उनके बारें में पूछा गया तो उनकी रूलाई फूट पड़ी। वे कहती हैं कि वे तो किसी बच्चे को बुरी नजर से नहीं देखतीं। हां, किसी से उसका झगड़ा होता है तो वो गुस्सा जरूर करती हैं, उसे कोसती हैं पर वो उनके बच्चों को नुकसान पहुंचाने का कभी नहीं सोचती गांव वालों को यह यकीन हो गया है कि वे डायन है, इस बात का उन्हे अफसोस है। उनका विश्वास है कि वे पुनः उनका विश्वास जीतेंगी और सामान्य जीवन यापन करेंगी।

उक्त प्रकरण से स्पष्ट है कि पीड़ित महिला जो सामान्य जीवन जी रही थीं अचानक हुए हादसे ने उनका जीवन बदल दिया। जो महिला पूरे गांव के लोगों से हंसती बोलती थी अचानक ही उस महिला के प्रति लोगों का रवैया बदल गया। अगर वास्तव में वे डायन हैं तो उन्होने गांव के लोगों को इस बात की सजा क्यों नहीं दी, उन्हें नुकसान क्यों नहीं पहुंचाया। यह अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि इस और किसी का ध्यान ही नहीं गया।

पीड़ित महिला का परिवार और विशेषकर बच्चे अपनी मां की ऐसी हालत को देखकर अत्यन्त दुःखी है मां के साथ–साथ बच्चे भी सजा भुगत रहे हैं। स्कूल में, गांव में, कहीं न कहीं से मां के डायन होने का उलाहना उन्हें मिलता ही रहता है। जो उन्हें मानसिक रूप से प्रभावित कर रहा है। बच्चे अकेले–अकेले स्कूल जाते हैं तथा खेलकूद में भी कोई बच्चा उनके साथ नहीं होता। एक महिला के साथ उसका पूरा परिवार इस कुप्रथा से प्रताड़ित हो रहा है।

केस 3							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
स	अशिक्षित		80 वर्ष	–		8000 से 10000	
मूल निवास : रोहनवाड़ी गांव (बांसवाड़ा)							

पीड़ित महिला 'स' अपने संयुक्त परिवार में बांसवाड़ा के रोहनवाड़ी गांव में कई सालों से निवासकर रही हैं। महिला की उम्र 80 वर्ष है तथा ये विधवा हैं। और ये अपने बीच वाले बेटे के साथ रहती हैं। पीड़ित महिला के तीन बेटे व दो बेटियां हैं। सभी बच्चें विवाहित हैं तथा सबका परिवार अच्छे से बस चुका है। सबसे बड़े बेटे अहमदाबाद में कारीगरी का कार्य करते है तथा अपने बीवी, बच्चों के साथ वहीं रहते हैं। छोटे बेटे गुजरात में कारखानें में नौकरी करते है वो वहीं निवासरत हैं। दोनों बेटियां उनके ससुराल में हैं तथा पीड़ित महिला अपने बीच वाले बेटे के साथ अपने मूल निवास स्थान पर ही रहती हैं। इनकी पुश्तैनी जमीन है। पीड़ित महिला की बहू रख–रखाव करती हैं। चूंकि इनका बेटा एक निजी विद्यालय में चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के रूप में कार्यरत है इसलिये खेतों पर काम करने के लिये दो मजदूर रख रखे हैं। इस परिवार की मासिक आय 8–10 हजार है।

इस महिला को डायन होने का आरोप तब मिला जब एक दिन गांव की ही एक महिला पीड़िता के पोते की शिकायत करने पहुंची कि उसके पोते ने महिला की बकरियों को पत्थर मार कर उन्हें घायल कर दिया। पीड़ित महिला तो कुछ नहीं बोली और अपने पोते को समझाने का कहकर उसे भेज दिया, परन्तु महिला जैसे ही अपने घर पहुंची उसे चक्कर आने लगे और वो जमीन पर गिर गई। कुछ समय बाद उसे होंश आया और उसने सारी घटना अपने परिवार और आस पड़ौस को सुनायी तभी से यह महिला डायन का दंश झेल रही है।

इस घटना के कुछ दिनों बाद ही गांव व उस महिला के परिवार के कुछ सदस्यों ने पीड़ित महिला पर घर में घुसकर हमला कर दिया। पीड़ित महिला के पुत्र ने पुलिस अधीक्षक को रिपोर्ट दी कि गांव के कुछ लोगों ने उसकी मां पर डायन होने का आरोप लगाया तथा लठ्ठ व पत्थरों से उन पर हमला किया, जान से मार देने की धमकी भी दी। हमलावरों में से एक व्यक्ति ने तो घर में पड़ी कुल्हाड़ी से उस पर वार भी किया जिससे पीड़िता गम्भीर रूप से घायल हो गयी। परिवार के लोगों ने बीच–बचाव कर उस महिला को जैसे–तैसे बचाया। हमलावरों ने घर के केलू भी फोड़ दिये और बहुत सारा नुकसान पहुंचाया।

पुलिस ने अनुसंधान करके न्यायालय में आरोप पत्र प्रस्तुत किया। परिणामस्वरूप भारतीय दण्ड संहिता की विभिन्न धाराओं के तहत आरोपियों को तीन वर्ष का कठोर कारावास तथा प्रत्येक को चार–चार हजार रूपये के जुर्माने की सजा सुनाई गयी। वर्तमान मे सभी आरोपी सजा काट रहे हैं।

पीड़ित महिला के बच्चों से जब इस संबंध में बात की गई तो उनका कहना है कि उनकी मां की उम्र बहुत अधिक है वह कहीं आती जाती नहीं है। किसी को नुकसान पहुंचाना तो बहुत दूर की बात है वे तो स्वयं का ध्यान भी नहीं रख पातीं बस खाट पर सोयी रहती हैं। भोजन करती हैं और सो जाती हैं। ऐसी

महिला क्या कर सकती है। परिवार वालों का कहना हैं कि इन्हें बहुत समय से घुटनों में दर्द की समस्या है जिसके कारण ये चलने–फिरने में असमर्थ हैं। इन्हें सुनाई भी कम देता है और दिखाई भी। उम्र के इस पड़ाव में किसी को डायन कहना कहां तक जायज है। यद्यपि परिवार वालों का कहना है कि जब से पुलिस ने कार्यवाही की है तब प्रत्यक्ष रूप से गांव वालों द्वारा किसी भी प्रकार का कोई आरोप–प्रत्यारोप उन पर या उनके परिवार पर नहीं लगाया जाता है।

पीड़ित महिला से भी इस संबंध में बात की गई परन्तु वो बात को समझने में व बोलने में असमर्थ है इसी कारण उनके विचार या उनकी सोच स्पष्ट नहीं हो पायी।

गांव वालों से भी इस संबंध में बात की गई तो उन्होंने कहा कि हम तो डायन जैसी बातों पर विश्वास नहीं करते पर जब गहनता से पूछा गया तो लोंगों ने बताया कि यह पीड़ित महिला बांझ थी। कई वर्षों तक इसके बच्चे नहीं हुए परन्तु इन्होने जब जादू–टोना करवाया तब इसके पहले दो बेटियां जुड़वा हुईं और फिर एक–एक साल में तीन बेटे हुए। यह महिला जादू टोना करती है। इसे कुछ करने की आवश्यकता नहीं है यह तो केवल नजर उठाकर देख ले तो भी व्यक्ति बीमार हो जाए।

स्पष्टतः कहा जा सकता है कि उक्त प्रकरण में पुलिस ने सख्त कार्यवाही करते हुए दोषियों को सजा दी, उसके पश्चात् भी वह गांव व समाज के लोगों की मानसिकता को नहीं बदल सकी। एक महिला जो उम्र के इस पड़ाव में बिस्तर पर लेटी रहती है उसे भी लोग नहीं छोड़ते। बच्चे देर से हुए हैं तो वो जादू–टोना करने से हुए और जादु–टोना करके वो डायन बन गई। यह मानसिकता इस गांव के लोगों की संर्कीणता को प्रदर्शित करती है।

उपर्युक्त सभी उदाहरण एक ओर डायन प्रथा सम्बन्धी कार्यकलापों को दिखाते हैं और दूसरी और उन व्यक्तियों के आचरणों को प्रस्तुत करते हैं जो आरोपों के माध्यम से कानून व्यवस्था को अपने हाथ में लेना चाहते हैं। प्रभावित व्यक्ति तथा पीड़ित दोनों को हो कानूनी और सामाजिक संरक्षण की आवश्यकता है। मानव अधिकार यहां इसी दृष्टि से प्रभावी हैं।

दागना प्रथा : वैयक्तिक अध्ययन

चयनित अनुसंधान क्षेत्र के जनजातियों की दूसरी प्रमुख समस्या है दागना प्रथा। यह प्रथा भी जनजाति समाज में परम्परागत रूप से चली आ रही है। जिसमें प्राचीन चिकित्सा प्रणाली को अधिक महत्त्व दिया जाता है। वर्तमान में अन्य क्षेत्रों की तरह चिकित्सा के क्षेत्र में भी कई परिवर्तन हुए हैं और आज की चिकित्सा व्यवस्था अत्यन्त सुदृढ़ हुई है। कई गंभीर व लाईलाज बीमारियों के लिये विभिन्न खोजों के द्वारा तथा नई–नई तकनीकियों का प्रयोग करके ईलाज की

पद्धतियों का विकास किया गया है। अर्थात वर्तमान चिकित्सा व्यवस्था का काफी विकास हुआ है। परन्तु आज भी कुछ स्थान व समाज ऐसे हैं जहां परम्परागत चिकित्सा प्रणाली को ही स्थान दिया जाता है और उसी को आधार बनाकर मनुष्यों का ईलाज किया जाता है। अपनी परम्परागत व्यवस्था को बनाये रखना अथवा बरसों पुरानी व्यवस्था का सम्मान करना गलत नहीं है और ना ही यह किसी के अधिकार का हनन करता है। परन्तु जब किसी व्यवस्था द्वारा किसी व्यक्ति अथवा विशेषकर बच्चों को शारीरिक–मानसिक रूप से प्रताड़ित किया जाए तो वो मानव अधिकारों का उल्लघंन ही माना जाता है। दागना प्रथा ऐसी ही परम्परागत चिकित्सा प्रणाली का एक भाग है जिसमें मनुष्य को असहनीय पीड़ा देकर उसे शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया जाता है। हर बीमारी का ईलाज 'डाम' से करने की भ्रान्तिया कई बार जानलेवा साबित हो चुकी हैं। इसके बावजूद यह खिलवाड़ बदस्तूर है। अज्ञानता व अंधविश्वास के कारण लोग इसी को ईलाज मानते है। स्वाभाविक है कि इस तरह शारीरिक रूप से प्रताड़ना के शिकार व्यक्ति के मानव अधिकारों की सुरक्षा की चर्चा की जाए अथवा इस हेतु कठोर कदम उठाये जाएं। यहां दागना प्रथा के कुछ ऐसे ही प्रसंगों का उल्लेख किया जा रहा है जो मानव अधिकारों को मजबूती से लागू करने को प्रेरित करते हैं।

जनजाति समाज में यह विश्वास किया जाता है कि किसी भी व्यक्ति को कोई भी बीमारी होने पर 'डाम' लगाने पर वह ठीक हो जाएगा। इसमें बीमार व्यक्ति के शरीर की किसी विशेष नस को गर्म सलाखों व कपड़े की गोटीयों से जलाया जाता है और उससे वह व्यक्ति ठीक हो जाता है। यह प्रथा सबसे ज्यादा बच्चों पर आजमाई जाती है। कईं व्यक्तियों ने तो इसे अपना व्यवसाय बना रखा है और उन्होंने कईं लोगों को डाम लगाया हैं। किसी को हार्ट अटैक हो या हाथ पैर अकड़ जाने की समस्या, बच्चे ज्यादा रोते हों या महिलाओं की सफेद पानी की शिकायत, कोई धुणता हो या किसी को भूत लगा हो हर बीमारी के अनुसार नसों के हिसाब से जगह अलग–अलग होती है पर दवा एक है डाम लगाना। डाम से पीड़ित व्यक्ति को यह गलत भी नहीं लगता क्योंकि वह अपने व अपने परिवार की इच्छा से डाम लगवाता है। चयनित अनुसंधान क्षेत्र से भी दागना प्रथा से सम्बन्धित घटनाओं का अध्ययन किया गया। दागना प्रथा से सम्बन्धित सभी वैयक्तिक अध्ययन निम्न प्रकार से हैं–

केस 1							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
अ	अशिक्षित		50 वर्ष	खेती / मजदूरी		10,000 रू.	
मूल निवास : भोजातों का ओड़ा (डूंगरपुर)							

दागना प्रथा से पीड़ित व्यक्ति 'अ' डूंगरपुर जिले के भोंजातों का ओड़ा गांव का निवासी है। इनकी पत्नी का देहांत हो चुका है। अतः उक्त व्यक्ति अपने पिता व बेटों के साथ रहता है। इस व्यक्ति के दो बेटे व एक बेटी है। तीनों ही बच्चों का विवाह हो चुका है। उक्त व्यक्ति की पत्नी का देहांत तीनों बच्चों के विवाह पश्चात् एक गंभीर बीमारी (टाईफाइड) से हो गयाथा। इस व्यक्ति के दोनो बेटो ने क्रमशः 5वीं व 7वीं की पढ़ाई कर रखी है तथा दोनों बहुएं मिडिल पास हैं। बड़ा बेटा गुजरात में मजदूरी करता है तथा छोटा बेटा खेती व नरेगा का काम करता है। दोनों बहुएँ भी खेतों के साथ–साथ ईंट के भट्टों पर काम करती हैं व व्यक्ति 'अ' स्वयं भी खेतों का सारा काम संभालता है परिवार की मासिक आय लगभग 10,000/– है जिससे कि इनका निर्वाह हो जाता है।

व्यक्ति 'अ' को दागना प्रथा की जानकारी बचपन से ही थी क्योंकि व्यक्ति के अनुसार जब ये बहुत छोटे थे तब उनके परिवार के किसी सदस्य के बीमार होने पर उन्हे गर्म सलाखों से दागा गया था। व्यक्ति के अनुसार तब तो गांव के हर दूसरे व्यक्ति अर्थात महिला, पुरूष, बच्चे सभी को डाम लगाया जाता था। परन्तु संयोगवश उन्हे कभी डाम नहीं लगाया गया था। इन्हें जब सर्वप्रथम इस डाम का दंश झेलना पड़ा तब वेस्वयं पूरे होश में भी नहीं थे।

घटनाक्रम के अनुसार इन्हें एक दिन अचानक सीने में दर्द की शिकायत हुई, घबराहट होने लगी और सांस लेने में तकलीफ होने लगी। तब परिवार वालों ने उनके सीने को गर्म सलाखों व जलते हुए कपड़े की गोटियों से डाम लगवाया। परन्तु जब हालत में सुधार न हुआ तो उन्हे जिला अस्पताल लाया गया। चिकित्सकों द्वारा उनकी सभी जाँचें करने पर उन्हें हार्ट अटेक की पुष्टि हुई। चिकित्सकों द्वारा तत्काल ईलाज शुरू किया गया। चिकित्सकों द्वारा उक्त व्यक्ति के परिवार को उन्हें देर से लाने का कारण भी पूछा गया। परन्तु उनके परिवार द्वारा इस संबंध मे कोई सन्तोषप्रद जवाब प्राप्त नहीं हुआ। लेकिन जब उक्त व्यक्ति के शरीर की जांच के समय उनके शरीर को देखा गया तो चिकित्सकों के आश्चर्य की सीमा न रही। उनके शरीर को 10 जगह पर दागा गया था जो बहुत ही भयावह स्थिति थी।

दागना प्रथा का यह प्रकरण चिकित्सकों की जांच के दौरान सामने आया। उक्त व्यक्ति या उनके परिवार द्वारा इस संबंध में कोई जानकारी नहीं दी गई थी। यह डाम किसने लगाया ? इस संबंध में व्यक्ति व उनके परिवार से बात की गई परन्तु इन्होंने स्वयं डाम लगाने की बात कही। संभवतया यह डाम किसी भोपे अथवा बाबा के पास लगवाया गया है, परन्तु उक्त व्यक्ति तथा उनके परिवार द्वारा इस बात को अस्वीकार किया गया है। हार्ट अटेक अत्यन्त गम्भीर स्थिति होती है यद्यपि प्रथम बार हार्ट अटेक होने पर उक्त व्यक्ति की जान बच गई। परन्तु यदि यह स्थिति दूसरे या तीसरे हार्ट अटेक पर होती तो इनकी जान बचना मुश्किल था।

अंधविश्वास की हद इतनी है कि इनके गांव के किसी भी व्यक्ति द्वारा इस बात की सच्चाई को नहीं बताया जा रहा है। गांव के लोगों के अनुसार उनके गांव में ऐसा कोई भोपा या बाबा नहीं रहता जो डाम लगाने का काम करे जबकि अनुसंधान के दौरान कई व्यक्तियों व बच्चों के हाथ–पाव व चेहरों पर उसके निशान देखे गये। इनके परिवार वालों से निशानों के संबंध में पूछने पर कहा गया की ये बहुत पुराने हैं और बहुत पहले गांव में कोई भोंपे–बाबे थे जिनसे ये निशान लगवाया गया था।

व्यक्ति 'अ' के संबंध में पूछने पर गांव वालों का कहना है कि ये डाम इनके परिवार से ही किसी ने लगाया होगा डाम लगाना कोई मुश्किल काम नहीं है बस सलाखों या चींपिये को गर्म करके उसे तकलीफ वाली जगह पर लगाना होता है और यदि लोहे की चीज ना हो तो कपड़े की गोल–गोल गोटियां बना कर उन्हें गर्म करके उसे शरीर पर रखकर दबा दिया जाता है। उक्त व्यक्ति के भी किसी अपने ने ही उसे दागा होगा।

दागना प्रथा में ऐसे ही शरीर को नहीं दागा जा सकता। इसे भी कोई प्रशिक्षित ही निभा सकता है। परन्तु गांव वाले डरते है कि उनके अनुसार यदि वे किसी भोंपे बाबे का नाम बात देंगे तो उसे उस गांव से निकाल दिया जायेगा और यदि ऐसा हुआ तो उनकी प्राथमिक चिकित्सा करने वाला कोई नही होगा।

उक्त प्रकरण से यही स्पष्ट होता है कि उन्हें एक पढ़े–लिखे प्रशिक्षित चिकित्सक से ज्यादा अपनी चिकित्सा व्यवस्था पर विश्वास है। जनजाति समाज की गरीबी व अज्ञानता उनकी सबसे बड़ी दुश्मन है। ये लोग ऋणग्रस्तता से इतने दबे होते है कि घर में अचानक आने वाली सभी समस्याओं को सस्ते में निपटाने की कोशिश करते है। चिकित्सालय में अधिक धन व समय खर्च होने के डर से वो भोंपो–बाबों के पास चले जाते है। परिणाम असहनीय पीड़ा और तड़प।

व्यक्ति 'अ' का जितनी तकलीफ हार्ट अटैक से नहीं हुई होंगी उससे कहीं ज्यादा सीने पर लगे 10 घावों से हुई। इस अमानवीय कृत्य को क्या नाम दिया जाये। अंत में यही कहा जा सकता है कि जनजाति समाज को इन कुप्रथाओं से बाहर निकालने के भरसक प्रयास करने होंगें।

केस 2							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
ब	अशिक्षित		40 वर्ष	आंगनवाड़ी में सहायिका		1000 रूपया	
मूल निवास : भाणदा (उदयपुर)							

पीड़ित महिला 'ब' जन्म से ही इसी गांव में रहती हैं। इनका विवाह भी इसी गांव मे हुआ है। महिला की उम्र–40 वर्ष है तथा ये आंगनवाड़ी में सहायिका के पद पर कार्यरत हैं। पति ठेकेदारी का कार्य करते हैं तथा इनके एक बेटा–बहू भी हैं। बेटा पिता के साथ ही कार्य करता है। महिला 'ब' अनपढ़ है। इनके पति ने दूसरी तक पढ़ाई कर रखी है तथा बेटे ने मिडिल तक की पढ़ाई कर रखी है। इनकी बहू घर के कामों के साथ–साथ 10 वींकी पढ़ाई भी कर रही हैं। महिला की मासिक आय 1000/– रूपया है।

पीड़ित महिला का परिवार तो बहुत बड़ा है परन्तु ये लोग अलग–अलग रहते हैं। यद्यपि इन सबका घर एक ही है। परन्तु सभी को एक–एक, दो–दो कमरे बांटे हुए हैं। महिला 'ब' स्वयं अकेली रहती है क्योंकि इनके पति ने दूसरी औरत रख ली है। इनके पति दूसरी औरत और उनके बच्चों के साथ अलग रहते हैं तथा इनके सास श्वसुर अपने दूसरे बेटे के साथ अलग रहते हैं। इनके श्वसुर पहले सरपंच थे और उसके बाद इनकी सास भी कई सालों तक गांव की सरपंच रही हैं। इसी कारण गांव में इस परिवार का अच्छा वर्चस्व है।

पीड़ित महिला को सबसे पहले डाम तब लगाया गया जब ये शादी के कुछ समय बाद धोणने लगी। इस प्रथा में यह विश्वास होता है कि यदि भूत–प्रेत लगा है तो पीठ पे रीढ़ की हड्डी पर डाम लगाया जाता है परिणामस्वरूप इनके भी पीठ पर डाम लगाया गया। डाम की जगह पर एक बहुत बड़ा छाला भी हो गया और कई दिनों तक ये महिला सही ढंग से सो भी नहीं पायीं। कुछ समय बाद महिला ने एक बेटे को जन्म दिया, बेटा छः माह का हुआ और इनके पति नातरे से दूसरी औरत ले आये। तब से ये महिला एकाकी जीवन जी रही हैं। बेटे को पाल पोस कर बड़ा किया और बेटे ने बहू के साथ घर बसा लिया। यद्यपि इनके पति अपने बेटे की सारी जिम्मेदारी उठाते रहे।

कुछ समय पश्चात् महिला के पैरो में दर्द व जकड़न की शिकायत हुई। इनकी सास इन्हें उसी गांव के एक व्यक्ति के पास ले गयी जिसका व्यवसाय ही डाम लगाना है। उस व्यक्ति ने महिला के पैरों को सलाखों से जलाया जिसके निशान आज भी अत्यन्त गहरें है। उस डाम के बाद से पीड़ित महिला अच्छे से चल नहीं पाती। उनके पैर टेढ़े–मेढ़े पड़ते है। उनके लिये कहीं भी पैदल आना जाना अत्यन्त मुश्किल हो गया है।

महिला 'ब'से जब इस संबंध में बात की गई तो उन्होंने कहा कि डाम में तकलीफ तो होती है परन्तु व्यक्ति ठीक हो जाता है। उन्होंने कहा कि जब वो धुणती थी तब भी उन्हें पीठ पर डाम लगाया गया था तो वो ठीक हो गयी। तब उनसे पैरो पर डाम के संबंध में पूछा गया तो उनका कहना है कि ये तो ईलाज है, कभी सफल हो जाता है तो कभी असफल भी हो जाता है। क्या कभी डॉक्टर के ईलाज असफल नहीं होते। उनके साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ होगा इसलिये उनके पैर ठीक नहीं हुए।

इस संबंध में गांव वालों से भी बात की गई तो उनका भी यही कहना है कि डाम एक पारम्परिक चिकित्सा प्रणाली है जो कभी सफल हो जाती है तो कभी असफल। उक्त महिला जब विवाह करके इस घर में आई थीं तो आए दिन धोणती थी परन्तु जब से उन्हें डाम लगाया है वह ठीक हो गई हैं।

पीड़ित महिला 'ब'के परिवार से भी इस संबंध में बात की गई। परन्तु महिला की सास जो कई वर्षों से सरपंच के पद पर रह चुकी हैं थोड़ा बहुत कानून जानती हैं और इसी कारण उन्होंने महिला 'ब' के साथ हुए डाम से संबंधित किसी भी प्रकार के व्यवहार से साफ इन्कार कर दिया और परिवार के किसी भी सदस्य से बात करने से भी इन्कार कर दिया। उन्होंने परिवार के सदस्यों को भी धमकाया कि कोई साक्षात्कारकर्ता से बात न करें। यहां तक की उन्होंने तो अध्ययनकर्ता से अभद्र व्यवहार भी किया। परन्तु चूंकि पीड़ित महिला के संबंध में पहले ही सब से बात हो चुकी थी अतः इस प्रकरण से संबंधित जानकारी प्राप्त कर ली गई।

उक्त प्रकरण से साफ स्पष्ट होता है कि डाम (दागना प्रथा) एक ऐसी प्रणाली है जिसे आसानी से लोग छोड़ने वाले नहीं है। उक्त प्रकरण में पीड़ित महिला इस डाम के कारण चलने–फिरने में असमर्थ हो गई है। परन्तु फिर भी उनके अनुसार इस प्रथा में कोई बुराई नहीं है। गांव के कई लोग जानते है कि यह गैर–कानूनी है फिर भी इस प्रथा को निभाया जाता है।

यह जानने का प्रयास नहीं किया गया कि पीड़ित महिला के धोणने का क्या कारण था ? उसे भूत लगा है यह समझकर डाम लगा दिया गया। यदि वह ठीक हो गई तो इनके पति ने दूसरी शादी क्यों की ? क्या वह अब भी बीमार है ? पीड़िता के पैरो मे क्या समस्या थी ? इस संबंध में भी चिकित्सक की सलाह नहीं ली गई। सीधे ही डाम लगवाने को तैयार हो गए। अंधविश्वास की पकड़ इतनी मजबूत है कि कोई समस्या के कारणों को जानना ही नहीं चाहता। पीड़ित महिला के पति ने पत्नी को छोड़कर दूसरी औरत रख ली। क्या उन्हें स्वस्थ और सुखी वैवाहिक जीवन जीने का अधिकार नहीं था। इसका जवाब किसी के पास नहीं है।

केस 3							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
स	मिडिल		26 वर्ष	–		12 से 15 हजार	
मूल निवास : कुशलगढ़ (बांसवाड़ा)							

प्रस्तुत प्रकरण में पीड़ित महिला कुशलगढ़ (बांसवाड़ा) की मूल निवासी हैं। यह अपने परिवार की तीसरी बेटी हैं। इनकी उम्र 26 वर्ष है इनका विवाह 6 वर्ष पूर्व कुशलगढ़ से थोड़ी ही दूरी पर हुआ था। इनके पति कुवैत में व्यवसायरत हैं।

इनके दो बड़ी बहनें व एक छोटी बहन तथा एक छोटा भाई है। सभी बहनों का विवाह हो चुका है। छोटे भाई का विवाह भी हो चुका है। और वो दुबई में कार्य करता है। इनके पिताजी के एक किराणा की दुकान है। इनकी मां गृहणी है जो घर पर ही रहती हैं तथा थोड़ी बहुत खेती की जमीन है जहां काम करती हैं। इस प्रकार इस परिवार की मासिक आय 12000 से 15000 है अर्थात इनकी आर्थिक स्थिति काफी अच्छी है।

पीड़ित महिला का विवाह तब हुआ जब वह स्वस्थ्य थीं। इन्होंने एक बेटे को जन्म दिया। परन्तु बच्चे के जन्म के कुछ समय बाद ही ये मानसिक रूप से बीमार हो गई। धीरे–धीरे इन्हें दौरे पड़ने लगे। जैसा कि इनके समाज में होता है भूत–प्रेत का साया समझकर इन्हें पीठ पर डाम लगाया गया पर इनमें कोई सुधार नहीं हुआ। ससुराल वालों ने इन्हें इनके मायके भेज दिया। मायके वालों ने शर्त रखी कि ये इनके बेटे को भेज दे तो वो इन्हें अपने घर मे शरण देंगे। ससुराल वाले इनके बेटे को ले गए। आज ये महिला इनके ही घर में एक पागल और लावारिस का जीवन जी रही हैं। घर के बाहर एक कोने में पड़ी रहती हैं। बाहर ही खाना दे दिया जाता है, कभी–कभी इन्हें दौरे भी पड़ते हैं तो रस्सी से पशुओं की तरह बांध देते हैं। परन्तु इनका इलाज करवाने का ख्याल भी किसी को नहीं आता।

इनके परिवार वालों से बात की गई तो उनका कहना है कि उन्होंने जब विवाह करवाया था तब तो अच्छी भली थी। शादी के बाद ही इनके ससुराल में किसी ने जादू–टोना करके इसे पागल कर दिया है। उनकी बेटी बहुत सुन्दर थी और जिससे शादी करवाई वो लड़का बहुत काला था इनके गांव में किसी ने जलन से उनकी बेटी पर जादू–टोना कर दिया है और हमारी बेटी पागल हो गई।

बेटी का इलाज ना करवाने का कारण पूछने पर ये लोग कहते हैं कि कौन कहता है हमने इलाज नहीं करवाया उनके पास पैसो की कोई कमी नही है वो तो ये ठीक नहीं हुई इसमें हमारा क्या दोष। जब चिकित्सालय व चिकित्सक तथा दवाईयों के बारें में पूछा गया तो इनका जबाव सन्तोषप्रद नहीं था। साफ स्पष्ट हो गया कि ये सत्य बताना नहीं चाहते।

पीड़िता से बात करने की कोशिश की गई पर उन्होंने दुश्मन समझकर पत्थर फेंकना शुरू कर दिया। पीड़ित महिला के ससुराल पक्ष से भी बात की गई तो उन्होंने कहा कि उन्होंने पीड़िता को केाई डाम–वाम नहीं लगवाया। ये तो उसके मायके वालों ने लगवाया होगा। वे इस बारे में कुछ नहीं जानते और उनके परिवार में कभी किसी को डाम नहीं लगवाया गया। पीड़ित महिला की सास का कहना है कि यह शादी धोखे से करवाई गई है। पीड़ित महिला पहले से ही पागल थी उनके बेटे तथा उनके साथ धोखा हुआ है। पीड़ित महिला के ससुराल वालों का कहना है कि उनका बेटा कमाता है वो तो उसकी दूसरी शादी करवा

देंगे। उन्होंने अपने पोते को भी रख लिया है। उसे इतना प्यार देंगे कि वह अपनी मां को कभी याद भी नहीं करेगा।

उक्त प्रकरण में पीड़ित महिला एक साथ कई दुःख झेल रही है। उसका कोई नहीं है। उसके बेटे का क्या दोष था जिसे उसकी मां से अलग कर दिया गया। अलग करने वाले कौन ? पीड़िता के अपने ही माता–पिता। इसके बाद भी वह एक पागल होने का उलाहना सह रही है। डाम का दंश दिया जाता है ताकि वो ठीक हो जाए पर इतना पैसा होने के बाद भी चिकित्सक की सलाह नहीं ली जा रही।

ना तो माता–पिता और ना ही पति कोई भी उस महिला के दर्द को नहीं समझ रहा। वह महिला एक पशु की भांति खूंटे से बंधी रहती है और एक बंदी की भांति जीवन यापन कर रही है।

नातरा प्रथा : वैयक्तिक अध्ययन

वैवाहिक जीवन की दो आवश्यकताएं हैं। यदि वैवाहिक सुख के लिए स्त्री–पुरूष के मध्य पारस्परिक सहमति और पसन्द होना आवश्यक है तो साथ ही उनके बीच असहमति के पश्चात् विवाह–विच्छेद करने की स्वतन्त्रता का होना भी उनका अधिकार है। नातरा प्रथा इस अधिकार को कहीं चुनौती नहीं देती। लेकिन बच्चों को माता–पिता का जो प्रश्रय मिलना चाहिए वह मानव अधिकार के हस्तक्षेप को अवश्य आमंत्रित करता है। मानव अधिकार की कई धाराएं बच्चों की सुरक्षा की गारण्टी चाहती हैं। इन धाराओं का प्रमुख उद्देश्य यही है कि बच्चों को अपना लालन–पालन सही तरीके से किए जाने का पूर्ण अधिकार है। इस अधिकार की सुरक्षा की जानी चाहिए। बच्चों को उचित तथा सामाजिक परिस्थितियों के लिये यह अधिकार मिलना चाहिए जो अधिकांश स्थितियों में नातरा प्रथा पूरी नहीं करती।

यथार्थ में नातरा प्रथा में विश्वास विरोधाभास है। एक और स्त्री–पुरूष के सम्बन्धों का प्रश्न है तो दूसरी और बच्चों के अधिकारों के प्रश्न है। मानव अधिकार के हस्तक्षेप की व्याख्या इन्हीं संदर्भो में की जा सकती है।

प्रत्येक मनुष्य को अपने पसंद के जीवन–साथी के साथ जीवन निर्वाह का अधिकार है परन्तु उसके अधिकारों के साथ उसके कुछ कर्त्तव्य भी हैं। मनुष्य अपने अधिकारों को पाने के फेर में अपने कर्त्तव्यों को भूल जाता है। परिणामस्वरूप वह किसी न किसी मनुष्य के अधिकारों का हनन करता है। नातरा प्रथा ऐसी ही एक प्रथा है। नातरा प्रथा में जनजाति समाज कि लड़की किसी लड़के के साथ उसकी पत्नी बनने की नीयत से चली जाती है। यदि वह लड़की अविवाहीत है तो कोई बड़ी समस्या नहीं है परन्तु यदि वह लड़की विवाहीत है तो यह उसके पति के लिये एक बड़ी समस्या हो जाती है।

कईं बार विवाहित महिलाएं अपने पति के साथ–साथ अपने बच्चों को भी छोड़ ही जाती है। ऐसी परिस्थिति में बच्चों की देखभाल और उनका पालन–पोषण प्रभावीत होता है। पुरूष दूसरा विवाह तो कर लेता है, परन्तु यह जरूरी नहीं है कि वह महिला उन बच्चों को मां जैसा प्यार दे। महिलाएं कईं बार उन बच्चों से सौतेला व्यवहार भी करती हैं। पति के लिये भी अपनी पहली पत्नी को भूलकर नये सिरे से शुरूआत करना मुश्किल होता है। इस प्रकार नातरा प्रथा में एक पुरूष और उसके बच्चे दोंनो ही अपने सामान्य अधिकार को खो देते हैं। चयनित अनुसंधान क्षेत्र में भी ऐसे ही कुछ प्रसंग मिले जिनका वैयक्तिक अध्ययन पद्धति द्वारा अध्ययन किया गया। नातरा प्रथा से सम्बन्धित सभी वैयक्तिक अध्ययनों का वर्णन निम्न प्रकार से है–

केस 1								
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय		
अ	प्राथमिक		38 वर्ष	मजदूरी		7000 से 8000		
मूल निवास : देवल (डूंगरपुर)								

नातरा प्रथा से पीड़ित व्यक्ति 'अ' अपने परिवार के साथ डूंगरपुर के देवल गांव के मूल निवासी हैं तथा वे जन्म से यहीं रहते हैं। इनके दो बेटियां व एक छोटा बेटा है। उक्त व्यक्ति अपनी विधवा मां तथा एक अविवाहित बहन के साथ रहते हैं। व्यक्ति के बहन की उम्र 26 वर्ष है बहन ने 10वीं तक की पढ़ाई कर रखी है तथा अपने आस–पास के बच्चों को घर पर ही पढ़ाकर जेब खर्च निकालती है। इनकी मां की उम्र भी लगभग 55 साल है। उक्त व्यक्ति के तीनो बच्चे नाबालिक है। बड़ी बेटी 8 साल की है छोटी बेटी 5 साल की तथा एक बेटा जो महज़ 3 साल का है। उक्त व्यक्ति के तीनों बच्चे पास की ही एक सरकारी विद्यालय में अध्ययन करते हैं। उक्त व्यक्ति ने 5वीं तक की पढ़ाई कर रखी है तथा वह मजदूरी का कार्य करते हैं। शादी के सीजन में मकानों के रंग–रोगन का कार्य करते हैं। इस प्रकार इस परिवार की मासिक आय 7 से 8 हजार तक है जिससे ये अपना जीवन निर्वाह करते हैं।

उक्त व्यक्ति अपने परिवार की कमजोर आर्थिक स्थिति के साथ ही एक अत्यन्त दुःखदायी कुप्रथा से भी पीड़ित हैं वह है नातरा प्रथा। व्यक्ति 'अ' की सबसे पहली शादी 25 साल की उम्र में हुई थी। चूंकि उक्त व्यक्ति के पिता की मृत्यु हो चुकी थी तथा उनका कोई सहयोगी ना होने के कारण विवाह देरी से हुआ था। विवाह के कुछ समय पश्चात् उनके एक बेटी हुई जब बेटी की उम्र 3 साल हुई उनकी पत्नी किसी के साथ नातरे चली गई उसके पश्चात् उसके तीन साल की बेटी की परवरीश उक्त व्यक्ति की मां व बहन ने की। उसके बाद में उक्त व्यक्ति पुनः नातरे से एक और महिला को पत्नी बनाकर लाये जिसके एक बेटी व एक बेटा हुआ। परन्तु 3 साल बाद वह भी नातरे चली गई। और उसके

बाद से उक्त व्यक्ति लगातार पांच बार नातरा करके औरत ला चुके हैं परन्तु हर बार 6–7 महीने में वो औरत किसी और के साथ नातरे चली जाती हैं। इस कारण उक्त व्यक्ति का परिवार तथा विशेषकर बच्चे बहुत परेशान रहते हैं। बच्चे अपनी मां के प्यार से वंचित अपनी दादी व बुआ के पास रहकर अपना जीवन गुजार रहे हैं। यद्यपि उन्हें उनका सहयोग व प्यार मिलता है पर मां तो मां होती है उसकी कमी कोई पूरी नहीं कर सकता।

इस नातरा प्रथा के कारण व्यक्तिस्वयं भी मानसिक रूप से बहुत परेशान रहते हैं। काम में उनका मन नहीं लगता। फिर भी उनका कहना है कि वे गुजर–बसर कर रहे हैं। उनसे इस संबंध में बात की गई कि आखिरकार बार–बार ऐसा होने का क्या कारण है तो उनका कहना था कि वो इस बारे मे कुछ नहीं जानते वो तो बड़े प्यार से पत्नी बनाकर लाते हैं उसकी देखभाल करते हैं परन्तु उन्हें क्या तकलीफ होती है इस संबंध में वो कुछ नहीं कह सकते। उक्त व्यक्ति कहते हैं कि वो तो सवेरे घर से काम के लिये निकलते हैं तो शाम को घर में आते हैं पूरे दिन घर में क्या होता है उनके जाने के बाद क्या चलता है इस बारें में वह कुछ नहीं जानते। उक्त व्यक्ति का यह भी मानना है कि सारे फसाद की जड़ मोबाईल है इस मोबाईल ने औरतों को बिगाड़ रखा है और इसी के कारण उनका घर बार–बार बसते –बसते उजड़ जाता है। ये कहते हैं कि अब तो मेरी बहन के विवाह का समय है वो कब तक घर मे ऐसे पत्नियां लाते रहेंगे। चिन्ता है तो सिर्फ बच्चों की उन्हीं के लिये बार–बार कोशिश करते हैं।

उक्त व्यक्ति की पत्नीयों के बार–बार चले जाने के पीछे क्या कारण है इस संबंध में उक्त व्यक्ति के मित्र से भी बात की गई तो उनका कहना था कि इन औरतों के बारें में क्या कहें वो तो खुद उस नातरा प्रथा से दुःखी वह स्वयं भी शादी के बाद दो बार पत्नी बनाकर औरतें ला चुके हैं परन्तु दोनों नातरे चली गई उनके तो कोई बच्चा भी नहीं है।

गांव वालो से भी इस संबंध में पूछा गया तो एक कारण सामने आया कि उक्त व्यक्ति नशा करके अपनी पहली पत्नी को पीटते थे और इसी से तंग आकर वो चली गई, दूसरी वाली को किसी और व्यक्ति से प्रेम हो गया तो वो भी चली गई और बाद की तीनों को केाई तकलीफ नही थी परन्तु उन्हें सौतन के बच्चों की देखरेख करना पसंद नही थी वो सब इसलिये चली गई।

उक्त व्यक्ति के घर वालों से भी इस संबंध में पूछा गया तो उनका भी यहीं मानना है कि वो मानते हैं कि पहली पत्नी के साथ उक्त व्यक्ति मारपीट करते थे इसी कारण वो छोड़कर चली गई परन्तु बाद वाली क्यों चली गई यह पता नहीं। जबकि वे स्त्रियां बच्चों को बार–बार डराने–धमकाने का काम भी करती थीं कभी–कभी मारती भी थीं तब भी वह उसे समझाते थे कि ये बच्चे हैं बच्चों से गलती होती रहती है। इस सम्बन्ध में उन्होंने कभी उक्त व्यक्ति से शिकायत भी नहीं की।

उक्त व्यक्ति से यह भी पूछा गया कि जो आपके साथ हो रहा है वो तो गलत है क्या आपने कभी इसकी शिकायत पुलिस में नहीं की तो इस संबंध मे उनका कहना था कि नहीं, ऐसा तो वो कर ही नहीं सकते। आजकल जमाना खराब है पुलिस भी महिलाओं का पक्ष लेती नहीं है उनका नहीं। कहीं गलती से किसी महिला ने पुलिस के सामने उल्टा–सीधा बयान दे दिया तो मुश्किल हो जाएगी। ऐसा गलती वो नहीं कर सकते। उक्त व्यक्ति के अनुसार उनके साथ जो हो रहा है वो शायद उनके कर्मों का फल है।

इस प्रकार उक्त प्रकरण से स्पष्ट होता है कि यह परिवार इस कुप्रथा के कारण खासा प्रभावित हो रहा है। उक्त व्यक्ति मानसिक रूप से प्रताड़ित हो रहे हैं। उनकी कुछ आवश्यकताएं पूरी नहीं हो रही हैं और इसी कारण वो घर में दुःखी और चुप–चुप से रहते हैं। किसी से ज्यादा बात नहीं करते अपने आप से नाराज रहने लगे हैं। कभी–कभी तो उनका गुस्सा बच्चों पर भी निकल जाता है वो उन पर चिल्लाते और मारने–पिटने लग जाते हैं।

बच्चों का भविष्य संकट में नजर आ रहा है उनका ध्यान रखने वाला कोई नहीं है। जब तक बच्चों की बुआ है तब तक तो ठीक है पर उनके विवाह के बाद बच्चों का क्या होगा ? उनकी सार–सम्भाल वाला कौन है। उक्त व्यक्ति की मां भी उम्रदराज़ हैं, बीमार भी रहती हैं, वो स्वयं का ध्यान नहीं रख पाती बच्चों का क्या रखेंगी। यदि परिवारों को बिखरने से बचाना है तो जनजाति समाज के लिये इस सम्बन्ध में विचार करना होगा और इस समस्या का हल निकालना होगा।

केस 2							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
ब	9वीं		30 वर्ष	मजदूरी		5000 से 6000	
मूल निवास : धराजा (प.स. खेरवाड़ा जिला उदयपुर)							

नातरा प्रथा से पीड़ित व्यक्ति 'ब' उदयपुर जिले की खेरवाड़ा पंचायत समिति के धराजा गांव के मूल निवासी हैं। इनकी उम्र 30 वर्ष है तथा ये 9वी कक्षा पास हैं। यह गांव गुजरात सीमा से सटा हुआ है तथा यहां कपास के खेतों में काम अधिक है। पीड़ित व्यक्ति 'ब'अपने परिवार के साथ यहीं काम करते हैं। इनके परिवार में इनकी पत्नी उम्र 24 वर्ष तथा एक बेटा 3 वर्ष का साथ रहते हैं। पति–पत्नी साथ में खेतों में जाते हैं तथा बेटा भी इनके साथ ही रहता है, जो अन्य मजदूरों के छोटे बच्चों के साथ वहीं खेलता है। इस परिवार की मासिक आय 5–6 हजार है।

पीड़ित व्यक्ति 'ब' अपना जीवन खुशी से बीता रहे थे कि तभी इनकी पत्नी इनके ही साथ काम करने वाले एक गुजराती मजदूर के साथ नातरे चली गई।

इन पर दुःखों का पहाड़ टूट पड़ा जब इनकी पत्नी ने इन्हे बीच राह में छोड़ दिया। इनका बेटा बहुत छोटा है जो हर रोज अपनी मां के साथ खेलता, खाता, सोता था पर अब अपनी मां को न देखकर थोड़ी–थोड़ी देर में बिलख–बिलख कर रो पड़ता है।

पीड़ित व्यक्ति से जब इस संबंध में बात की गई तो उन्होंने बताया कि वे बहुत खुश थे कोई तकलीफ नहीं थी। अगले ही साल वे उनके बेटे को एक अच्छे विद्यालय में प्रवेश दिलवाने वाले थे। इनकी मां की मृत्यु हो चुकी है तथा पिताजी भी उसके थोड़े ही समय बाद गुजर गए। उनका एक और भाई और बहन है और वो अपने परिवार में खुश हैं। पीड़ित व्यक्ति अपने छोटे से परिवार में रहते थे। वे कहते हैं कि वे अपनी पत्नी से बहुत प्यार करते थे और उनकी पत्नी उनसे बहुत खुश थी पता नहीं उनके मन में क्या आया और वो इतने छोटे बच्चे को छोड़कर चली गई।

इस संबंध में इस गांव के लोगों से बात की गई तो पता चला कि यह इस गांव की रोज़ की समस्या है। यह गांव गुजरात सीमा से सटा हुआ है इस कारण यहां गुजरात के मजदूर भी काम के लिये आते हैं जिनमें से कई मजदूर अच्छे पैसे वाले होते हैं। वो यहां काम करने वाली महिलाओं व लड़कियों को अधिक पैसों का लालच बताते हैं और उन्हें यहां से भगा ले जाते हैं। कई महिलाएं ऐसी हैं जो बच्चों को अपने साथ ले जाती हैं और कई छोड़ जाती हैं। अगर लड़का है तो थोड़ा बड़ा होते ही उसे भी मजदूरी पर लगा दिया जाता है तथा लड़की है तो 17–18 तक उसकी शादी करवा दी जाती है।

इस संबंध में उनके मित्रों व रिश्तेदारों से भी बात की गई तो उनका कहना था कि वो औरत थी ही ऐसी उन्होंने तो पीड़ित व्यक्ति को समझाया भी था कि इससे विवाह ना करे ये तो विवाह के पहले भी भाग गयी थी। उसके घर वालों ने उसे ढूंढकर आनन–फानन में उसका विवाह करवाया था। जो महिला अपने जन्म देने वालों की ना हो सकी वो अपने पति व बच्चे की क्या होगी।

स्पष्ट है कि उक्त प्रकरण में कमज़ोर आर्थिक स्थिति के कारण ही महिला नातरे चली गई। यद्यपि उनके परिवार में सदस्यों की संख्या काफी कम है, परन्तु चूंकि मनुष्य की आवश्यकताएं हमेशा बढ़ती रहती है ऐसे में यदि कोई उन्हें पूरा करने का आश्वासन देता है तो इन्सान भटक जाता है और गलत राह चुन लेता है।

इस प्रकरण में भी यहीं हुआ वह महिला अधिक पैसे वाले मजदूर के साथ चली गई। अपनी भौतिक सुख–सुविधाओं की लालच में उसने अपने पति व बच्चे को छोड़ दिया।

केस 3							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
स	अशिक्षित		28 वर्ष	ड्राइवर		दस हजार	
मूल निवास : गांगड़तलाई (बांसवाड़ा)							

इस प्रकरण में पीड़ित व्यक्ति 'स' इस गांव के मूल निवासी हैं। इनकी आयु 28 वर्ष हैं तथा यह निःशक्त हैं अर्थात गूंगें और बहरे हैं। ये अनपढ़ हैं। इनके पांच भाई व दो बहनें है। सभी का परिवार बस चुका है। पीड़ित व्यक्ति ड्राईवर हैं इनकी आर्थिक स्थिति अच्छी है। मासिक वेतन के साथ–साथ इनकी ऊपर की कमाई भी है अतः ये आर्थिक रूप से मजबूत है। इनकी दो शादीयां हो चुकी हैं तथा इनके 3 बच्चे हैं, एक बेटा 3 साल का, एक बेटी 2 साल की तथा छोटी बेटी डेढ़ साल की ये अपने बच्चों के साथ अकेले रहते हैं।

पीड़ित व्यक्ति जन्म से ही बोलने–सुनने में अक्षम हैं। फिर भी घर पर न बैठकर अपने परिवार का पालन स्वयं करते हैं। जब इन्होंने पहली शादी की इन्हें एक बेटा हुआ और दूसरी बेटी। परन्तु बेटी के जन्म के समय इनकी पत्नी का देहान्त हो गया। बच्चों की देखभाल के लिये इन्होंने दूसरी शादी की परन्तु दूसरी पत्नी एक बेटी को साल भर का छोड़कर नातरे चली गई। अब पीड़ित व्यक्ति के पास स्वयं की देखरेख के साथ तीन बच्चों की जिम्मेदारी है। पीड़ित व्यक्ति निःशक्त होने के कारण पहले ही परेशान रहते थे और अब पत्नी के चले जाने से तीन बच्चों की जिम्मेदारी और बढ़ गई। पीड़ित व्यक्ति बच्चों के कारण अपनी नौकरी पर भी नहीं जा पाते और यदि जाते हैं तो बच्चों को अपने सबसे छोटे भाई के वहां रह रहे अपने माता–पिता के पास छोड़ के जाते हैं। ऐसे में बच्चों की परवरिश बहुत प्रभावित हो रही है।

पीड़ित व्यक्ति के संबंध में उनके पड़ौसियों से बात की गई तो उन्होंने बताया कि ये व्यक्ति तो बचपन से ही दुःखी और प्रताड़ित हैं। बचपन में इनके भाई–बहन इनके गूंगे–बहरें होने का मजाक उड़ाते थे। इसी कारण ये पढ़ाई भी नही कर सके। बड़े होने पर इन्हें एक अच्छी मासिक आय वाली नौकरी मिल गई इनकी शादी भी हो गई। परन्तु इनकी शादी के बाद जब ये नौकरी पर जाते तो उनके माता–पिता इनकी पत्नी को परेशान करते थे। फिर भी इनकी पत्नी बिना किसी शिकायत के रह रही थी।

जब इनकी पत्नी के दूसरे बच्चे के जन्म का समय आया इनके परिवार वालों ने उनका प्रसव चिकित्सालय में न करवाकर घर में कराया परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हो गयी। बच्चे छोटे थे उनकी देखभाल के लिये पीड़ित व्यक्ति को दूसरी शादी करनी पड़ी और वे अलग भी रहने लगे थे परन्तु केवल पीड़ित व्यक्ति

के गूंगे–बहरें होने के कारण उनकी दूसरी पत्नी एक बच्चे को रखकर नातरे चली गयी। अब ये अकेले हैं और अपने तीन बच्चों का पालन–पोषण कर रहे हैं।

पीड़ित व्यक्ति से भी बात करने की कोशिश की गई परन्तु वे बात को सुन और समझ नहीं पाते अतः उनके विचारों को सम्मिलित नहीं किया जा सका।उक्त व्यक्ति के परिवार वालों से भी बात की गई उनका मानना हैं कि इनके साथ जो हो रहा है इनकी किस्मत है। वो तो जितना कर सकते हैं उतना कर रहे हैं उनके अनुसार तो चिन्ता की कोई बात नहीं है जैसे पहली पत्नी मर गई और दूसरी आ गई वैसे ही दूसरी चली गयी तो तीसरी ले आयेंगे।

उक्त प्रकरण में स्पष्ट होता है कि इसमें वह व्यक्ति पीड़ित है जो अपनी पीड़ा को बयां भी नहीं कर सकता। जो व्यक्ति शारीरिक रूप से असमर्थ है क्या वो सामान्य जीवन जीने का अधिकारी नहीं है ? पीड़ित व्यक्ति अपने बच्चों को सामान्य जीवन देने की कोशिश कर रहे हैं। उनकी सभी जरूरतों को पूरा कर रहे हैं। वे सोचते हैं कि जिन असुविधाओं में वे बड़े हुए वो सारी असुविधाऐं उनके बच्चों को न हो इसी कारण शारीरिक कमजोरी के बाद भी वो ड्राईवर की नौकरी करते हैं जबकि इस नौकरी में सुनने–देखने की जरूरत सबसे ज्यादा होती है। उसके बाद भी वे इतनी बड़ी जोखिम उठाते हैं।

इसके बाद भी परिवार वालों का साथ नहीं है। किसी को इनकी परवाह नहीं है। इनके 7 भाई–बहनों में से कोई इनके बारे में बात तक नहीं करना चाहता।

घरेलू हिंसा : वैयक्तिक अध्ययन

आज का युग 21वीं सदी का युग कहा जाता है जहां स्त्री–पुरूष के बीच कोई भेदभाव स्वीकार नहीं किया जाता। इस आधुनिक युग में पुरूषों के साथ महिलाए भी कई ऊंचे–ऊंचें पदों पर आसीन हैं। चाहे वह उद्योग जगत हो या सरकारी कार्यालय, शिक्षा हो या खेलकूद, संगीत हो या साहित्य। प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं ने अपना वर्चस्व कायम रखा है। इस आधुनिक युग में जहां आज पूरा विश्व महिलाओं की इस काबिलीयत को सलाम करता है वहां आज भी भारत देश में महिलाओं की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है। यहां के नगरों में तथा सभ्य समाजों में तो महिलाओं की स्थिति ठीक है। प्रत्येक क्षेत्र व स्तर में महिलाओं की अपेक्षा पुरूषों को अधिक महत्व देना आम बात है। यद्यपी भारत में प्राचीन काल से ही महिलाओं को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता रहा है। समय–समय पर विभिन्न प्रावधानों व कानूनों के द्वारा महिलाओं की प्रस्थिति को उच्च करने का प्रयास आज तक भी जारी है। ऐसे में महिलाओं के अधिकारों का हनन कठिन हो जाता है। फिर भी हर रोज महिलाओं के प्रति हिंसा, अत्याचार, अपहरण, बलात्कार की खबरें सुनने व पढ़ने को मिलती है। ऐसे में मानव अधिकारों का हस्तक्षेप स्वाभाविक हो जाता है। अगर मानव अधिकार प्रत्येक वर्ग,

लिंग, जाति, धर्म, रंग व स्वरूप के मनुष्य के अधिकारों का संरक्षक है तो महिला के अधिकारों की रक्षा का कार्य क्षेत्र भी इसी के अन्तर्गत आता है।

प्रस्तुत प्रसंगों में भी महिलाओं के अधिकारों के हनन और उन पर हुए अत्याचारों को रोकने हेतु मानव अधिकारों का सहयोग अपेक्षित है। अनुसंधान के अन्तर्गत वैयक्तिक अध्ययन के विभिन्न प्रकरणों में महिलाओं के प्रति हिंसा तथा उन पर होने वाले अत्याचारों से सम्बन्धित घटनाओं को भी स्थान दिया गया है। महिलाओं के प्रति हिंसा से संबंधित तीनों जिलों के वैयक्तिक अध्ययन निम्न प्रकार से है –

केस 1							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
अ	मिडिल		20 वर्ष	मजदूरी		2000 रू	
मूल निवास : डूंगरपुर							

महिलाओं के प्रति पुरूषों की सोच की सूक्ष्मता का प्रमाण प्रस्तुत प्रकरण से लगाया जा सकता है। उक्त महिला 'अ' जो घरेलू हिंसा से पीड़ित हैं अपनी विधवा मां की एक मात्र पुत्री हैं। इनका एक भाई है जो विवाहित है तथा उसके भी दो बच्चे हैं। उक्त महिला के भाई मजदूरी का काम करते हैं तथा इनकी मां लोगों के घरों में बर्तन, कपड़े व पोछा लगाने का काम करती हैं। ये पहले अपने भाई–भाभी के साथ रहती थी परन्तु विवाह के पश्चात् अपने ससुराल से आने के बाद अपनी मां के साथ रहती हैं। चूंकि इनकी मां घरों का काम करती है उसे सवेरे जल्दी आना होता है अतः वह अपने बेटा–बहू के साथ न रहकर अपने काम के स्थान वाली कॉलोनीयों में एक छोटा सा कमरा लेकर अपनी जेठानी के साथ रहती है। जेठानी भी यही काम करती है। इसीलिये दोनों मिल–जुलकर किराया भरती हैं और उसी में रहती हैं। इनकी मासिक आय 2000/– रू. है।

महिला 'अ' बचपन से ही दुःखी हैं। पहले वह अपने भाई–भाभी के साथ रहती थी तब उनकी भाभी ने उनकी पढ़ाई–लिखाई बंद करवाकर उन्हे घर के कामों में लगा दिया। उन्हें रोज मारती–पीटती थी। उनका मन पढ़ाई से उठ गया। उसके बाद 20 वर्ष की उम्र में उनकी शादी करवा दी उनकी मां भी कुछ बोल न सकी क्योंकि तब ये महिला अपने भाई–भाभी के साथ रहती थीं। मां ने सोचा की कोई बात नहीं अगर विवाह हो रहा है तो कम से कम उनकी बेटी रोज–रोज की मारपीट से तो बच जायेगी। यही सोचकर उन्होंने अपनी बेटी की शादी करवाई, उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। जिन घरों मे काम करती थी वहां से उन्होंने कपड़े व अन्य वस्तुएं मांग–मांग कर एकत्रित की और अपनी बेटी की शादी करवाई पर उन्हें क्या मालूम था कि उनकी बेटी की किस्मत में इतनी जल्दी सुख नहीं है।

जिस व्यक्ति से इन महिला की शादी करवाइ गई वह शराबी निकला। वह घरों के निर्माण मे मजदूरी का कार्य करता है। जब भी शाम को आता शराब के नशें में ही आता और महिला 'अ'को खूब पीटता था। विवाह के 2 महीने में ही वह महिला पुनः अपने घर आ गई। उनकी मां ने होशियारी दिखाते हुए पुलिस में शिकायत कर दी। शिकायत के बाद पुलिस द्वारा कार्यवाही की गई। इस संबंध में वो कहती हैं कि आज तक तो वो यहीं सोचती थी कि पुलिस सिर्फ पैसे वाले और बड़े लोगों की है परन्तु यह जानके और देख के अत्यन्त खुशी हुई कि हमारी व्यथा सुनने के लिये कोई है। हम भी अपनी शिकायतें लेकर जा सकते हैं।

पुलिस से शिकायत करने के बाद पीड़ित महिला के पति को कोतवाली में बुलाया गया और उससे सख्ती से बात की गई। पीड़ित महिला के पति को दो बार थाने में बुलाया भी गया और उसे डरा–धमकाकर अगली बार इस तरह की गलती ना करने की हिदायत भी दी गई। उस समय उक्त महिला के पति ने सारी बातें स्वीकार की तथा उसे खुशी–खुशी अपने घर ले जाने हेतु समझाईश की। बड़े–बुजुर्गों तथा पुलिस वालों के समझाने के बाद उक्त महिला अपने पति के साथ पुनः ससुराल में रहने चली गई।

बात यहीं खत्म नहीं हुई यदि इसी तरह से मामले सुलझते तो परेशानी नहीं थी। यह इतना आसान नहीं है। पुलिस का डर उस महिला के पति को ज्यादा समय तक रोक नही पाया और फिर से उस महिला के पति ने उससे मारपीट शुरू कर दी है। उक्त महिला अपने पीहर आ गई पर इसके बाद उसके भाई–भाभी ने भी उसे वहां स्वीकार नहीं किया। भाई–भाभी द्वारा उस महिला पर अत्याचार या हिंसा ना हो ये सोचकर उक्त महिला की मां उन्हें अपने साथ अपने कमरे पर ले आई। अब ये पीड़ित महिला अपनी मां के साथ रहती हैं। अपनी मां के साथ ही दूसरों घर में कपड़े, बर्तन का काम करने लगती हैं। कभी–कभी तो अपनी मां की जगह वह स्वयं पूरे घरों का काम अकेली करती हैं। इतनी कम उम्र में जीवन के इतने दुःखद मोड़ों से गुजरने के बाद भी उन्हें किस्मत से कोई शिकायत नहीं है ओर उन्हें देखकर भी नहीं लगता कि उन्होंने इतने दुःख झेले हैं। अपने चेहरे पर एक हल्की सी मुस्कान लिये हमेशा अपनी मां के साथ उनके कामों में अपना हाथ बंटाती हुई अपना जीवन जी रही है।

यह तो वो प्रकरण है जो अनुसंधान के दौरान प्रकाश में आया अन्यथा ऐसी कई महिलाएं है जो हर रोज ऐसे अत्याचारों को सहन करती है। उक्त प्रकरण में जिस महिला के बारें में बताया गया है वो हिम्मत करके पुलिस के पास गयी। परन्तु उसे भी पूरा इन्साफ नहीं मिल पाया। यद्यपि अगर वो पुनः पुलिस के पास जाती तो शायद उसकी परेशानी का कोई हल निकल पाता पर इस संबंध में उनका मानना था कि उनका पति वो बदल नही सकता वो ऐसा ही रहेगा। पुलिस वाले ज्यादा से ज्यादा उसे कोठरी में बंद कर देते पर इससे भी उसमें कोई फर्क नही पड़ता, वह वापस वैसा ही हो जाता वो कब तक सहतीं। इसलिये वे चली

आई, उन्होंने अभी इस बारे में कुछ नही सोचा है कि अब आगे क्या करना है । अभी जो चल रहा है उनके लिए वही ठीक है आगे का आगे देखा जाएगा।

क्या वास्तव में सब ठीक है ? क्या यह महिला अपना सारा जीवन ऐसे ही निकालेंगी ? इसका बहुत गहरा असर पड़ेगा। आज जब ये घर से बाहर निकलती हैं तो सुरक्षित महसूस नहीं करतीं क्योंकि ये अकेली हैं, मजबूर हैं, शोषित हैं। काम से लौटते वक्त यदि देर हो जाती है तो इनकी मां परेशान हो जाती हैं। पुरूष प्रधान समाज में एक अकेली महिला का जीवन गुजारना आसान नहीं है। मानवाधिकार के घोषणा की सफलता तभी कही जा सकती है जब पुरूषों के साथ–साथ स्त्रियों को भी पूरे सम्मान के साथ जीने का उनका अधिकार मिले।

केस 2							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
ब	प्राथमिक		51 वर्ष	खेती		10,000 रू.	
मूल निवास : नयागांव (उदयपुर)							

महिला हिंसा से पीड़ित ये महिला नयागांव (उदयपुर) में कई सालों से रह रही है। इनकी उम्र 51 वर्ष है तथा ये 15 वर्ष की उम्र में पास के ही गांव टोकर से विवाह करके इस गांव में आयी थी। इनके परिवार में इनके पति, सास, व तीन बच्चे हैं। पति की उम्र 58 वर्ष है तथा वे किराणा की दुकान करते हैं, इनके तीन बच्चों में सबसे बड़ा बेटा बी.एड. में अध्ययनरत है तथा इसका विवाह हो चुका है। दूसरे नंबर पर इनकी बेटी है जो कक्षा 10 में अध्ययनरत है तथा सबसे छोटा बेटा पढ़ाई में रूचि नहीं होने की वज़ह से पिताजी के साथ व्यवसाय में हाथ बंटाता है। इनकी विधवा सास की उम्र 70 वर्ष है और ये घर पर ही रहती हैं। पीड़ित महिला स्वयं अपने खेतों की देखभाल करती है। इस परिवार की मासिक आय 8 हजार से 10 हजार है।

पीड़ित महिला कम पढ़ी लिखी थीं और इसी कारण वे घर के काम–काज के साथ खेती की रखवाली का काम करती थीं। इनके पति दुकान का सामान लाने के लिये उदयपुर आते–जाते रहते थे। वहीं उनकी मुलाकात एक महिला से हुई और उन दोंनो के बीच संबंध प्रगाढ़ होने लगे। धीरे–धीरे महिला 'ब'के प्रति उनके पति का व्यवहार बदलने लगा। उनके पति महिला के साथ मारपीट करने लगे और बार–बार शहर जाने लगे। कई बार दो–दो दिन तक पीड़िता के पति घर पर नहीं आते। धीरे–धीरे उनका यह रहस्य सबके सामने उजागर हो गया। परन्तु इस बात का उनके पति पर कोई असर नहीं हुआ।

आज पीड़िता के पति उस दूसरी महिला के साथ कई–कई महिनों तक शहर में ही रहते हैं। उस महिला के दो बच्चे भी हैं। पीड़ित महिला अपने घर में एक नौकर का जीवन जी रही है। ना तो उसे पति का प्यार मिला रहा है न ही बच्चे उनका मान–सम्मान करते है। चूंकि पीड़िता के पति उन्हें सम्मान नहीं देते इसलिये परिवार का केाई सदस्य उनका मान सम्मान नहीं करता। उनकी सास भी उन्हें कभी–कभी मारती हैं।

पीड़िता से उनके बारें मे पूछा गया तो उन्होंने सिर्फ इतना कहा कि अब तो उन्हें सिर्फ मौत का इन्तजार है, जीने की आस ही नहीं रही है। किसके लिये जीये, क्यों जीये और कौन है उनका। आज उन्हें उनका जीवन बोझ लगता है। उन्हें यह भी पूछा गया कि उनके पति का दूसरी औरत रखने का क्या कारण था तो उन्होंने कहा कि इस बारें में उन्हें पता नही नहीं चला कि कब उनके पति के जीवन में दूसरी औरत और उनके जीवन में सौतन आ गई। उनके अनुसार शुरू–शुरू में तो उनके पति उन्हें बहुत प्यार करते थे खेंतो के कामों में उनका हाथ बंटाते थे पर जब से दुकान का सामान लेने उदयपुर जाने लगे उनका रवैया बदलता गया और आज ये समय आ गया है कि वे अपने पति को कई महीनों तक नहीं देख पातीं।

परिवार के सदस्यों को भी उनकी कोई चिन्ता नहीं है। बड़े बेटे का घर बस चुका है छोटा बेटा दुकान संभालता है और वो छोटा है इसलिये ज्यादा कुछ समझता नहीं है। बेटी जरूर कभी–कभी तरस खाकर कुछ खाने–पीने की चीजें चुपके–चुपके दे देती है।

परिवार के सदस्यों से भी पीड़िता के बारें में बात करने की कोशिश की गई परन्तु पीड़िता के लिये किसी के पास समय नहीं है। सभी अपने–अपने कामों में व्यस्त रहते हैं। सिर्फ उनकी बेटी से बात हुई जिसने पीड़िता के संबंध में कहा कि उनकी मां बहुत भोली है केाई दूसरी होती तो कब की सब कुछ छोड़–छाड़ कर चली गयी होती। उनकी बेटी ने कहा कि वे तो अपने पिता से बहुत कम बात करती हैं वैसे भी उनके पिता कभी–कभी शराब पीकर घर आते हैं इसलिये वो उनसे दूर ही रहती हैं। उनकी बेटी का कहना है कि वो जी–तोड़ मेहनत करके पढ़ाई कर रही है। जिस दिन वह अपने पैरो पर खड़ी हो गई अपनी मां को लेकर इस घर से कहीं दूर चली जाएगी।

गांव वालो से भी पीड़िता के संबंध में पूछा गया तो उन्होंने कहा कि पीड़िता का पति ऐसा नही था वह तो बहुत सीधा था जरूर उस दूसरी महिला ने किसी जादू–टोने का सहारा लेकर इसे अपने वश में किया है। वरना इस व्यक्ति ने तो गांव की किसी महिला को नजर उठाकर नहीं देखा। पीड़ित महिला के संबंध में उनका कहना है कि उसे देखकर बहुत तरस आता है पर वो क्या कर सकते हैं, ये उनके घर का मामला है। साथ ही वो स्वयं निम्न आय वाले हैं। उस महिला की क्या मदद कर सकते हैं। हां कभी–कभी फटा पुराना कपड़ा जरूर दे

देते हैं वह भी चुपके–चुपके देना पड़ता है क्योंकि महिला 'ब' के परिवार के लोग महिला को मारते हैं कि वो उन्हें बदनाम करती है। इसलिये वे कम से कम सहायता ही कर पाते हैं।

उपरोक्त प्रकरण से स्पष्ट होता है कि उक्त महिला दुःख झेलते हुए भी अपने पत्नी धर्म को निभा रही है। भले ही उसे उसके अपने अधिकार ना मिल रहे हों, वो स्वयं अत्याचारों का शिकार है। फिर भी वहां रह रही है और उस घर के काम कर रही है। उसके अपने बेटे जिन्हें उन्होंने जन्म दिया वो भी उनके नहीं हैं।

एक पत्नी होने के बाद भी वह पति के जीते जी पति के प्यार और सहारे से वंचित है। इनके अधिकारों और अत्याचारों के खिलाफ किससे शिकायत कि जाय ? ये अपने अधिकार को नहीं जानती, अपने हक के लिये लड़ना नहीं जानतीं। यदि ये सब जानती तो शायद आज इनका जीवन इतना दुःख भरा ना होता।

केस 3							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
स	9वीं		38 वर्ष	अलमारी बनाने का कारखाना		2000 से 5000	
मूल निवास : बांसवाड़ा							

पीड़ित महिला 'स'विवाह के बाद से ही बांसवाड़ा की निवासी है। इनकी आयु 38 वर्ष है। इनके परिवार में इनके सास, श्वसुर व इनके पति है। इनका एक बेटा है जिसकी उम्र–17 वर्ष है। ये महिला 9वीं पास है। इनेक पति का एक छोटा सा कारखाना है जिसमें अलमारियां बनाई जाती हैं। इस परिवार की मासिक आय 2000 से 5000 है।

पीड़ित महिला का विवाह 20 वर्ष पहले हुआ था। इनके ससुराल वालों ने महिला 'स'के परिवार से यह कहकर विवाह करवाया था कि उनका बेटा दवाईयों का एजेण्ट है और स्नातक तक की शिक्षा ग्रहण कर रखी है। विवाह के पश्चात् उनका सारा झूठ साफ हो गया। इनका पति कोई नौकरी नहीं करता था और 8वीं फेल था। पीड़ित महिला के श्वसुर की पेंशन से घर चलता था जो बहुत कम थी इनकी सास बीमार थी जिस वजह से वे सोई ही रहती थीं। शादी के साल भर में ही महिला ने एक बेटे को जन्म दिया।

छः महीने बाद बच्चा बीमार हुआ तो इनके श्वसुर ने दवाई कराने से इन्कार कर दिया उन्होंने कहा कि हमारे बच्चे तो ऐसे ही ठीक हो जाते है दवाई

कराने की जरूरत नहीं पड़ती। जब बच्चे की तबियत ज्यादा बिगड़ गई तो महिला अपने बच्चे को लेकर मायके चली आई। वहां इनके पिताजी ने बच्चे की दवाई कराई और फिर कुछ दिन बाद महिला 'स' की मां उन्हें और उनके बच्चें को ससुराल छोड़ने आई। वहां जाते ही पीड़ित महिला के पति ने दोनों मां–बेटी के साथ गाली–गलौज और मारपीट करना शुरू कर दिया। महिला की मां उन्हें पुनः अपने साथ अपने घर ले आई।

पीड़ित महिला अपने मायके में ही रहने लगी, बेटा बड़ा हुआ तो उसकी जरूरतों को देखकर महिला 'स' ने एक मंदबुद्धि बालकों के स्कूल में नौकरी कर ली और अपने बच्चें का पालन करने लगी। महिला 'स' के पिता की मृत्यु हो गयी और उधर इनके पति की भी मृत्यु हो गयी। इनके पति भांग का नशा करने लग गये थे उनका ईलाज न करवाने के कारण वे मृत्यु का शिकार हो गए।

पति और पिता की मृत्यु के बाद महिला 'स'और भी दुःखी हो गयी लगभग 10 वर्ष तक वह अपने पिता के घर मे रही। परन्तु पीड़िता के छोटे भाई की शादी के बाद उनकी भाभी ने उन्हें ताने मारना शुरू कर दिया। महिला रोज–रोज के तानों से तंग आकर दूसरी शादी का मन बनाने लगी। कुछ समय बाद उनके ही साथ स्कूल में काम करने वाली एक महिला ने उनके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा और एक व्यक्ति से मिलवाया उस व्यक्तिके पहले वाली पत्नी से दो लड़किया थी, व्यक्ति की पहली पत्नी मर चुकी थी और वह अपनी दो बेटीयों तथा मां के साथ रहता था। महिला 'स'ने सब कुछ देखभाल कर विवाह करना तय कर लिया।

उन्होंने अपने 10 वर्ष के बेटे से भी इस बारें में पूछा उसने भी हां कर दी। तत्पश्चात् महिला 'स' नातरे से दूसरे पति के घर चली गयी। कुछ समय तो सब कुछ अच्छा रहा परन्तु कुछ समय बाद उनके बेटे को वहां सौतेलापन प्रतीत होने लगा। दोनों बेटियां उसे परेशान करती थी जिस कारण महिला का बेटा परेशान रहने लगा। महिला का बेटा 10वीं कक्षा में पढ़ता था। वह तनाव में रहने के कारण पढ़ाई भी नहीं कर पाया और उसी साल वो फेल हो गया।

पीड़ित महिला के पति शराबी है जिसकी खबर उन्हें पहले नहीं थी। अब ये महिला घरेलू हिंसा का शिकार है, इनके पति इन पर अत्याचार करते रहते हैं कि उनके बेटे ने फेल होकर उनका पैसा बर्बाद कर दिया। उनका बेटा भी अब पढ़ाई छोड़कर गलत संगत में रहने लगा है।

पीड़ित महिला इस संबंध में बात की गयी तो महिला ने कहा कि उसका तो पूरा जीवन बर्बाद हो गया अब वो क्या करे और क्या न करें। इस घर में रहना मुश्किल हो गया है और पीहर में अब वो जा नहीं सकती। बेटा नाराज रहने लगा और अपना जीवन बर्बाद कर रहा है।

पीड़िता के रिश्तेदारों व मायके वालो से भी बात की गई तो उनका कहना है कि वो पीड़िता के पति को कई बार समझा चुके हैं पर उनमें कोई परिवर्तन नहीं आता। अब उनके जीवन में दुःख ही लिखा है तो क्या कर सकते हैं। उसने बिना पूछे इतना बड़ा फैंसला कर लिया उसने 10 साल निकाल लिये थे आगे भी दिन निकल जाते। नातरा करने की क्या जरूरत थी इनकी किस्मत मे पति का प्यार नहीं था। पीड़िता की मां का कहना है कि उनकी बेटी रोज अपनी भाभी से उलाहना सुनती थी भाई भी गालियां देता था। इसलिये मजबूरन उसका नातरा करवाना पड़ा। भाई से बात की गई तो वो कहते है कि वो जब भी पीड़िता के घर जाते है उनकी अच्छी आवभगत की जाती है और पीड़िता के पति भी उनसे अच्छा व्यवहार करते हैं। पति–पत्नी के बीच छोटा–मोटा झगड़ा तो चलता रहता है। इसमे इतना घबराने वाली कोई बात नहीं है।

उक्त प्रकरण मे पीड़ित महिला ने पहली व दूसरी दोनो ही विवाह अर्थात वैवाहिक जीवन में दुःख देखे हैं। यह अत्यन्त आश्चर्य का विषय है कि इस संबंध में इन लोगों की सोच यह है कि जिसकी किस्मत में पति का सुख नहीं होता वह कितने भी पति बदले सुखी नहीं हो सकती।

एक पीड़ित महिला को न्याय दिलाने कोई आगे नहीं आ रहा। इनसे इनका बेटा दूर होता जा रहा है, गलत संगती में रहने लगा है और उसकी उस हालत का जिम्मेदार भी वह अपनी मां को मानता है। जिसके कारण उनकी मां ने नातरा किया था। वो चाहती थी कि उनके बच्चे को कभी पिता के प्यार की कमी महसूस न हो। उसकी परवरिश और अच्छी तरह से हो। किन्तु ऐसा नहीं हुआ।

बाल शोषण : वैयक्तिक अध्ययन

किसी भी राष्ट्र की उन्नति उसकी आने वाली पीढ़ी पर निर्भर करती है। उनका आज राष्ट्र के कल को प्रदर्शित करता है। इस हेतु यह आवश्यक है कि नई पीढ़ी की वर्तमान स्थिति का विश्लेषण किया जाए और उनके विकास की सभी दशाओं को लागू किया जाये। यद्यपि हमारे देश के संविधान ने नई पीढ़ी अर्थात बच्चो हेतु कई योजनाऐं लागू की है। परन्तु वास्तविकता यह है कि दुनिया के करोड़ो बच्चों के पास कोई भविष्य नहीं है। जिन्हें आने वाली सदी में जवान होना है। इस तीसरी दुनिया में ऐसे लाखों बच्चे है जो पढ़ने–लिखने की उम्र में मेहनत मजदूरी में जुटें है। प्रत्येक बच्चें को निःशुल्क शिक्षा का अधिकार है तथा उनके शारीरिक व मानसिक विकास के लिये यह आवश्यक भी है। परन्तु बाल श्रम ने बच्चों के विकास को अवरूद्ध कर दिया है। खेलने–कूदने व पढ़ने की आयु में बच्चे विभिन्न कार्यो द्वारा पैसा कमाने की जुगत में अपने बचपन को खो रहे है। कुछ बच्चे मजबूरी में मजदूर बनते है तो कुछ को जबरन बना दिया जाता है। इस प्रकार बच्चों के अधिकारों का हनन यह प्रदर्शित करता है कि यदि इनके अधिकारों की रक्षा करनी है तो यहां मानवाधिकारों का हस्तक्षेप आवश्यक है। इसी संदर्भ में

प्रस्तुत प्रसंगों द्वारा मानव अधिकारों के हस्तक्षेप की आवश्यकता को देखा जा सकता है।

प्रस्तुत अनुसंधान मे वैयक्तिक अध्ययन के अन्तर्गत बच्चों के शोषण को भी सम्मिलित किया गया है। चयनित जिलों मे बच्चों के शोषण से संबंधित सभी वैयक्तिक अध्ययनों का विश्लेषण निम्न प्रकार से है –

केस 1							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
अ	मिडिल		12 वर्ष	मजदूरी		7000 से 8000	
मूल निवास : बिलड़ी (डूंगरपुर)							

पीड़ित बालक 'अ' डूंगरपुर जिले के बिलड़ी गांव का निवासी है। इसकी उम्र महज 12 वर्ष है। यह अपने पिता तथा सौतेली मां व भाई–बहनों के साथ रहता है। इसकी एक सगी बहन भी है जिसकी उम्र 18 वर्ष है तथा इसका विवाह हो चुका है। इस बालक के सौतेले भाई की उम्र 10 वर्ष तथा बहन की उम्र 6 साल है। यह बालक 8वीं पास है। इसके दोनो भाई–बहन क्रमशः छठीं तथा दूसरी कक्षा में अध्ययनरत है। जबकि बालक स्वयं मजदूरी का कार्य करता है इनके पिता नरेगा में मेट का कार्य करते है तथा मां गांव के ही आंगनवाड़ी केन्द्र मे साथीन के पद पर कार्यरत है। इस प्रकार इस परिवार की मासिक आय 7000–8000/–रू है जो इनके अनुसार पर्याप्त है।

बालक 'अ' जन्म से ही बाल अत्याचार से पीड़ित है। चूंकि इसकी मां की मृत्यु इसके जन्म लेते ही हुई इसीलिये इसे मनहूस माना जाता है। सौतेली मां ने भी आते ही अपना सौतेलापन दिखाना शुरू कर दिया। 8वीं तक तो जैसे–तैसे पढ़ाई कर ली परन्तु सौतेली मां के साथ–साथ पिता के प्रताड़ित करने वाले व्यवहार से परेशान होकर पढ़ाई छोड़ कर के मजदूरी करते हुए अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं करता है।

इस बालक पर अत्याचार तब बढ़े जब इसकी बड़ी बहन ने इस परिवार के सौतेले व्यवहार से तंग आकर प्रेम विवाह कर लिया। बड़ी बहन के प्रेम विवाह के कारण इसके परिवार का सारा गुस्सा इस बालक पर ही उतरा। वास्तव में तो इस परिवार द्वारा जो अत्याचार इस बालक पर होते है वह इसकी बड़ी बहन पर भी होते थे परन्तु अत्याचारों की संख्या बालक पर ज्यादा थी क्योंकि बालक का पिता उसे उसकी मां की मौत का कारण समझता है। इसकी बहन तो घर के काम करके बच जाती थी परन्तु पीड़ित बालक नहीं बच पाता।

परिवार के सदस्यों द्वारा इस बालक को बार–बार सौतेला होने का उलाहना मिलता, खाने पीने की विशेष वस्तुओं से से वंचित रखा जाता था। इसके सौतेले भाई–बहन इसे चिढ़ाने के उद्देश्य से दिखा–दिखाकर खाते थे। त्यौहारों और विवाहों के अवसरों पर भी इसके भाई–बहन के लिये वस्तुएं, कपड़े आदि आते थे परन्तु इसे फटे–पुरानों से ही सन्तोष करना पड़ता था।

यह बालक 16 साल का हो गया है परन्तु स्थिति वैसी ही है। आज भी यह बालक मां की ममता और पिता के प्यार के लिये तरसता है। हर रोज अपनी बहन के चले जाने का उलाहना उसे ही मिलता है। उसके पिता द्वारा हर रोज यह कहकर प्रताड़ित किया जाता है कि 'तुम्हारी बहन चली गई तो तुम भी चले जाओ।' बहन के चले जाने के कारण इस बालक को अपने नानाजी के घर में भी जगह नहीं दी गई है। अगर ये वहां जाता है तो वहां से भी इसे प्रताड़ित करके मामाओं द्वारा निकाल दिया जाता है। इस बालक को ढंग से भोजन भी नहीं दिया जाता। यह बालक घर मे पड़ा ठंडा और रूखा–सूखा भोजक करके सन्तोष कर लेता है। यद्यपि ये बालक मजदूरी करके जो कमाता है उससे थोड़ा बहुत अपने खाने–पीने पर खर्च कर लेता है। परन्तु ये नरेगा से जो कमाता है वह पैसा इसके पिता द्वारा ही रख लिया जाता क्योंकि इसके पिता स्वयं नरेगा में मेट के पद पर कार्य करते हैं।

इस बालक के परिवार व रिश्तेदारों से जब इस संबंध में बात की गई तो उन्होंने सामान्य व्यवहार करते हुए कहा कि वे सभी बच्चों से समान व्यवहार करते हैं। पिता कहते हैं कि सभी बच्चों से वे समान प्यार करते है, उन्हें केवल अपनी बड़ी बेटी से नफरत है क्योकि उसने उन्हें धोखा देकर दूसरे समाज मे शादी कर ली। मां कहती है कि वो तो अपने स्वयं के बच्चों से ज्यादा प्यार अपने पति के पहले वाले दो बच्चों से करती है। उनसेइस संबंध मे भी पूछा कि इतनी कम उम्र यह बालक मजूदरी क्यों करता है इसे अध्ययन हेतु प्रोत्साहित क्यों नही किया जाता तो इस बारें में इनका कहना है कि इसे ही पढ़ने में रूचि नहीं है। मजदूरी के काम पर भी यह स्वयं ही लगा है उन्होंने तो इसके लिए मना कहा था।

पीड़ित बालक के संबंध मे उसके पड़ौसियों व गांव वालों से भी बात की गई तो स्थिति स्पष्ट लगने लगी कि इस बालक को इसकी मां द्वारा बचपन से ही मारपीट करके प्रताड़ित किया जाता रहा है। कई–कई दिन तक भूखा भी रखा जाता था तो पड़ौसी उसे भोजन कराते थे इसकी सौतेली मां इससे घर के काम कराती यह बालक पढ़ने में समय नहीं दे पाता था और इसी कारण फेल हो गया। पड़ौसियों ने तो यह भी बताया कि अब तो ये बालक गलत संगत में पड़कर नशा भी करने लगा है। इतनी कम उम्र में नशा करना उसके स्वास्थ्य के लिये अच्छा नहीं है।

यह बालक स्वयं भी किस्मत को स्वीकार कर चुका है। अपनी बड़ी बहन से नफरत करने लगा है। उसका मानना है कि उसकी यह जिन्दगी उसकी बड़ी

बहन के कारण हुई है। यद्यपि अत्याचार तो पहले भी होते थे परन्तु उसके जाने के बाद यह बढ़ गये है। वह अकेला हो गया है। उसका सुख–दुख बांटने के लिये कोई नहीं है। पहले तो बहन थी तो थोड़ा सन्तोष था परन्तु अब तो कोई नहीं है। वह कहता है कि इस परिवार में उसका कोई सम्मान नहीं है हर रोज बेईज्जत होकर जीवन गुजार रहा है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि यह बालक मानसिक और शारीरिक रूप से प्रताड़ित है परन्तु इसका कसूर क्या है ? किसी का जन्म और मृत्यु भगवान के हाथ में है ? ऐसे में इसे इसकी मां की मौत का जिम्मेदार मानना कहां का इंसाफ है। घर–परिवार का वातावरण बच्चों के विकास को अत्यन्त प्रभावित करता है। ऐसे में इस बच्चें के परिवार द्वारा किये जाने वाले व्यवहार ने इसके विकास को अत्यन्त प्रभावित किया है। यह बालक इतनी कम उम्र में नशा करने लगा है जो इसके शारीरिक विकास को प्रभावित कर सकता है। यदि ध्यान नहीं रखा गया तो अपराध प्रवृति में संलग्न हो सकता है। ऐसे में इसके परिवार को यह समझना आवश्यक है कि यदि ये बालक गलत कार्यो में लिप्त हो गया तो उसे इस दलदल से निकालना मुश्किल हो जाएगा। अतः इस समय इसे संभालना अत्यन्त आवश्यक है।

संविधान संशोधन अधिनियम 2002 में शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकारों के रूप में स्थान दिया गया है। निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा 6 से 14 वर्ष के प्रत्येक बच्चे का मूल अधिकार है। ऐसे में बाल मजदूरी के प्रकरण यह सोचने को विवश करते हैं कि इस समस्या को ओर किस तरह हल किया जा सकता है अर्थात यदि सरकार द्वारा बनाया गया कानून भी जब इस समस्या को समाप्त नहीं कर पाया है तो ओर क्या उपाय है।

केस 2								
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय		
ब	प्राथमिक		12 वर्ष	गेराज मेकेनिक		1000 हजार		
मूल निवास : गऊपीपला (उदयपुर)								

बाल श्रम से पीड़ित बालक 'ब'गऊपीपला गांव उदयपुर का मूल निवासी है। इसकी आयु 12 वर्ष है तथा इसने 5वी पास कर रखी है। इसके पिता मुम्बई में व्यवसायरत हैं जिनकी उम्र 35 वर्ष है। इसकी माता गृहिणी है जिनकी उम्र 31 वर्ष है। इस बालक के एक बड़ी बहन 14 वर्ष तथा एक छोटा भाई 7 वर्ष का है। इनकी आर्थिक स्थिति काफी कमज़ोर है। इस परिवार की मासिक आय मात्र 1000 रूपया है।

यह बालक चौथी कक्षा में था जब इनके पिता काम के सिलसिले में मुम्बई गये उनके वहां जाने के बाद कुछ समय तो उन्हें वहां जमने में लगा। फिर जब वे धीरे–धीरे वहां जमें उन्होंने थोड़ा–थोड़ा पैसा घर पर भेजना शुरू किया पर अचानक ही उन्होंने पैसा भेजना बंद कर दिया और पता चला कि उनकी नौकरी चली गई है तथा दूसरी नौकरी मिलने में समय लगेगा।

इसी बीच पीड़ित बालक की मां को एक गंभीर बीमारी टी.बी. ने जकड़ लिया अब पैसे की तंगी और मां की बीमारी ने परिवार को मुश्किल में डाल दिया। पीड़ित बालक ने समय की मांग को समझते हुए 5वीं कक्षा पास करते ही एक गेराज में नौकरी कर ली और महज 11 साल की उम्र में ही यह बालक बाल श्रम की गिरफ्त में आ गया। पीड़ित बालक अपने पढ़ने की उम्र में ही हाथ में औजार लिये वाहनों के पुर्जों को टटोलता हुआ देखा जा सकता है।

इस बालक की मां व उसके परिवार से इस संबंध में बात की तो उसकी मां का कहना है कि उनका बेटा बहुत साहसी है इतनी कम उम्र में उसने अपने परिवार को संभाला और परिवार को भूखे मरने से बचाया। उनका कहना है कि वैसे तो वो अपने सभी बच्चों को पढ़ाना चाहती थी परन्तु घर के हालात ऐसे थे कि वो अभी केवल अपने सबसे छोटे बेटे को पढ़ने भेजती है। वह स्वयं भी इस काबिल नहीं है कि बच्चों की देखभाल कर सके इसलिए बड़ा बेटा बाहर काम करने जाता है और बेटी घर का काम सम्भालती है। यद्यपि अब पीड़ित बालक के पिता भी कभी–कभी पैसा भेजते हैं पर वो पैसा बालक के मां के इलाज पर खर्च हो रहा है।

बालक का कहना है कि वो अपनी मां से बहुत प्यार करता है वह उसे ठीक करने के लिये कुछ भी कर सकता। इसे को यह काम करते हुए लगभग साल भर हो चुका है परन्तु वह आज भी अपनी घर की आर्थिक स्थिति संभालने की काफी कोशिश कर रहा है।

बालक का कहना है कि वह बहुत खुश है कि उसका छोटा भाई पढ़ने जाता है। वो कहता है कि वो भले ही नहीं पढ़ पाया पर वो अपने भाई को पूरा सहयोग करेगा उसकी जिम्मेदारी उठायेगा और उसे एक बड़ा आदमी बनायेगा। वह कहता है कि वो अपने पिता की पूरी मदद करेगा और अपने परिवार को आर्थिक रूप से मजबूत करेगा। बालक से यह भी पूछा गया कि आपके परिवार के मुश्किल समय में क्या आपके किसी मित्र या रिश्तेदार ने साथ नहीं दिया। इस पर बालक का कहना था कि बुरे वक्त में कोई अपना नहीं होता सब पराये हो जाते हैं।

उक्त प्रकरण दर्शाता है कि कैसे परिवार पर आई मुसीबत के कारण एक बच्चे का पूरा भविष्य वाहनों के धुंए में काला हो गया। यह बच्चा भी पढ़–लिखकर आगे बढ़ सकता था कुछ बन सकता था पर इसके हाथों में कलम की जगह औजारों ने ले ली। इतनी कम आयु और कमजोर आर्थिक स्थिति के बाद भी

बालक के इरादे बहुत ऊंचें है। यह पीड़ित बालक इस उम्र में दुपहिया वाहनों को ठीक करता हुआ अपने परिवार को सुख व खुशी देने के सपने देखता है। इसे इस बात का मलाल नहीं कि वो पढ़ नहीं सका परन्तु इस बात की खुशी है कि उसका भाई पढ़ने जाता है।

केस 3							
नाम	शिक्षा		आयु	व्यवसाय		मासिक आय	
स	तीसरी		13 वर्ष	दूसरों के घरों में कार्य		4000 से 5000	
मूल निवास : कुशलगढ़ (बांसवाड़ा)							

पीड़ित बालिका की उम्र 13 वर्ष है और ये अपने परिवार के साथ कुशलगढ़ में ही निवास करती है। इन्होंने तीसरी कक्षा पास कर रखी है। इनके परिवार में इनके माता–पिता और तीन भाई–बहन हैं अर्थात दो भाई और एक बहन हैं। सबसे बड़ी वो स्वयं हैं एक छोटी बहन 12 साल की और दो भाई जो क्रमशः 6 साल और 3 साल के हैं। सभी बच्चों में सिर्फ इसी ने तीसरी कक्षा पास कर रखी है। इसके पिता मजदूरी का काम करते हैं परन्तु नशे की लत के कारण उन्हें ज्यादा काम नहीं मिलता। ऐसे में इसकी मां को दूसरों के घरों में घरेलू कार्य करने पड़ते हैं। केवल पीड़िता की मां के नौकरी करने से घर खर्च नहीं चल पा रहा था तो मजबूरन उन्हें अपनी बड़ी बेटी को काम पर लगाना पड़ा। माता–पिता और बड़ी बेटी की कमाई से परिवार की आय मुश्किल से 4000 से 5000 है।

जब पीड़ित बालिका अकेली थी तब वह स्कूल जा पाती थी, उसके माता–पिता जो कमाते थे उससे उन तीनों का गुजर–बसर हो जाता था। परन्तु जैसे–जैसे घर में सदस्यों की संख्या बढ़ी इनकी तकलीफें भी बढ़ गईं और साथ ही पिता की नशे की आदत ने इतनी कम उम्र में बेटी को काम करने के लिये मजबूर कर दिया।

बालिका की मां कहती हैं कि वो खुशी से बेटी को काम नहीं करवाती उनकी मजबूरी है। उनका कहना है कि उनके पति जिम्मेदारियों को नहीं निभा रहे और इसी कारण सारा घर खर्च उन पर है। वो अकेली जो कमाती थी बहुम कम था इसलिये इन्हें बेटी की मदद लेनी पड़ी। उनके बाकी तीन बच्चे छोटे हैं जिनमें दूसरी बेटी तो उन दोनों के काम पर जाने के बाद दोनों बेटों को संभालती है। वो कहती है कि उनके पास जमीन या पशु आदि कोई सम्पति नहीं है और इसी कारण घरों में काम करके जो लाती है उसी से परिवार का पेट भरती हैं। उनका कहना है कि जब वे बच्चों को पढ़ने जाते हुए देखती हैं तो वो भी अपने बच्चों को स्कूल भेजना चाहती हैं परन्तु ऐसा कर नहीं पातीं।

बालिका से भी इस संबंध में बात की गई उसने बताया कि उसे स्कूल जाने की बहुत इच्छा होती है पर वह अपने परिवार को भूखा नहीं देख सकती। उसका कहना है कि उसे जब भी समय मिलता है वो अपनी पुरानी किताबों से थोड़ी बहुत पढ़ाई करती है साथ ही उसके दो–तीन सहेलियां हैं जो स्कूल जाती हैं वो कभी–कभी उनके पास जाकर भी पढ़ती है।

बालिका जिस घर में काम करती है उन लोगों से भी बात की गई कि वे लोग एक नाबालिग बच्ची से कैसे काम करवा रहे हैं। इस सम्बन्ध में उनका कहना है कि वे बच्ची उनके घर रोज काम नहीं करती, जिस दिन उसकी मां नहीं आती उसी दिन करती है और इसके लिये भी उसकी मां ने उनसे आग्रह किया था कि वो ज्यादा से ज्यादा घरों का काम करना चाहती है इसलिये वो हर रोज अपनी बेटी को अलग घर में भेजती हैं ताकि उन जैसे लोगों को परेशानी न हो और उसकी बेटी हर रोज अलग–अलग घर का काम करके उसकी मां की सहायता कर ले। इससे यह भी न होगा कि बच्ची को काम पर रखा है और बच्ची एक–एक, दो–दो दिन करके महीना निकाल लेगी। पुलिस या बाल कल्याण समिति द्वारा पूछताछ करने पर बच्ची को एक ही दिन काम कराना पाया जाएगा।

संक्षेप में उक्त प्रकरण बच्चों के बाल मजदूरी मे फंसे होने के कारणों का खुलासा करता है। उक्त प्रकरण में बच्ची स्वयं अपनी इच्छा से काम कर रही है क्योंकि वह अपनी मजबूर मां की सहायता करना चाहती है। वैसे तो वो पढ़ना–लिखना चाहती है, परन्तु वह मजबूर है। यह मासूम बच्ची अपना बचपन भूल चुकी है। वो अन्य बच्चों की तरह शरारत नहीं करती, खेलती–कूदती नहीं है। इस उम्र में उसने जिम्मेदारियां उठाना सीख लिया है। वह समय से पहले ही बड़ी हो चुकी है।

विश्लेषण

संक्षेप में कहा जा सकता है कि डायन प्रथा, दागना प्रथा, नातरा प्रथाजैसी कुप्रथाएं तथा महिला हिंसा व बाल अत्याचार जैसी सामाजिक समस्याओं का अंत नहीं हो पाया है। आज भी इन समस्याओं से कई लोग पीड़ित हैं। डायन कह कर प्रताड़ित करना, मारपीट करना आम बात हो गई है। गर्म सलाखों से शरीर को दागना इनकी जरूरत बन गया है। नातरा करना शौक बन गया है और महिलाओं व बच्चों पर हिंसा तथा अत्याचार करना रोज़ की बात हो गई है। जहां मानवाधिकारों की इतनी चर्चा है वहां किसी के भी साथ असामाजिक व्यवहार अत्यन्त दुःख का विषय है। कुछ लोग जो अपने अधिकारों को लेकर जागरूक हैं वह तो शिकायत द्वारा अपने अधिकारों को छीनना जानते हैं। परन्तु कुछ लोग जो अशिक्षित हैं, कमजोर हैं, अपने अधिकारों को नहीं जानते। इनके अधिकारों की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। प्रस्तुत अध्याय के विभिन्न प्रकरणों से यही स्पष्ट होता है कि–

1. महिलाएं व बच्चे इन समस्याओं के कारण मानसिक और शारीरिक तौर परप्रताड़ित होते हैं। असामाजिक होकर अलग–थलग सा जीवन व्यतित करते हैं।

2. शारीरिक कमजोरी या शौक के कारण अपने जीवन साथी को धोखा देने के प्रकरणों की संख्या बहुत है।

3. वर्तमान में कई महिलाएं डायन का दंश झेल रही है परन्तु इससे निजात पाने का कोई उपाय सामने नहीं है।

4. आश्चर्य की आत यह है कि इन कुप्रथा को मानने वालों में अशिक्षितों के साथ–साथ शिक्षितों की संख्या भी है साथ ही युवा वर्ग जो परिवर्तन ला सकता है वह भी इस कुप्रथा में जकड़ा हुआ है।

5. किसी का जन्म और मृत्यु किसी के हाथ में नहीं है फिर किसी महिला के जन्म लेने के दिन को हम शुभ–अशुभ या उस दिन को बुरा कैसे मान सकते हैं। डायन प्रथा ऐसी कुप्रथा है जो अत्यन्त गंभीर स्थितियों को जन्म दे रही है। और दिन के आधार पर व्यक्ति के व्यवहार को निश्चित करना अमानवीय है।

6. इन कुप्रथाओं को समाप्त करने की सोच तभी विकसित की जा सकती है जब इस बारे में जनजाति सदस्य व युवा वर्ग सुने, समझे और जागरूक हों जबकि कईं युवा तो डायन नाम सुनते ही कोसो दूर भाग जाते हैं। उनका मानना होता है कि कौन दुश्मनी ले, और क्यों ले।

7. यदि मानव चाहता है कि उसे सभी अधिकार मिले उसका सम्मान हो आदर मिले तो इसके लिये उसे दूसरों के अधिकारों को समझना होगा उसे मान–सम्मान देना होगा क्योंकि अधिकार, कर्त्तव्यों के साथ जुड़े हुए हैं।

8. दागना प्रथा से सम्बन्धित प्रसंगों द्वारा स्पष्ट होता है कि कई बार व्यक्ति को ऐसी स्थिति में ड़ाम (दाग) लगाया गया है जब वह अपने पूरे होश में भी नहीं होता है। शरीर को सलाखों से जलाना एक अमानवीय कृत्य है

9. यह कुप्रथा आधुनिक चिकित्सा प्रणाली को खारिज कर रही है जनजाति सदस्य और इसका युवा वर्ग भी चिकित्सक से ज्यादा तो भोंपे–बाबाओं पर विश्वास कर रहे हैं यह एक विचारणीय विषय है।

10. यद्यपि इस प्रथा से पीड़ित कई व्यक्ति स्वयं इसका समर्थन करते है उनके अनुसार यह एक परम्परागत चिकित्सा प्रणाली है जो मनुष्य का ईलाज करती है तो इसमें गलत क्या है ? परन्तु गर्म सलाखों से शरीर को दागना एक अमानवीय कृत्य के अन्तर्गत आता है और अगर शरीर किसी बच्चे का हो तो यह अत्यन्त जघन्य अपराध है। इस कुप्रथा को समाप्त करने हेतु आवश्यक है कि चिकित्सा व्यवस्था और स्वास्थ्य कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता अभियान चलाये जाये जिससे की जनजाति समाज और इसका

युवा वर्ग अंधविश्वास और भोंपे–बाबाओं से दूर हो तथा जनजाति युवाओं को इस हेतु प्रेरित किया जाय।

11. नातरा प्रथा को समाप्त करने हेतु कानूनी व सामाजिक दोनों स्तर पर व्यापक प्रयास करने आवश्यक हैं।

12. यद्यपि प्रत्येक स्त्री–पुरूष को स्वतन्त्रतापूर्वक जीवन–साथी के चयन का अधिकार है तथा सामंजस्य न होने पर विवाह–विच्छेद करने का अधिकार भी है। परन्तु, अपने बच्चों का ध्यान रखे बिना केवल अपनी खुशी के आधार पर फैंसला लेना अपने अधिकारों का दुरूपयोग है। अतः यदि नातरा किया जाता है तो इस स्थिति में बच्चों के लालन–पालन की समुचित व्यवस्था के बाद ही नातरा की स्वीकृति मिलनी चाहिए।

13. महिलाएं परिवार की धुरी हैं एवं बच्चे हमारा भविष्य। दोनों के अधिकारों की रक्षा करना समाज तथा समाज के युवा सदस्यों का कर्त्तव्य है। महिला हिंसा व बाल अत्याचार को रोकना है तो इस हेतु जनजाति समाज के प्रत्येक सदस्य विशेषकर युवा सदस्यों को आगे आना होगा।

14. महिला एवं बाल अत्याचार के अधिकांश प्रकरणों में देखा गया है कि पीड़ितों के अपने ही उनके दुश्मन हैं। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि उन्हें सामाजिक रूप से समझाया जाये और उनकी मानसिकता को बदलने का प्रयास किया जाय।

अन्ततः यही कहा जा सकता है कि यदि प्रत्येक समाज के प्रत्येक मानव को समानता का अधिकार, जीवन जीने का समान अधिकार देना है तो वृहद् स्तर पर इस हेतु जागरूकता लाने का प्रयास करना आवश्यक है।

❑❑❑

6

निष्कर्ष और सुक्षाव

मानवाधिकार वे अधिकार हैं जिनका समुचित प्रयोग कर मनुष्य अपने सर्वांगीण विकास की दिशा में आगे बढ़ता है। इनसे अभिप्राय उन अधिकारों से है जो मानव समाज के विकास के लिये मूलभूत हैं तथा वे मानव को केवल इस आधार पर मिलने चाहिये कि वह मानव है। मानवीय अधिकार सभी व्यक्तियों के लिये एक समान है इसलिये मनुष्य जीवन की सार्थकता अपने विकास के साथ–साथ दूसरों के विकास के अधिकारों का सम्मान करने और उन्हें उपयोग में लाने का अवसर देने में है। मानवाधिकार की उत्पति प्राकृतिक कानूनों के सिद्धान्त से हुई है तथा यह उत्पति भी कुछ चरणों मे क्रमबद्ध तरीके से हुई है। उन्हें मानवाधिकार कहा जा सकता है।

आधुनिक युग प्रजातन्त्र का युग है। आज स्वतन्त्रता मनुष्य की प्रथम मांग है। सुविधाओं तथा स्वतन्त्रताओं में मानवाधिकार मुख्य हैं। ये नागरिकों के सर्वांगीण विकास का मूल आधार हैं। वृक्ष के लिये जो महत्व जड़ का है वही महत्व नागरिकों के लिये इन अधिकारों का है। अतः यह कहा जा सकता है कि जिस प्रकार जीवन धारण करने की मूल आवश्यकताएं हवा, पानी, भोजन है उसी प्रकार जीवन की समग्रता को प्राप्त करने की आवश्यक स्थितियां मानवाधिकार हैं।

परन्तु क्या व्यवहार रूप में मनुष्य इन अधिकारों के प्रति जागरूक है ? क्या इनका प्रयोग कर रहा है ? क्या एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के अधिकारों का सम्मान कर रहा है? क्या उन्हें अवसर दे रहा है? यह अत्यन्त विचारणीय विषय है। आज के दौर में एक मनुष्य के अधिकारों की रक्षा कैसे की जाए ? यह एक ज्वलन्त प्रश्न है। यद्यपि प्रारम्भ से ही सभी को मानव जीवन के मूल अधिकार देने की बात कही जाती रही है। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस प्रकार के प्रावधान किये गये हैं जिससे कोई व्यक्ति या समूह दूसरे के मानवाधिकारों का हनन् न कर सके। संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने 10 दिसम्बर 1948 को

सार्वभौमिक मानव अधिकारों की घोषणा का प्रस्ताव स्वीकृत कर मानवाधिकारों को महत्व प्रदान किया। इस घोषणा में 30 धाराओं को सम्मिलित किया गया है।

यद्यपि भारत में मानव अधिकार को हर युग में स्थान दिया गया है चाहे वह प्राचीन भारत हो अथवा आधुनिक। हर युग में मानवाधिकार किसी न किसी रूप में भारतीय संस्कृति का आधार रहा है। यहां तक कि भारतीय संविधान में भी मानव अधिकारों को स्थान दिया गया है। निष्कर्षतः भारत हमेशा से ही मानवाधिकारों का संरक्षण करता रहा है। भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली में समता के अधिकार, स्वतन्त्रता के अधिकार, शोषण के विरूद्ध अधिकार और संवैधानिक उपचारों के अधिकार के रूप में मूल अधिकारों को व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास का मार्ग बनाया गया है। इन सब प्रयासों के उपरान्त भी सशस्त्र संघर्ष, लज्जाजनक तथा योजनाबद्ध ढंग से मानवाधिकारों का उल्लंघन तथा मूलभूत स्वतन्त्रता का हनन् आज भारत और विश्व के विभिन्न भागों में समाचार पत्रों की सुर्खिया बनते रहे हैं।

जाति, वर्ग व धर्म से परे सभी समाजों में, यहां तक कि जनजाति समाज में भी मानवाधिकार समान रूप से लागू होता है। यद्यपि जनजाति समाज प्रारम्भ से ही दूर जंगलो व पर्वतों में निवास करता रहा है और इसी कारण वह अपने अधिकारों व मानवाधिकारों से भी वंचित रहा। परन्तु, वर्तमान में यह समाज भी अपने अधिकारों के प्रति सोचने लगा है। शिक्षा ने इनके जीवन में परिवर्तन किया है। लेकिन आज भी कहीं–कहीं ऐसा देखने या सुनने मिलता है की जनजाति समाज में मानवाधिकारों का हनन् हो रहा है और महसूस होता है कि जनजाति समाज को भी मानवाधिकारों के प्रति और अधिक जागरूक करने की आवश्यकता है।

इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए यह अनुसंधान किया गया है। प्रस्तुत अनुसंधान **''जनजाति युवा और मानवाधिकार (एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)''** में यह जानने का प्रयास किया गया है कि वर्तमान समाज में मानवाधिकार की क्या स्थिति है? क्या जनजाति समाज को मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा का लाभ मिल रहा है? क्या जनजाति युवा मानवाधिकारों से परिचित हैं? जनजाति समाज के युवाओं की प्रमुख सामाजिक समस्याएं क्या हैं ? समानता, स्वतंत्रता, समान अवसर एवं शोषण के प्रति जनजाति युवाओं की चेतना एवं उनके प्रयास क्या हैं ? जनजाति विकास में जनजाति युवाओं की सहभागिता का स्तर जांचना, जनजातियों में मानवाधिकार के संरक्षण के सम्बन्ध में स्वैच्छिक संगठनों, मानवाधिकार आयोग तथा जनसंचार साधनों की भूमिका कितनी और क्या है ? तथाजनजाति समाज में पायी जाने वाली विभिन्न प्रथाओं जैसे डायन, नातरा व दागना प्रथा के सम्बन्ध में जनजाति युवाओं के विचारों को जानना।

इन सभी उद्देश्यों को ध्यान में रखकर यह अनुसंधान कार्य किया गया है। अनुसंधान विषय की प्रकृति के आधार पर जनजाति उपयोजना क्षेत्र के उदयपुर,

डूंगरपुर और बांसवाड़ा जिलों को चुना गया है जहां जनजातियों का सघन आवास है। तीनों जिला मुख्यालयों के साथ–साथ इनकी 4–4 पंचायत समितियों को चुना गया हैं। चूंकि डूंगरपुर मुख्यालय के साथ इसकी सभी 4 पंचायत समितियां अध्ययन में सम्मिलित हैं अतः उदयपुर(गिर्वा) मुख्यालय और बांसवाड़ा मुख्यालय कि क्रमशः 7 और 5 पंचायत समितियों में से भी 4–4 पंचायत समितियों का चुनाव लॉटरी विधि द्वारा किया गया हैं।

उत्तरदाताओं के रूप में युवा वर्ग (18 से 35 वर्ष की आयु वर्ग के) को चुना गया है। प्रत्येक जिले की चुनी गई प्रत्येक पंचायत से 20–20 उत्तरदाताओं अर्थात् युवाओं को उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि द्वारा चुना गया है, जिसमें 10 युवक व 10 युवतियां सम्मिलित हैं। ये युवा भिन्न–भिन्न आयु, शैक्षिक स्तर, व्यवसाय, आय आदि का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस प्रकार कुल 300 युवाओं से तथ्य संकलित किये गये हैं। साथ ही मानवाधिकार हनन् से सम्बन्धित वैयक्तिक अध्ययन भी किये गए हैं।

जहां तक जनजाति समाज का प्रश्न है यह समाज प्रारम्भ से ही इस दुविधा में रहा कि वह अपनी संस्कृति की रक्षा करे या विकास की धारा में जुड़ने का प्रयास करे। संविधान की धारा 342 के अनुसार राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वह सार्वजनिक सूचना द्वारा उन जनजातियों, जनजाति समुदायों या जनजाति समुदायों के हिस्सों को इस संविधान के अर्थ में अनुसूचित जनजातियों के नाम से घोषित करेगा। इनका निवास स्थान आज भी उन क्षेत्रों में है जहां अधिक विकास नहीं हुआ है। अपनी इसी स्थिति के कारण ये बाकी समाज से अलग है। इस जनजाति के सदस्य गैर–जनजाति समाज यहां तक की स्वयं अपने समाज के सदस्यों से भी शोषित होता हैं। अतः इन्हें विकास की धारा के साथ जोड़ने के लिये विशेष सुविधाओं की आवश्यकता है।

जनजातियां तथा मानवाधिकार आदि से सम्बन्धित साहित्य समीक्षा में ये तथ्य उजागर हुए हैं कि यद्यपि सभी विद्वानों ने अपने अध्ययन में मानवाधिकार व जनजतियों से संबंधित महत्वपूर्ण पक्षों को रखा है परन्तु कई पक्ष उनके अध्ययन से अछूते रह गये हैं। इन विद्वानों ने मानवाधिकार की प्रारम्भ से वर्तमान तक की स्थिति का उल्लेख किया परन्तु वर्तमान में जनजाति समाज में मानवाधिकारों की प्रासंगिकता के संदर्भ में कोई स्पष्ट बात नहीं कही है। संविधान में सभी को समानता का अधिकार दिया गया है परन्तु गैर–जनजाति समाज द्वारा जनजाति समाज का शोषण समानता के प्रसंग में कैसे देखा जा सकता है? मानवाधिकार व्यवस्था जनजातियों को उनकी संस्कृति का संरक्षण के संरक्षण का अधिकार प्रदान करती है। लेकिन संस्कृति का संरक्षण करते हुए ये जनजातियां सभ्यता अथवा विकास का दामन कैसे थामेंगी। मानवाधिकार में बच्चों व महिलाओं के अधिकारों को भी सुरक्षित रखा गया है परन्तु बालश्रम व महिला हिंसा की खबरें इन अधिकारों को नकार रहीं है। क्या पुलिस अथवा कानून इस संदर्भ में कारगर

प्रयास नहीं कर पा रहे ?ऐसी कईं बातेंऔर कईं पक्ष साहित्य समीक्षा में लगभगअनुत्तरित मिले हैं। प्रस्तुत अध्ययन इसी ओर एक प्रयास है।

चयनित युवाओं की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि के अन्तर्गत युवाओं की आयु, शिक्षा स्तर, वैवाहिक स्तर व परिवार के स्वरूप जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति, जनजाति युवक–युवतियों में अधिकारों के प्रति जागरूकता, विभिन्न प्रथाओं के सम्बन्ध में युवाओं के विचार आदि से संबंधित जानकारी प्राप्त होती है तथा आर्थिक पृष्ठभूमि से उत्तरदाताओं की व्यवसाय आय व परिवार की मासिक आय की जानकारी मिलती है। तीनो जिलों में 47 प्रतिशत उत्तरदाता 18 से 25 आयु वर्ग के तथा 53 प्रतिशत 25 से 35 आयु वर्ग के मध्य हैं।

शैक्षणिक स्तर के आधार पर तीनों जिलों में सर्वाधिक 29 प्रतिशत स्नातकोत्तर युवक–युवतियां उदयपुर से हैं। 20 प्रतिशत स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा प्राप्त किये हुए बांसवाड़ासे हैं, एवं तुलनात्मक रूप से सर्वाधिक कम स्नातकोत्तर की शिक्षा का 11 प्रतिशत डूंगरपुर में है। तीनों ही जिलों में व्यवसाय न करने वाले युवा वर्ग की संख्या सर्वाधिक है। सबसे अधिक 53 प्रतिशत युवा वर्ग वर्तमान में अध्ययन में संलग्न है। जबकि लगभग 8 प्रतिशत युवा वर्ग अध्ययन के साथ–साथ अंशकालिन व्यवसाय भी कर रहे हैं। उदयपुर के उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति अन्य जिलों से अच्छी है। रहन–सहन के ढ़ंग और तौर–तरीकों से हर लिहाज में उदयपुर का युवा वर्ग आगे है।

जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति की बात की जाय तो युवाओं द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर कहा जा सकता है कि जनजाति समाज में स्त्रियों की स्थिति ना तो बहुत अच्छी है और ना ही बहुत बुरी। घर के कार्यों की बात हो तो स्त्रियों का वर्चस्व है और बाहर के क्षेत्रों में पुरूषों का। जनजाति समाज मे स्त्री व पुरूष के बीच वैसे तो असमानताएंपायी जाती हैं। फिर भी कुछ युवाओं के अनुसार कहीं–कहीं कुछ भेदभाव देखने मिलते हैं।इस असमानता के सम्बन्ध में स्त्रियां कहीं–कहींविरोध प्रदर्शित करती हैं अन्यथा इस असमानता को बचपन से ही स्वीकार कर लेती हैं। स्त्री एवं पुरूष में अपने अधिकारों के प्रति कौन अधिकजागरूक है? इसका विश्लेषण करने पर निष्कर्ष निकलता है कि यह क्षेत्र पर निर्भर करता है क्योंकि बांसवाड़ा के 57 प्रतिशत युवा वर्ग के अनुसार जनजाति समाज में स्त्री–पुरूष में स्त्रियां अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक हैं, जबकि उदयपुर के 57 प्रतिशत युवाओं के अनुसार पुरूष।

जनजाति समाज में मानवाधिकार के मुद्दे व जागरूकता से संबंधित प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सभी उत्तरदाताओं को संविधान में वर्णित छः मूल अधिकारों में से प्रथम दो अधिकार समानता व स्वतन्त्रता के अधिकार की जानकारी है। यद्यपि इनका पूर्णतया अर्थ क्या है ? इस बारे में वे अधिक नहीं जानते। शेष चार अधिकारों की जानकारी रखने वालों की संख्या काफी कम है। सर्वाधिक 49 प्रतिशत उत्तरदाता उदयपुर के हैं जो शोषण के विरूद्ध अधिकार से

परिचित हैं, धार्मिक स्वतन्त्रता के अधिकार की जानकारी रखने वाले उत्तरदाताओं का सर्वाधिक 50 प्रतिशत भी उदयपुर का ही है, साथ ही संवैधानीक उपचारों के अधिकार को जानने वाले सर्वाधिक 22 प्रतिशत उत्तरदाता भी उदयपुर के ही हैं।अतः शोषण के विरूद्ध अधिकार, धार्मिक स्वतन्त्रता के अधिकार और संवैधानीक उपचारों के अधिकार के बारे में उदयपुर क्षेत्र के उत्तरदाता अधिक जागरूक हैं। शिक्षा व संस्कृति के अधिकार से परिचित सर्वाधिक 78 प्रतिशत उत्तरदाता डूंगरपुर के हैं। इस प्रकार तीनों जिलों में तुलनात्मक रूप से उदयपुर के उत्तरदाता जागरूक हैं।

विशेषाधिकारों के बारे में जानकारी रखने वाले उत्तरदाताओं का सर्वाधिक प्रतिशत(80%) भी उदयपुर का है। सर्वाधिक(51%) उत्तरदाता डूंगरपुर के हैं जो अत्याचारों का निवारण अधिनियम 1989 से सर्वथा अपरिचित हैं जबकि सर्वाधिक (27%) उत्तरदाता बांसवाड़ा के हैं जो इस अधिनियम की पूर्ण जानकारी रखते हैं।

उदयपुर जिले का 30 प्रतिशत युवा वर्ग मानवाधिकारों से पूर्णतः परीचित है, जो अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक है। जैसा की पहले भी स्पष्ट किया जा चुका है कि कईं अन्य अधिकारों ओर नियमों की जानकारी के सम्बन्ध में भी उदयपुर क्षेत्र के उत्तरदाता अन्य जिलों से आगे हैं। जिसका मुख्य कारण यह है कि यहां के जनाजाति युवा अधिक जागरूक हैं, नई–नई योजनाओं व सूचनाओं के प्रति सजग रहते हैं। इसी कारण वे ये भी जानकारी रखते हैं कि अधिकार हनन् का कौनसा स्वरूप मानवाधिकार हनन् में आता है। सर्वाधिक 61 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार जनजाति समाज में मानवाधिकारों का हनन् होता है।जबकि डूंगरपुर के अधिकांश उत्तरदाताओं के अनुसार जनजाति समाज में मानवाधिकारों का हनन् नहीं होता क्योंकि यहां का अधिकांश युवा यह जानकारी ही नहीं रखते की मानवाधिकार में कोनसे अधिकार आते हैं।

मूल अधिकारों के हनन् को स्वीकार करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या अस्वीकार करने वाले उत्तरदाताओं से काफी कम है। जिससे की स्पष्ट होता है कि जनजातियों के मूल अधिकार तो सुरक्षित हैं। डूंगरपुर एवं बांसवाड़ा के अधिकांश युवा चाहते हैं कि जनजाति समाज में नातरा प्रथा को प्रतिबंधित किया जाना चाहीये ताकि बच्चों के अधिकारों का हनन् ना हो।डायन प्रथा और दागना प्रथा में विश्वास रखने वाले सर्वाधिक उत्तरदाता डूंगरपुर में है। तथा सर्वाधिक युवा वर्ग उदयपुर का है जो डायन प्रथा में अविश्वास करता है। बांसवाड़ा के सर्वाधिक युवा वर्ग के अनुसार डायन प्रथा मानवाधिकारों का उल्लंघन है। जबकि डायन प्रथा को मानवाधिकार का उल्लंघन भी नहीं मानते। इससे भी स्पष्ट होता है कि डूंगरपुर के युवा इनकी पुरानी प्रथाओं से अलग नहीं हो पाया हैं। उदयपुर कायुवा वर्ग डायन प्रथा को समाप्त करने हेतु प्रशासन का योगदान मानता है।

तीनों जिलों से विधवा विवाह के पक्ष–विपक्ष के सम्बन्ध में जानकारी ली गई जिसमें तुलनात्मक रूप से सर्वाधिक 85 प्रतिशत उत्तरदाता उदयपुर के हैं जो विधवा विवाह के पक्ष में अपना तर्क देते हैं जबकि सर्वाधिक 23 प्रतिशत उत्तरदाता डूंगरपुर के हैं जो इस विवाह के विपक्ष में हैं तथा इसका विरोध करते हैं।

तीनों ही जिलों का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक युवा वर्ग के अनुसार वर्तमान शिक्षा मानवाधिकारों के प्रति चेतना जागृत करने में असफल हुई है। परन्तु, अधिकांश युवा यह भी मानते हैं कि शिक्षा के अधिकार नें जनजाति समाज में शिक्षा के स्तर को बढ़ाया है और अधिकांश बच्चे पढ़ने जाने लगे हैं।ऐसे ही मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में जनसंचार के साधनों की भूमिका को भी सर्वाधिक युवा वर्ग नहीं मानता है जिससे स्पष्टतः दृष्टिगत होता है कि वास्तव में जनसंचार के साधनों की भूमिका मानवाधिकार के प्रति जागरूकता लाने में नगण्य साबित हुई है। सर्वाधिक उत्तरदाता गैर–जनजाति समाज के लोगों द्वारा जनजाति समाज के शोषण को अस्वीकार करते हैं। वहीं दूसरी और सर्वाधिकयुवा वर्ग के अनुसार जनजाति समाज के सदस्यों के मानवाधिकार के तहत शोषण होने पर पुलिस की भूमिका सकारात्मक व सहयोगात्मक होती है।

तीनों जिलों की बात की जाए तो निदर्शित 300 युवाओं में से सर्वाधिक 68 प्रतिशत उत्तरदाता सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सरकारी प्रयासों को स्वीकार करते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो सर्वाधिक 70 प्रतिशत युवा वर्ग बांसवाड़ा का है जिनके अनुसार जनजाति समाज में पाई जाने वाली विभिन्न सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सरकार अपना अमूल्य योगदान दे रही है। साथ ही सर्वाधिक 41 प्रतिशत बांसवाड़ा के है जिनके अनुसार मानवाधिकार संरक्षण में स्वयं सेवी संस्थाओं का योगदान है तथा सर्वाधिक 69 प्रतिशत युवा वर्ग डूंगरपुर का है जिनके अनुसार मानवाधिकार संरक्षण में स्वयं सेवी संस्थाओं का कोई योगदान नहीं है। तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो स्वयं–सेवी संस्थाओं के योगदान को स्वीकार करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या अस्वीकार करने वालो से कम है। अतः संक्षेप में जनजाति समाज में मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाने में स्वयं सेवी संस्थाऐं असफल सिद्ध हो रही है।

गैर–जनजाति समाज द्वारा शोषण किये जाने पर किस प्रकार के कदम उठाये जाते हैं इस सम्बन्ध में विश्लेषण किया गया तो उत्तरदाताओं के अनुसार ऐसी स्थिति में वे पुलिस का सहारा लेते है। पुलिस द्वारा उनके प्रति सकारात्मक रवैया अपनाया जाता है। ऐसे ही जनजाति समाज के युवा वर्ग से संविधान में वर्णित मूल अधिकारों की जानकारी ली गई जिसमें सभी उत्तरदाताओं ने समानता के अधिकार के बारे में बताया। परन्तु समानता के अधिकार के वास्तविक अर्थ को बहुत कम उत्तरदाता जानते हैं।अतः यदि समानता के अधिकार को वास्तविकता की स्थिति में लाना है तो इन युवाओं को विभिन्न कानूनों, मूल अधिकारों व विभिन्न विकास योजनाओं को सही अर्थो में समझना होगा जहाँ तक इनकी पहुंच नहीं है।

मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता ना होने के पीछे क्या कारण हैं इस सम्बन्ध में विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष निकलता है कि जनजाति समाज का अधिकांश भाग तो अशिक्षित है जिस कारण ये अपने अधिकारों से अपरिचित हैं, साथ ही वे किसी भी नयी सोच अथवा वस्तु को अपनाने से ड़रते हैं। उन्हें लगता है कि वे कमजोर है और लोग इसका फायदा उठा सकते है और इसी कारण ये लोग किसी की बात को सुनने, समझने या मानने की कोशिश नहीं करते। जो लोग शिक्षीत हैं उनमें से भी कई लोग अधिकारों व मानवाधिकारों से अपरीचित हैं क्योंकि न तो वर्तमान शिक्षा में इस सम्बन्ध में जानकारीयां दी जा रही हैं और ना ही सरकार द्वारा कोई कारगर प्रयास किये जा रहे हैं। जो कार्यक्रम चल रहे हैं वो अत्यन्त छोटे स्तर पर हैं जहां तक जनजाति समाज की पहुंच नहीं है।

सभी चयनित युवाओं में से 68 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जिन्होंने अथवा उनके परिवार ने किसी भूमि का हस्तान्तरण नहीं किया। इन उत्तरदाताओं का मानना है कि इनके लिए तो जमीन ही सब कुछ है यदि उसे भी दे दिया तो उनके जीवन यापन के लिए कुछ नहीं बचेगा। जिन्होंने भूमि का हस्तान्तरण किय हैउनका भी आर्थिक जीवन पूर्णतया कृषि पर निर्भर था। भूमि हस्तान्तरण से उनका आर्थिक व सामाजिक दोनो जीवन विशेष रूप से प्रभावित हुए है। साथ ही अधिकांश जनजाति युवा सदस्य 68 प्रतिशत जंगल को जनजातियों की सम्पति मानते है। इसके अनुसार प्रारम्भ से ही जंगल जनजातियों का शरण स्थली रहे है। और इन पर जनजातियों का ही अधिकार है। परन्तु, जल, जंगल, जमीन अभियान के बारे में इस क्षेत्र के बहुत कम लोग जानकारी रखते हैं। तीनों ही जिलों के सर्वाधिक उत्तरदाता इस अभियान की जानकारी नहीं रखते ।

जनजाति समाज में पायी जाने वाली विभिन्न सामाजिक समस्याओं व प्रथाओं का भी विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया। डायन प्रथा, दागना प्रथा, नातरा प्रथा तथा महिलाओं व बच्चोंके अधिकारों के हनन् आदि से सम्बन्धित वैयक्तिक अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि इन सामाजिक समस्याओं से आज भी कईं लोग पीड़ित हैं। डायन कह कर प्रताड़ित करना, मारपीट करना आम बात हो गई है। रोग होने पर गर्म सलाखों से शरीर को दागना इनकी जरूरत बन गया है। कभी मजबूरी तो कभी किसी अन्य कारण से नातरा किया जाता है और इससे बच्चों का जीवन प्रभावित होता है। महिलाओं व बच्चों पर हिंसा भीकम नहीं हो रही। चुंकि मानवाधिकार प्रत्येक मानव के अधिकारों की रक्षा करता है तो इस समाज और इसके सदस्यों के अधिकारों की रक्षा करना भी मानवाधिकारों के अधिकार क्षेत्र में आता है।

यह बात भी स्पष्ट होती है कि डायन प्रथा और इस जैसी अन्य सामाजिक समस्याओंका एकमात्र कारण अशिक्षा नहीं कहा जा सकता क्योकि इन प्रथाओं को मानने वालों में शिक्षित लोग भी सम्मिलित हैं। इन लोगों का मानना है कि डायन का अस्तित्व है।अतः ये लोग शिक्षित होने के बाद भी पुरानी प्रथाओं ओर

रीति–रिवाजों में जकड़े हुए हैं। युवा वर्ग इसलिये चुप है क्योकि वो असमंजस में है कि क्या वास्तव में उनके ये रीति–रिवाज़ उनकी संस्कृति है अथवा उनके समाज नें उन्हें व्यर्थ में ही इन कुप्रथाओं में बांध रखा है। यद्यपि आज का जनजाति युवा वर्ग परम्पराओं को तोड़ने लगा है, समय के साथ चलने की मांग को स्वीकार रहा है, परन्तु इनकी संख्या काफी कम है।

बाल श्रम को लेकर यह बात स्पष्ट होती है कि आर्थिक स्थिति के कमजोर होने के कारण ही बाल श्रमिक बढ़ रहे हैं। जनजाति समाज में महिलाओं पर हिंसा का मुख्य कारण है जनजाति पुरूषों का नशा करना, इसी कारण महिलाएं हर रोज मारपीट व अत्याचार का शिकार होती हैं और नातरा की संख्या में वृद्धि हो रही है।

तीनों ही अध्ययन क्षेत्रों के प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण करने पर निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि उदयपुर क्षेत्र का जनजाति समाज विशेषकर युवा वर्ग सामाजिक, आर्थिक तथा अन्य सभी दृष्टिकोणों से डूंगरपुर व बांसवाड़ाकी अपेक्षा आगे है। जिसका मुख्य कारण है इनका हर तरह से जागरूक होना एवं परिवर्तनों को स्वीकार करना।

प्राकल्पनाओं का सत्यापन

तथ्य विश्लेषण एवं सम्पूर्ण व्याख्या के पश्चात् यहां पर उन प्राकल्पनाओं की जांच कर यह देखने का प्रयास किया जा रहा है कि प्राकल्पनाएं सत्य सिद्ध हुई या असत्य। प्राकल्पनाओं पर आधारित निष्कर्ष निम्नानुसार हैं–

1. जनजाति युवाओं में औपचारिक शिक्षा, स्वयं सेवी संगठनों के प्रयास एवं जनसंचार साधनों के कारण मानवाधिकारों के प्रति जानकारी तथा जागरूकता बढ़ी है।

उदयपुर, डूंगरपुर और बांसवाड़ा जिलों का अध्ययन करने पर आंकड़ों के आधार पर यह तथ्य सामने आये किशिक्षा, स्वयं सेवी संस्थाएं और जनसंचार के साधन, आदि जनजाति समाज में मानवाधिकारों के प्रति जानकारी वजागरूकता लाने में अधिक सफल नहीं हो पाये हैं। इनके योगदान को स्वीकार करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या अस्वीकार करने वाले उत्तरदाताओं से काफी कम है(सारणी संख्या 4.12, 4.13, 4.14, 4.15 एवं 4.20)।

मानवाधिकारों की जानकारी तीनों अध्ययन क्षेत्रों में युवकों की तुलना में युवतियों को अधिक है (सारणी संख्या 4.4)। दूसरी ओर अनभिज्ञता वाले युवकों का प्रतिशत भी युवतियों से काफी ज्यादा है। यही कारण है कि मानवाधिकारों के उल्लंघन के बारे में भी युवतियां अधिक जागरूक हैं और युवकों की तुलना में ज्यादातरयुवतियों का कहना है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में मानवाधिकारों का उल्लंघन हो रहा है। जो मानवाधिकार को लेकर अनभिज्ञ हैं वही कह रहें हैं कि

उल्लंघन नहीं हो रहा (सारणी संख्या 4.5)और इसका कारण उत्तरदाताओं को मानवाधिकार की जानकारी का नहीं होना है। अतः उन्हें मानवाधिकार के उल्लंघन का पता नहीं चलता। अपने मूल अधिकारों के हनन् पर भी युवतियों की संख्या युवकों से ज्यादा है (सारणी संख्या 4.6)।

अनुसंधान में प्राप्त आंकड़े बताते हैं कि जब मानवाधिकारों की जानकारी के सम्बन्ध में शिक्षा के योगदान की बात आती है तो 73 प्रतिशत उत्तरदाता इस बात को अस्वीकार करते हैं (सारणी संख्या 4.12)। इनका मानना है कि वर्तमान शिक्षा में कहीं भी मानवाधिकारों का ज़िक्र नहीं है। यदि ये अधिकार इतने ही महत्वपूर्ण हैं तो इन्हें पाठ्यक्रम में सम्मिलित करना चाहिये जबकि मूलभूत शिक्षा के किसी भी स्तर पर मानवाधिकारों को विशे रूप से सम्मिलित नहीं किया गया है। साथ ही विद्यालय और महाविद्यालय भी अपने स्तर पर विभिन्न कार्यक्रमों, गोष्ठियों व सेमिनारों द्वारा इस हेतु प्रयास कर सकते हैं। परन्तु ऐसा बहुत कम स्थानों पर होता है।

स्वयं–सेवी संस्थाओं के सम्बन्ध में अधिकांश उत्तरदाता कहते हैं कि यद्यपि ये संस्थाएं मानव सेवा में संलग्न हैं, परन्तु मानवाधिकार के प्रति जागरूकता के सम्बन्ध में इनका कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं है। क्योंकि अधिकांश संस्थाएं निःशुल्क वस्त्र, भोजन, दवाईयां वितरित करके मानव सेवा करती हैं। कई संस्थाएं यथा–विधवा आश्रम, वृद्धाश्रम, विकलांग व अपंग बच्चों को घर देकर सहारा देती है। तथा कुछ संस्थाएं तो राजनीतिक दलों के साथ मिल गई हैं। मानवाधिकारों के सम्बन्ध में जागरूकता का प्रसार करने का कार्य यह नहीं करती अतः इन संस्थाओं का कोई महत्वपूर्ण एवं अधिकारिक योगदान नहीं है (सारणी संख्या 4.20)।

जनसंचार साधनों की बात कि जाये तो अधिकांशउत्तरदाता यही मानते हैं कि मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता लाने में जनसंचार के साधन जितने कारगर प्रयास कर सकते हैं उतने नहीं कर रहे (सारणी संख्या 4.13)। बहुत ही कम उत्तरदाता मानते हैं कि मानवाधिकारों के सम्बन्ध में जागरूकता फैलाने में जनसंचार साधनों की भूमिका है। इनके अनुसार जनसंचार के साधन विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा नई–नई योजनाओं की जानकारी देते हैं (सारणी संख्या 4.14)। जबकि सर्वाधिक 51 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार तो जनसंचार के साधन व्यर्थ और बेकार के विज्ञापन देते हैं जिनका मानवाधिकारों से कोई सरोकार नहीं है(सारणी संख्या 4.14)। अतः स्पट है कि अधिकांश उत्तरदाताओं के अनुसार जनसंचार के साधन मानवाधिकारों की जानकारी देने में कोई विशेश प्रयास नहीं कर रहे हैं। **अतः यह प्राकल्लपना असत्य सिद्व हुई है।**

2. जनजातियों की अपनी सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्था और आधुनिक सामाजिक व्यवस्था की विधियों तथा व्यवस्था के कारण मानवाधिकार संरक्षण को लेकर कुछ अर्न्तविरोध पैदा हुए हैं। यानि की एक ओर

पारम्परिक भावनाएं सुदृढ़ हो रही हैं तो दूसरी ओर आधुनिक मानवाधिकार धारणाएं भी प्रविष्ट होने लगी हैं।

यह प्राक्कल्पना कि जनजातियों की अपनी सीमाएं हैं। ये अपनी संस्कृति एवं व्यवस्था के विरोध में कुछ नहीं करते। इनसे सम्बन्धित आंकड़े सारणी संख्या 4.8, 4.10 और 4.12 में देखे जा सकते हैं। अनुसंधान में किये गये वैयक्तिक अध्ययन भी बताते हैं कि चूंकि जनजाति समाज की स्वयं की सामाजिक–सांस्कृतिक एवं राजनीतिक व्यवस्था है, जिसका विरोध इस समाज का युवा नहीं कर पा रहा है। परिणामस्वरूप मानव अधिकारों की भी अपनी कुछ सीमाएं बन गई हैं या यूं कहें कि सीमाएं बना ली गई हैं। यदि कठोर नियम व्यवस्था के साथ–साथ कठोर दण्ड का प्रावधान रखा जाये तो शायद मानवाधिकार उल्लंघन कम हो परन्तु समस्या यह है कि जनजाति समाज अपनी परम्पराओं व संस्कृति से ऊपर किसी को नहीं मानता उसके अनुसार प्रत्येक समाज के अपने मूल्य, आदर्श, नियम, प्रतिमान और मानक होते है। और उसके अनुरूप ही व्यवहार करना प्रत्येक सदस्य का धर्म व कर्त्तव्य होता है। इनका संरक्षण करना भी इनके अधिकार क्षेत्र में सम्मिलित है। अतः यह स्पष्ट है कि किसी भी तरह से जनजाति समाज अपनी परम्पराओं से बाहर नहीं निकलना चाहता और ना ही युवा पीढ़ी को निकलने दे रहा है और इसी कारण युवाओं की हदें तय हो गई है।

अध्ययन द्वारा (सारणी संख्या 4.14) से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर तो अधिकांश युवा वर्ग इन प्रथाओं को मानवाधिकार का उल्लंघन मानता है। परन्तु मानवाधिकार का उल्लंघन न मानने वालों का प्रतिशत भी कम नहीं है इन दोनों में कुछ ज्यादा अन्तर नहीं है अतः केवल ये मान लेना कि इन कुप्रथाओं को जनजाति समाज अपनी संस्कृति समझता है गलत है। वर्तमान जनजाति युवाओं में मानव के प्रति संवेदना आयी है, वो सही गलत की पहचान करना सीखने लगे हैं अंधविश्वास का साथ नहीं देते। नई पीढ़ी जागरूक है। वो अपने अधिकारों के साथ–साथ कर्त्तव्यों का पालन करना भी जानने लगी है। परन्तु फिर भी अंधविश्वास की जड़े गहरी हैं। परम्पराएं आधुनिक मानवाधिकारों पर हावी हैं। अपनी संस्कृति के प्रति निष्ठा की भावना इनमें प्रबल है। इनके लिये इनकी संस्कृति इनके पूर्वजो की देन है, जिसमें परिवर्तन अनपेक्षित है। **इस प्रकार उक्त प्राक्कल्पना न तो पूर्णतया सत्य सिद्ध होती है और न ही असत्य।**

3. जनजाति समाज में पायी जाने वाली विभिन्न प्रथाएं जैसे डायन प्रथा, नातरा, दागना प्रथा आदि जो उनकी संस्कृति के अंश हैं, को मानवाधिकार का हनन नहीं माना जाता बल्कि इन प्रथाओं को ये समाज अपनी संस्कृति का हिस्सा मानता है। संस्कृति के अपने आधारों को जो मानव अधिकार के अनुसार स्वतंत्र प्रक्रियाएं हैं।

यह प्राक्कल्पना जनजाति समाज में पायी जाने वाली विभिन्न प्रथाओं को मानवाधिकारों का हनन न मानकर इसे अपनी संस्कृति समझता है। यह सत्य है

कि अन्य परम्परागत समाजों की तरह जनजाति समाज अपनी संस्कृति व व्यवस्था को अक्षुण्ण बना कर रखना चाहता है तथा इनकी समाजिक व्यवस्था भी अत्यन्त कठोर है। जनजाति समाज सामान्यतः आधुनिक सामाजिक व्यवस्था व संस्कृति की विरोधी है। इनके लिये यदि इनकी संस्कृति से इन्हें कोई परेशानी व नुकसान नहीं है तो किसी अन्य समाज के सदस्यों को इस सम्बन्ध में कुछ भी कहने व करने का अधिकार नहीं है, फिर चाहे वह इन्हीं के सदस्यों के हित में क्यों न हो।

इनकी संस्कृति के कई पहलू मानव अधिकारों के हनन से जुड़े हैं इस बात

को ये लोग जानते हैं परन्तु इस बात को स्वीकार नहीं करते। इस समाज के कई सदस्य नातरा व दागना जैसी प्रथाओं के कारण दुःख झेल रहे हैं परन्तु इनके लिये ये उनकी परम्पराएं हैं। जिसे ये नुकसान नहीं पहुंचने देना चाहते हैं। जहां तक मानवाधिकार संरक्षण की बात है उसमें भी इन लोगों को कुछ हद तक ही सम्मिलित पाया गया है। हांलाकि नातरा प्रथा को कुप्रथा नहीं माना जा सकता क्योंकि यह प्रथा कहीं भी सामाजिक मूल्यों की समस्या पैदा नहीं करती। वरन् यह स्त्री को भविष्य की सुरक्षा प्रदान करती है (सारणी संख्या 4.8)। आंकड़े दर्शाते हैं कि युवकों की तुलना में युवतियां अधिक मुखर हैं।

डायन प्रथा को लेकर भी युवक एवं युवतियां प्रभावित हैं लेकिन औपचारिक शिक्षा के प्रसार के बाद इस प्रथा पर विश्वास में कमी आ रही है(सारणी संख्या 4. 9)। उत्तरदाता युवक एवं युवतियां इसे मानवाधिकार का उल्लंघन अमानवीय गतिविधि के रूप में मानते हैं और इनमें युवतियों का प्रतिशत बहुत प्रभावशाली है (सारणी संख्या 4.10)। वास्तव में डायन प्रथा भोपा, जनजाति प्रमुख या प्रभावशाली व्यक्ति का मिला–जुला प्रयास है जिस स्त्री से बदला लेना हों या उसे नीचा दिखाना हो, भोपा उसे डायन घोषित कर देता है और होने वाले अनिष्ट की सम्भावना को कम करने के लिये या तो ऐसी स्त्री को गांव से निकाल दिया जाता है अथवा पत्थरों से मारा जाता है। इस प्रथा को समाप्त करने के प्रयास चल रहे हैं (सारणी संख्या 4.11)।

जहां तक युवाओं की बात है यद्यपि यह सही है कि इनकी सोच, विचार, मान्यताओं आदि मे परिवर्तन आया है पर इतनी हिम्मत नहीं है कि ये खुलकर इन प्रथाओं का विरोध मानवाधिकारों को ध्यान में रखकर कर सकें। क्योंकि समाज के अधिकांश युवक–युवतियों के लिये ये सुविधाजनक है। विकसित समाजों में भी तो तलाक ओर विवाह बार–बार करने लगे हैं। नातरा प्रथा जनजाति महिलाओं के लिये अधिक सुविधाजनक एवं सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है।

4. जनजाति समाज में पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों के प्रति मानवाधिकारों के हनन की घटनाएं अधिक हैं। सामाजिक सांस्कृतिक रचना में जहां लोकतंत्रीय व्यवस्था हस्तक्षेप करना चाहती है, वहीं जनजाति सामाजिक व्यवस्था इन प्रबंधों का प्रतिरोध रखना चाहती हैं।

यह प्राक्कल्पना कि, जनजाति समाज में पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों के प्रति मानवाधिकार हनन की घटनाएं अधिक होती हैं। यह सही है कि मानवाधिकारों की जानकारी युवकों तुलना में जनजाति युवतियों को अधिक है (सारणी संख्या 4.3)। इनके उल्लंघन की बात भी युवतियां स्वीकार करती हैं (सारणी संख्या 4.5)। क्योंकि सारणी संख्या 4.6, 4.8, 4.9, 4.10, 4.11, 4.12 और 4.13 के आंकडें बताते हैं कि मूल अधिकारों का हनन् होता है इसको युवति उत्तरदाता अधिक बताती हैं। नातरा प्रथा में कभी–कभी कुछ महिलाऐं अपने पुरूष प्रेमी के साथ चली जाती है तभी पुरूष के अधिकारों का हनन होता है। कई पुरूष नातरे से महिलाएं लाते हैं, विवाह करके लाते हैं, परन्तु महिलाएं कुछ कारणोंवश छोटे–छोटे बच्चों को भी छोड़कर चली जाती हैं और पुरूष इस वेदना में जीवन गुजारता है। नातरे पर जाने वाली महिला की प्रस्थिति विवाह कर लाई गयी महिला से निम्न होती हैं। यह समानता के अधिकार का हनन् है।

दूसरी ओर डायन कहकर केवल महिलाओं को प्रताड़ित किया जाता है पुरूषों को नहीं। वर्तमान युग में भी कई महिलायें डायन होने का दुःख झेल रही है और शारीरिक मानसिक रूप से प्रताड़ित हो रही है। इस डायन प्रथा से पीड़ित महिला समाज से पृथक होकर जीवन बसर करती हैं। यह प्राक्कल्पना आंशिक रूप से सत्य है क्योंकि जनजाति समाज में कहीं–कहीं स्त्री–पुरूषों में भेदभाव देखने मिलते हैं। चाहे वो शैक्षिक हो, सामाजिक हो अथवा राजनीतिक। कहीं–कहीं महिलाएं घरेलू हिंसा का शिकार होती हैं, नातरा प्रथा से दूसरी पत्नियां लाकर पहली पत्नी के अधिकार छीने जाते हैं। **अतः यह प्राक्कल्पना कुछ सीमा तक सही है परन्तु इसे पूर्णतया सत्य नहीं कहा जा सकता।**

5. कार्य प्रतिबन्धों और मानवाधिकारों के ज्ञान के अभाव में मानवाधिकारों के संरक्षण में स्वैच्छिक संगठनों एवं मानवाधिकार आयोग की भूमिका उत्साहवर्धक नहीं रही है।

मानवाधिकारों के संरक्षण में स्वैच्छिक संगठनों एवं मानवाधिकार आयोग की भूमिका को जनजाति युवाओं को मूल अधिकारों (सारणी संख्या 4.1), विषेशाधिकारों की जानकारी, अत्याचारों का निवारण अधिनियम (सारणी संख्या 4.2), मानवाधिकारों की जानकारी (सारणी संख्या 4.3), मानवाधिकारों के उल्लंघन (सारणी संख्या 4.5)आदि के बारे में जानकारी से स्पष्ट हो जाता है। आंकड़े बताते हैं कि स्वैच्छिक संगठनों एवं आयोग दोनों की भूमिका निष्प्रभावी रही हैं।

अध्ययन में पाया गया कि अधिकांश उत्तरदाता स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका को नकारते हैं क्योंकि स्वैच्छिक संगठनों ने कभी भी ईमानदारी से प्रयास नहीं किया। स्वैच्छिक संगठनों ने न तो मानवाधिकार के सम्बन्ध में जागरूकता लाने में एवं न ही उसके संरक्षण हेतु कोई प्रयास किये गऐ हैं। निःशुल्क किताबें, फल, वस्त्रादि का वितरण अवश्य किया जाता है। महिला आश्रम, विधवा, विकलांग महिलाओं हेतु निःशुल्क सुविधाएं दी जाती हैं। परन्तु कभी किसी संगठन ने डायन

प्रथा को रोकने के गम्भीर प्रयास नहीं किये, दागना प्रथा को बंद करने की पहल नहीं की या नातरा प्रथा के दोष बताकर उससे दूर रखने के प्रयास नही किये। डायन प्रथा से प्रताड़ित किसी महिला को उसके अधिकार दिलाने का प्रयास नहीं किया। दागना व नातरा प्रथा से पीड़ित किसी व्यक्ति को कानून की जानकारी देने का प्रयास नहीं किया। तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो स्वयं सेवी–संस्थाओं के योगदान को स्वीकार करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या अस्वीकार करने वालो से कम है। 63 प्रतिशत उत्तरदाता मानवाधिकार संरक्षण में स्वयं सेवी संस्थाओं की भूमिका को अस्विकार करता है। अतः संक्षेप में जनजाति समाज में मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाने में स्वयं–सेवी संस्थाएं अधिक सफल सिद्ध नहीं रही हैं (सारणी संख्या 4.20)।

जहां तक मानवाधिकार आयोग की बात है तो इनकी औपचारिकताएं इतनी पेचीदा हैं कि इन तक शिकायत पहुंचाने की प्रक्रिया की जानकारी जनजाति लोगों को तो क्या देश के नागरिकों को पूरी तरह से नहीं है। ही नहीं होगी, जनजाति समाज के युवाओं का मानना है मानवाधिकार आयोग का प्राथमिक स्तर नहीं है यदि इनकी सुविधाएं प्राथमिक स्तर अर्थात ग्रामीण स्तर पर मिले तो बात बने अन्यथा हमारे लिये तो मानवाधिकार आयोग रहे ना रहे बराबर है। **अतः यह प्राक्कल्पना सत्य सिद्ध हुई** है।

इस प्रकार अध्ययन से पूर्व अनुसंधान से सम्बन्धित बनाई गयी सभी प्राक्कल्पनाओं का सत्यापन किया गया जिसमें अधिकांश प्राक्कल्पनाऐं सत्य सिद्ध हुई।

अनुसंधान हेतु उभरते आयाम

मानव अधिकारों के उपर्युक्त प्रश्न सीमित हैं और एक छोटे समूह तथा छोटे क्षेत्र के साथ जुड़े हुए हैं पर मानव अधिकार एक व्यापक और वैश्विक प्रश्न हैं। कहना चाहिये कि मानव अधिकार के ये प्रश्न वैश्विक चिन्ताओं और वैश्विक सन्दर्भों के प्रश्न बन गये हैं। लेकिन जिस प्रकार के तथ्य इस अध्ययन में प्रस्तुत किये गये हैं – वे वैश्विक स्तर के सन्दर्भों से मिलते–जुलते हैं। यदि जनजाति क्षेत्रों की चर्चा करें तो सारे विश्व के जनजाति समाजों में सन्दर्भित प्रकार के आयाम विद्यमान है। जनजाति शोषण, उनके अपनी संस्कृति से न हटने देने के प्रयास – सभी कुछ इसी प्रकार की प्रक्रियाओं के परिणाम है। अभी भी इस क्षेत्र में कई और आधारों की व्याख्या करना जरूरी है। जैसे यह अध्ययन किया जा सकता है।

- मानव अधिकार के प्रासंगिक मुद्दों को सकारात्मक क्रियाओं के साथ कैसे जोड़ा जा सकता है।

- मानव अधिकारों की रक्षा के लिये क्या कोई वैश्विक संस्था का निर्माण किया जा सकता है, जिसमें विभिन्न देशों की विविधता भी सम्मिलित हो।

- जो भी परिस्थितियां हैं उनको किसी वैश्विक सामाजिक–सांस्कृतिक नीति के आाधारों में पिरोया जा सकता है। मानव अधिकार के घोषणा पत्र इसे नीतिगत आधार पर कैसे परिवर्तित कर सकते हैं।

- जनजाति क्षेत्रों में कई प्रकार के मानव अधिकारों के उल्लंघन हैं। उपनिवेशवाद और सामन्ती शासन व्यवस्था ने उनके प्राकृतिक स्त्रोतों पर प्रहार किया है। लोकतन्त्र ने उन्हें अधिकार तो दिये हैं– पर उन अधिकारों की भावना नहीं है। किसी भी प्रजातन्त्र में सामान्य नागरिकों को उन्हें प्राप्त अधिकारों की जानकारी होना चाहिये, पर यह अध्ययन और अन्य तथ्य स्पष्ट करते हैं कि वंचित समूहों को यह जानकारी प्राप्त नहीं है।जानकारी का अभाव मानव अधिकारों को व्यवहारिक रूप में लागू करने से रोकता है। मानव अधिकारों के लिये बनाए गये कानूनों की जानकारी भी लोगों को होनी चाहिये। इसीलिये ये अध्ययन भी आवश्यक हैं कि मानव अधिकार और तत्संबंधी कानूनों का प्रसार कैसे हो ?

- ऐसे कईं आंदोलन भी हुए हैं जिनका सम्बन्ध मानव अधिकारों के साथ जुड़ा हुआ है, पर उनका अध्ययन बहुत कम हुआ है। अतः ऐसे आंदोलनों की आवश्यकता है जो इन आंदोलनों की संरचना और परिणामों को स्पष्ट कर सके।

यह स्पष्ट है कि सीमित क्षेत्र और परिवेश का अध्ययन इन सब समस्याओं को अपने में नहीं संजों सकता पर अलग–अलग अध्ययनों के माध्यम से मानव अधिकार के विभिन्न आधारों को समझा जा सकता है। और उनको अर्न्तसम्बन्धित किया जा सकता है। इस अध्ययन में कईं सुत्र प्राप्त हुए हैं और इन्हीं सुत्रों के आधार परकार्य किया जा सकता है।

सुझाव

जनजातियों की सामाजिक व आर्थिक समस्याओं को समाप्त करने व जनजाति समाज को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करने के लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जो निम्नानुसार हैं –

- जनजातियों की सामाजिक कुरीतियों एवं सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए समाज सुधार आन्दोलनों की प्रक्रिया और सामाजिक स्तर पर इन प्रथाओं को समाप्त करने का बेड़ा उठाया जाए। इसके अतिरिक्त व्यापक स्तर पर इनके दुष्परिणामों को समाज के सदस्यों के सामने उजागर किया जाए। नुक्कड़–नाटकों, कठपुतलियों के खेल आदि

के द्वारा प्रचार–प्रसार किया जाए और ऐसी प्रथाओं पर सरकार द्वारा कड़े कानून बनाये जाए। जो भी व्यक्ति इस कानून को तोड़ने का प्रयास करे उसे सख्त से सख्त सजा दी जाए और समाज के सदस्यों को चाहिए कि वह इस काम में कानून की सहायता करें।

- यद्यपि वर्तमान समय में जनजाति समाज में तेजी से शिक्षा का प्रचार–प्रसार हो रहा है। जनजाति समाज के छात्र–छात्राएं बड़ी संख्या में स्कूली शिक्षा से उच्च तकनीकी स्तर की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, किन्तु ये शिक्षा मानवाधिकारों के प्रति जागृति में कोई सराहनीय योगदान नहीं दे पाई है। अतः मानवाधिकारों का पाठ बचपन से ही पढ़ाया जाना चाहिए। कानूनों से मानवाधिकारों के हनन की घटनाओं पर रोक नहीं लगाई जा सकती। मानवाधिकारों को आचरण में लाने की जरूरत है। आचरण बचपन से ही पनपते हैं, यही कारण है कि नैतिक शिक्षा के एक भाग के रूप में यदि मानवाधिकार का पाठ पढ़ाया जाए तो श्रेयस्कर होगा।

- वर्तमान समाज में शिक्षित जनजाति नेतृत्व नवीन सुधार संगठनों का गठन कर समाज में मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता लाने में व इसके सफल क्रियान्वयन के असफल प्रयास कर रहे हैं। राजस्थान आदिवासी संघ, आदिवासी विकास परिषद्, जनजाति एकता परिषद्, पाल महासभा जैसी कई संस्थाऐं जो समाज को मानवाधिकारों की जानकारी देने और स्वतंत्रता व स्वच्छन्दता में अन्तर बताने का प्रयास कर रही हैं, किन्तु इन संगठनों को अपने उद्देश्य में सफलता नहीं मिल सकी है। सरकार द्वारा क्रियान्वित की गई योजनाओं की सरकारी तंत्र द्वारा ही समय–समय पर जांच करवायी जाए तथा इस बात की भी जांच की जाए कि सरकार द्वारा जनजाति समाज के सदस्यों के लिए मुहैया करवायी गई राशि अथवा वस्तुओं का वितरण सुचारू रूप से हो रहा है अथवा नहीं।

- जनजाति क्षेत्रों में मानवीय संसाधन विकास का स्तर काफी निम्न है। सरकारी प्रयास के बाद भी यह सफल नहीं हो पा रहा है। सरकार को इन प्रयासों को और तीव्र करना चाहिए तथा कार्यक्रमों के संचालन में जनसामान्य तथा स्वयंसेवी संस्थाओं को सहभागी बनाना चाहिए। मानवाधिकारों के विकास के लिए समय–समय पर मानवाधिकारों संबंधित चर्चाएं व गोष्ठियों का आयोजन सरकार द्वारा करवाया जाना चाहिए। अशिक्षित लोगों को इस बारे में समझाना मुश्किल होता है, इसके द्वारा इसका प्रचार–प्रसार करना चाहिए।

स्पष्टतः सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि मानवाधिकारों को लेकर आज एकतरफा संकट खड़ा हो गया है। लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुए हैं। ऐसे वर्गों का प्रादुर्भाव हुआ है जो अपने अधिकारों व हितों की सुरक्षा के प्रति पूरी तरह चाक–चौबन्द हैं पर दूसरों के अधिकारों की तरफ से आंखे मूंदे हैं। आज ऐसे प्रयासों की आवश्यकता है जो लोगों में अधिकारों की चेतना जगाने के

साथ कर्तव्य बोध का वातावरण भी तैयार करें। मात्र अपने अधिकारों की चिंता दुर्भाग्यपूर्ण असंतुलन उत्पन्न कर सकती है। मानव समाज में समानता एक आवश्यक पहलू है। समाज के किसी एक वर्ग के विरूद्ध भेदभावपूर्ण, शोषणकारी व छूआछूत पूर्ण व्यवहार सामाजिक अन्याय तो है ही साथ ही उस वर्ग में घोर असंतोष पैदा कर देता है। अतः सामाजिक अन्याय की समस्या के समाधान की प्रक्रिया की अवहेलना कोई भी राष्ट्र या समाज नहीं कर सकता। सामाजिक न्याय से ही राष्ट्र व समाज का समुचित विकास सम्भव है।

प्रस्तुत अनुसंधान में यह जानने का प्रयास किया गया कि जनजाति समाज का मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता न होने के पीछे क्या कारण निहित हैं? यह कहा जा सकता है कि वास्तव में सरकार द्वारा कोई कारगर प्रयास नहीं किये जा रहे हैं। जो कार्यक्रम चल रहे हैं वो अत्यन्त छोटे स्तर पर हैं जहां तक जनजाति समाज की पहुंच नहीं है। अशिक्षा, अंधविश्वास, अज्ञानता एवं संकोच इसके प्रमुख कारण है जिसके कारण जनजाति समाज इन सब से दूर है। वर्तमान शिक्षा में अधिकारों को पढ़ाया जा रहा है परन्तु मानवाधिकार से संबंधित कोई विशेष विवरण नहीं दिया गया जिससे की उसे याद रखा जा सके। जनजाति समाज का काफी बड़ा भाग सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा ही रह गया है। जनजातियों में बीमारी, रूगण्ता और उपचारों के परम्परागत, देशज उपचारों का आज भी बोलबाला है। आज भी अधिकांश जनजाति रोगी आधुनिक चिकित्सालय में आने से पूर्व परम्परागत उपचारों के तरीकों को अपनाते और उनके प्रभावी परिणाम नहीं होने की वजह से आधुनिक चिकित्सा हेतु आते हैं। आधुनिक चिकित्सा में राहत नहीं मिलती है तो वे पुनः प्राकृतिक, आलौकिक शक्तियों की शरण में जाने में रूचि रखते हैं। जनजाति रोगियों तक आज भी आधुनिक चिकित्सा की व्यापक पहुंच नहीं है तथा चिकित्सालयों में गरीब, अज्ञानता के कारण कार्मिकों के शोषण का शिकार हो जाते हैं। अनुसूचित जनजाति के लोग पहले भी कृषि कार्य ही करते थे लेकिन सामाजिक कार्यो में एवं अशिक्षा के कारण उच्च एवं मध्यम स्तर की जातियों ने इनसे भूमि कम मूल्यों पर खरीद ली या छीन ली, जिससे अधिकार भूमि का मालिकानापन इनके हाथों से निकल गया।

निष्कर्ष रूप में यदि मानवाधिकारों का स्पष्ट व व्यापक रूप से लागू करने के स्तरीय प्रयास कियें जायें तो प्रदेश में मानवाधिकार ठोस व व्यावहारिक रूप से विभिन्न आयु वर्गों व स्तरों पर लागू किया जा सकता है।

❑❑❑

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
1	प्रस्तावना : मानवाधिकार एवंजनजातिसमाज	01–30
2	अध्ययन समस्या एवं अनुसंधान पद्धति	31–59
3	उत्तरदाताओं की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि	60–78
4	जनजातिसमाजमेंमानवाधिकार के मुद्दे एवंजागरूकता	79–132
5	वैयक्तिक अध्ययन	133–169
6	निष्कर्ष एवं सुझाव	170–185
	सन्दर्भ ग्रन्थ सूची	186–192
	मानवाधिकार घोषणा पत्र	

पुस्तक परिचय

प्रस्तुत पुस्तक "जनजाति युवा और मानवाधिकार" दक्षिणी राजस्थान के जनजाति बहुल क्षेत्रों में जनजाति समाज के युवा वर्ग में मानवाधिकारों की जागरूकता व उसकी स्थिति से सम्बन्धित है। प्रस्तुत पुस्तक में प्राथमिक तथ्यों के संकलन से यह जानने का प्रयास किया हैं कि वर्तमान में मानवाधिकार कि समस्याएं किन रूपों में स्थित हैं ? जनजाति समाज का युवा मानवाधिकार के सम्बन्ध में क्या और कितनी जानकारी रखता है ? वैयक्तिक अध्ययनों के द्वारा मानवाधिकार हनन के स्वरूपों को स्पष्ट किया गया है। जनजाति समाज की विभिन्न प्रथाओं के प्रति युवा वर्ग का दृष्टीकोण क्या है ? इन्हीं सन्दर्भों को व्यवहारिक दृष्टि से इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है एवं यह जानने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न सरकारी योजनाएं, स्वयं सेवी संस्थाएं एव संविधान में वर्णित नियम व कानून मानवाधिकार हनन की घटनाओं को रोकने में कितना सफल हो पाये हैं और इनकी असफलता के क्या कारण है।

इस प्रकार यह पुस्तक जनजाति युवा वर्ग को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने व अपने मानवाधिकारों के प्रति सजग करने में सहायक है।

लेखक परिचय

डॉ. प्रियंका चौबीसा गोविंद गुरू जनजातीय विश्वविद्यालय बांसवाडा द्वारा सम्बद्धता प्राप्त दिशा डिग्री कॉलेज, डूंगरपुर मे प्राचार्या पद पर नियुक्त है, साथ ही महाविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग की विभागाध्यक्ष भी है। इन्होंने मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय उदयपुर से स्नातकोत्तर एवं 'जनजाति युवा व मानवाधिकार' विषय पर पी एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है साथ ही सुखाडिया विश्वविद्यालय से एम.फिल, की उपाधि भी प्राप्त की है। डॉ. चौबीसा के कुछ शोध. पत्र राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। आपने स्नातकोत्तर के दौरान 'डुंगरपुर नगर के जनजाति समाज में मानवाधिकार (एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)' विषय पर लघु शोध प्रबन्ध भी लिखा है।

डॉ. चौबीसा की अनुसंधान रूचि जनजाति क्षेत्र में मानवाधिकार व जनजाति मान्यताओं पर आधारित शोषण पर ध्यान आकर्षित करने में हैं। आपने इसी विषय पर अधिकृत अनुसंधान कार्य भी पूर्ण किया है। महाविद्यालय स्तर पर 11 वर्षों के समाजशास्त्र विषय अध्यापन अनुभव के साथ वर्तमान में आप महाविद्यालय के प्रशासकीय संचालन के साथ रूचि संदर्भित शोध पत्रों के रचनाकार्य का संपादन भी कर रही हैं।

HIMANSHU Publications

हिमांशु पब्लिकेशन्स

464, हिरण मगरी, सेक्टर 11, उदयपुर 313 002 (राज.), फोन: 0294-2421087

4379/4-B, प्रकाश हाऊस, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2, मोबाईल: +91-96109-73739

₹ 695.00

ISBN: 978-81-7906-784-0

जनजाति युवा और मानवाधिकार

चौबीसा

HIMANSHU

जनजाति युवा और मानवाधिकार

प्रियंका चौबीसा

जनजाति युवा और मानवाधिकार

प्रियंका चौबीसा

जनजाति युवा और मानवाधिकार

पुस्तक परिचय

स्तुत पुस्तक "जनजाति युवा और मानवाधिकार" दक्षिणी राजस्थान के जनजाति बहुल क्षेत्रों में जनजाति माज के युवा वर्ग में मानवाधिकारों की जागरूकता व उसकी स्थिति से सम्बन्धित है। प्रस्तुत पुस्तक में थमिक तथ्यों के संकलन से यह जानने का प्रयास किया है कि वर्तमान में मानवाधिकार कि समस्याएं किन पों में स्थित है ? जनजाति समाज का युवा मानवाधिकार के सम्बन्ध में क्या और कितनी जानकारी रखता है ? इतिहासिक अध्ययनों के द्वारा मानवाधिकार हनन के स्वरूपों को स्पष्ट किया गया है। जनजाति समाज की भिन्न प्रथाओं के प्रति युवा वर्ग का दृष्टीकोण क्या है ? इन्हीं सन्दर्भों को व्यवहारिक दृष्टि से इस पुस्तक में स्तुत किया गया है एवं यह जानने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न सरकारी योजनाएं, स्वयं सेवी संस्थाएं व संविधान में वर्णित नियम व कानून मानवाधिकार हनन की घटनाओं को रोकने में कितना सफल हो पाये हैं र इनकी असफलता के क्या कारण है।

स प्रकार यह पुस्तक जनजाति युवा वर्ग को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने व अपने मानवाधिकारों के ति सजग करने में सहायक है।

लेखक परिचय

. प्रियंका चौबीसा गोविंद गुरु जनजातीय विश्वविद्यालय बांसवाड़ा द्वारा सम्बद्धता प्राप्त दिशा डिग्री कॉलेज, गरपुर में प्राचार्य पद पर नियुक्त है, साथ ही महाविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग की विभागाध्यक्ष भी है। होंने मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर से स्नातकोत्तर एवं 'जनजाति युवा व मानवाधिकार' विषय पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है साथ ही सुखाड़िया विश्वविद्यालय से एम.फिल. की उपाधि भी प्राप्त की है। . चौबीसा के कुछ शोध पत्र राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। आपने स्नातकोत्तर दौरान 'डूंगरपुर नगर के जनजाति समाज में मानवाधिकार (एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)' विषय पर लघु ध प्रबन्ध भी लिखा है।

. चौबीसा की अनुसंधान रुचि जनजाति क्षेत्र में मानवाधिकार व जनजाति मान्यताओं पर आधारित शोधन पर न आकर्षित करने में है। आपने इसी विषय पर अभिरुचि अनुसंधान कार्य भी पूर्ण किया है। महाविद्यालय स्तर 15 वर्षों के समाजशास्त्र विषय अध्यापन अनुभव के साथ वर्तमान में आप महाविद्यालय के प्रशासकीय चालन के साथ रुचि संदर्भित शोध पत्रों के रचनाकार्य का संपादन भी कर रही हैं।

हिमांशु पब्लिकेशन्स

[illegible], उदयपुर 313 002 (राज.), फोन: 0294-2421067

[illegible], नई दिल्ली-2, मोबाईल: +91-94139-73739

Web : [illegible] email : [illegible]@gmail.com

₹ 695.00

ISBN: [illegible]

मानवाधिकार का घोषणा पत्र

10 दिसम्बर, 1948 को पारित मानवाधिकार सम्बन्धी घोषणा पत्र में एक प्रस्तावना और 30 अनुच्छेद हैं संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानव अधिकारों के लिए जो सार्वभौम घोषणा की है, वह अविकल रूप से इस प्रकार है –

प्रस्तावना

चूंकि मानव परिवार के सभी सदस्यों की जन्मजात प्रतिष्ठा तथा अविविच्छन्न अधिकार स्वीकृति ही विश्व–शान्ति, न्याय और स्वतन्त्रता की बुनियाद हैं।

चूंकि मानवाधिकारों के प्रति उपेक्षा और घृणा के फलस्वरूप ऐसे बर्बर कार्य हुए जिनसे मनुष्य की आत्मा पर अत्याचार किया गया।

चूंकि एक ऐसी विश्व–व्यवस्था की उस स्थापना को जिसमें लोगों को अभिव्यक्ति और धर्म की स्वतन्त्रता तथा भय और अभाव से मुक्ति मिलेगी, सर्वसाधारण के लिए सर्वोच्च आकांक्षा घोषित की गई है।

चूंकि अगर अन्याययुक्त शासन और जुल्म के विरूद्ध लोगों को विद्रोह करने के लिए से ही अन्तिम समझकर मजबूर नहीं हो जाना हैं, तो कानून द्वारा नियम बनाकर मानवाधिकारों की रक्षा करना अनिवार्य है।

चूंकि राष्ट्रों के बीच मैत्री संबंध बढ़ाने को प्रश्रय देना आवश्यक है।

चूंकि संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देशों की जनता के बुनियादी मानवाधिकारों में, मानव व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा और योग्यता में और नर–नारियों के समान अधिकारों में अपने विश्वास को चार्टर में दोहराया गया है और यह निश्चय किया गया है कि अधिक व्यापक स्वतन्त्रता के लिए सामाजिक प्रगति एवं जीवन–यापन के बेहतर स्तर को प्रोन्नत किया जाए।

चूंकि सदस्य देशों ने यह प्रतिज्ञा की है कि वे संयुक्त राष्ट्र के सहयोग से मानवाधिकारों और बुनियादी स्वतन्त्रताओं के प्रति सार्वभौम सम्मान की वृद्धि करेंगे।

चूंकि इस प्रतिज्ञा को पूरी तरह से निभाने के लिए इन अधिकारों और स्वतन्त्रताओं का स्वरूप ठीक–ठाक समझना सबसे अधिक जरूरी है। इसलिए अब,

बृहत्सभा घोषित करती है कि–

मानवाधिकारों की यह सार्वभौम घोषणा सभी देशों और सभी लोगों की साझा उपलब्धी है। इसका उद्देश्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति और समाज का प्रत्येक भाग इस घोषणा को लगातार दृष्टि में रखते हुए अध्यापन और शिक्षा के द्वारा यह प्रयत्न करेगा कि इन अधिकारों और स्वतन्त्रताओं के प्रति सम्मान की भावना जाग्रत हो, और उत्तरोत्तर ऐसे राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय उपाय किए जाएँ जिनसे सदस्य देशों की जनता तथा उनके द्वारा अधिकृत प्रदेशों की जनता इन अधिकारों की सार्वभौम और प्रभावोत्पादक स्वीकृति दे और उनका पालन कराये।

घोषणा पत्र के 30 अनुच्छेद इस प्रकार हैं–

अनुच्छेद 1 : सभी मनुष्य जन्म से ही गरिमा और अधिकारों की दृष्टि से स्वतंत्र और समान हैं। उन्हें बुद्धि और अन्तश्चेतना प्रदान की गई है। उन्हें परस्पर भ्रातृत्व से कार्य करना चाहिए।

अनुच्छेद 2 : प्रत्येक व्यक्ति इस घोषणा में उपवर्णित सभी अधिकारों और स्वतंत्रताओं का हकदार है। इसमें मूलवंश, वर्ण, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीति या अन्य विचार, राष्ट्रीयता, सामाजिक उद्भव, सम्पत्ति, जन्म या अन्य प्रस्थिति के आधार पर कोई विभेद नहीं किया जाएगा। इसे अतिरिक्त किसी देश या राज्य क्षेत्र की चाहे वह स्वाधीन हो, न्यास के अधीन हो, अस्वशासी हो या प्रभुता पर किसी मर्यादा के अधीन हो, राजनीतिक अधिकारिता–विषयक या अन्तर्राष्ट्रीय प्रस्थिति के आधार पर उस देश या राज्य क्षेत्र के किसी व्यक्ति से कोई विभेद नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 3 : प्रत्येक व्यक्ति को प्राण स्वतंत्रता और दैहिक सुरक्षा का अधिकार है।

अनुच्छेद 4 : किसी भी व्यक्ति को दास या गुलाम नहीं रखा जाएगा। सभी प्रकार की दासता और दास–व्यापार प्रतिषिद्ध होगा।

अनुच्छेद 5 : किसी भी व्यक्ति को यंत्रणा नहीं दी जाएगी या उसके साथ क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार नहीं किया जाएगा या उसे ऐसा दण्ड नहीं दिया जाएगा।

अनुच्छेद 6 : प्रत्येक व्यक्ति को सर्वत्र विधि के समक्ष व्यक्ति के रूप में मान्यता का अधिकार है।

अनुच्छेद 7 : सभी व्यक्ति विधि के समक्ष समान हैं और किसी विभेद के बिना विधि के समान संरक्षण के हकदार हैं। सभी व्यक्ति इस घोषणा के अतिक्रमण में विभेद के विरूद्ध और ऐसे विभेद के उद्दीपन के विरूद्ध समान संरक्षण के हकदार हैं।

अनुच्छेद 8 : प्रत्येक व्यक्ति को संविधान या विधि द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों का अतिक्रमण करने वाले कार्यों के विरूद्ध राष्ट्रीय अधिकरणों के द्वारा प्रभावी उपचारों का अधिकार है।

अनुच्छेद 9 : किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढंग से गिरफ्तार, या निर्वासित नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 10 : प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकारों और बाध्यताओं के और उसके विरूद्ध आपराधिक आरोप के अवधारणा में पूर्ण रूप से स्वतंत्र और निष्पक्ष अधिकरण द्वारा ऋजु और सार्वजनिक सुनवाई का हकदार है।

अनुच्छेद 11 : **(i)** ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को जिस पर दांडिक अपराध का आरोप है, यह अधिकार है कि उसे तब तक निरपराध माना जाएगा जब तक कि उसे लोक विचारण में, जिसमें उसे अपनी प्रतिरक्षा के लिए आवश्यक सभी गारंटियाँ प्राप्त हो, विधि के अनुसार दोषी नहीं घोषित किया जाता।

(ii) किसी भी व्यक्ति को किसी ऐसे कार्याकलाप के कारण, जो किए जाने के समय राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अधीन दांडिक अपराध नहीं था, किसी दांडिक अपराध का दोषी अभिनिर्धारित नहीं किया जाएगा। उसशास्ति से अधिक शास्ति अधिरोपित नहीं की जाएगी, जो उस समय लागू थी, जब अपराध किया गया था।

अनुच्छेद 12 : किसी भी व्यक्ति को एकांतता, कुटुम्ब, घर या पत्र–व्यवहार के साथ मनमाना हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा और उसके सम्मान और ख्याति पर प्रहार नहीं किया जाएगा। प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे हस्तक्षेप या प्रहार के विरूद्ध विधि के संरक्षण का अधिकार है।

अनुच्छेद 13 : **(i)** प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक राज्य की सीमाओं के भीतर संचरण और निवास की स्वतंत्रता का अधिकार है।

(ii) प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी देश को या अपने देश को छोड़ने और अपने देश में वापस आने का अधिकार है।

(iii) इस अधिकार का अवलम्बन अराजनीतिक अपराधों या संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रयोजन और सिद्धान्तों के प्रतिकूल कार्यों से वास्तविक रूप से अद्‌भूत अभियोजनों की दशा में नहीं लिया जा सकेगा।

अनुच्छेद 14 : **(i)** प्रत्येक व्यक्ति को प्रताड़ना से बचने के लिए किसी भी देश में शरण लेने और सुख से रहने का अधिकार है।

(ii) अराजनीतिक अपराधों अथवा संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों के विरूद्ध होने वाले कार्यों के फलस्वरूप मूलतः दंडित व्यक्ति अधिकार से वंचित रहेंगे।

अनुच्छेद 15 : **(i)** प्रत्येक व्यक्त को राष्ट्रीयता का अधिकार है।

(ii) किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढंग से न तो राष्ट्रीयता से और न राष्ट्रीयता परिवर्तित करने के अधिकार से वंचित किया जाएगा।

अनुच्छेद 16 : **(i)** वयस्क पुरुषों और स्त्रियों को मूलवंश, राष्ट्रीयता या धर्म के कारण किसी सीमा के बिना, विवाह करने और कुटुम्ब स्थापित करने का अधिकार है। वे विवाह के विषय में, विवाहित जीवन काल में और उसके विघटन पर समान अधिकारों के हकदार हैं।

(ii) विवाह के इच्छुक पक्षकारों से स्वतंत्र और पूर्ण सम्मति से ही विवाह किया जाएगा।

(iii) कुटुम्ब समाज की नैसर्गिक और सामाजिक इकाई है और समाज और राज्य द्वारा संरक्षण का हकदार है।

अनुच्छेद 17 : **(i)** प्रत्येक व्यक्ति को अकेले या अन्य व्यक्तियों के साथ मिलकर सम्पत्ति का स्वामी बनने का अधिकार है।

(ii) किसी को भी उसकी सम्पत्ति से मनमाने ढंग से वंचित नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 18 : प्रत्येक व्यक्ति को विचार, अन्तःकरण और धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार है। इस अधिकार के अन्तर्गत अपने धर्म या विश्वास को परिवर्तित करने की स्वतंत्रता और अकेले या अन्य व्यक्तियों के साथ मिलकर तथा सार्वजनिक रूप से या अकेले शिक्षा, व्यवहार, पूजा और पालन में अपने धर्म या विश्वास को प्रकट करने की स्वतंत्रता भी है।

अनुच्छेद 19 : प्रत्येक व्यक्ति को अभिमत और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार है। इस अधिकार के अन्तर्गत हस्तक्षेप के बिना अभिमत रखने और किसी भी संचार माध्यम से और सीमाओं का विचार किए बिना जानकारी माँगने, प्राप्त करने और देने की स्वतंत्रता भी है।

अनुच्छेद 20 : **(i)** प्रत्येक व्यक्ति को शांतिपूर्वक सम्मेलन और संगम की स्वतंत्रता का अधिकार है।

(ii) किसी भी व्यक्ति को किसी संगम में सम्मिलित होने के लिए विवश नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 21 : **(i)** प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश की सरकार में सीधे या स्वतंत्रतापूर्वक चुने गए प्रतिनिधियों के माध्यम से भाग लेने का अधिकार है।

(ii) प्रत्येक व्यक्ति अपने देश की लोक सेवा में समान रूप से पहुँच का अधिकार है।

(iii) लोकमत सरकार के प्राधिकार का आधार होगा। इसकी अभिव्यक्ति आवधिक और वास्तविक निर्वाचनों में होगी, जो सार्वभौम और समान मताधिकार द्वारा होंगे तथा गुप्त मतदान द्वारा समतुल्य स्वतंत्र मतदान की प्रक्रिया द्वारा चुने जाएंगे।

अनुच्छेद 22 : प्रत्येक व्यक्ति को समाज के सदस्य के रूप में सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है और राष्ट्रीय प्रयास और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के माध्यम से और प्रत्येक राज्य के गठन और संसाधनों के अनुसार ऐसे आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को प्राप्त करने का हकदार है जो उसकी गरिमा और उसके व्यक्तित्व के उन्मुक्त विकास के लिए अनिवार्य है।

अनुच्छेद 23 : **(i)** प्रत्येक व्यक्ति को काम करने, नियोजन के स्वतंत्र चयन का, कार्य की न्यायोचित और अनुकूल दशाओं का और बेरोजगारी के विरूद्ध संरक्षण का अधिकार है।

(ii) प्रत्येक व्यक्ति को किसी विभेद के बिना, समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार है।

(iii) प्रत्येक व्यक्ति को जो कार्य करता है, ऐसे न्यायोचित और अनुकूल पारिश्रमिक का अधिकार है जिससे स्वयं उसका और उसके कुटुम्ब का मानव गरिमा के अनुरूप जीवन सुनिश्चित हो जाए और यदि आवश्यक हो तो सामाजिक संरक्षण के अन्य साधनों द्वारा उसे अनुपूरित किया जाए।

(iv) प्रत्येक व्यक्ति को अपने हितों के संरक्षण के लिए व्यवसाय संघ बनाने और उनमें सम्मिलित होने का अधिकार है।

अनुच्छेद 24 : प्रत्येक व्यक्ति को विश्राम और आराम का अधिकार है, जिसके अन्तर्गत कार्य के घण्टों की युक्ति–युक्त सीमा और वेतन सहित आवधिक छुट्टियाँ भी हैं।

अनुच्छेद 25 : **(i)** प्रत्येक व्यक्ति को एक ऐसे जीवन स्तर का अधिकार है, जो स्वयं उसके और उसके कुटुम्ब के स्वास्थ्य और कल्याण के लिए पर्याप्त है, जिसके अन्तर्गत भोजन, वस्त्र, निवास स्थान, चिकित्सा तथा आवश्यक सेवाएँ भी हैं और बेरोजगारी, रूग्णता, अशक्तता, वैधव्य या वृद्धावस्था या उसके नियंत्रण के बाहर परिस्थितियों में जीवन यापन के अभाव की दशा में सुरक्षा का अधिकार है।

(ii) प्रत्येक व्यक्ति मातृत्व और बाल्यकाल में विशेष देखभाल और सहायता के हकदार हैं। सभी बच्चे चाहे उनका जन्म विवाहित जीवन काल में हुआ हो या अन्यथा समान सामाजिक संरक्षण प्राप्त करेंगे।

अनुच्छेद 26 : **(i)** प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा का अधिकार है, जो कम से कम प्रारंभिक और मौलिक अवस्था में निःशुल्क होगी। प्रारंभिक शिक्षा अनिवार्य होगी। तकनीकी और वृत्तिक शिक्षा साधारणतः उपलब्धकराई जाएगी और उच्च शिक्षा सभी व्यक्तियों को गुणागुण के आधार पर समान रूप से प्राप्य होगी।

(ii) शिक्षा का लक्ष्य मानव शक्ति का पूर्ण विकास तथा मानवाधिकारों और मूल स्वतंत्रताओं के प्रति आदर की वृद्धि होगी। यह सभी राष्ट्रों, मूलवंश विषयक या धार्मिक समूहों को बीच समादर सहिष्णुता और मैत्री की अनुवृद्धि के लिए उद्दिष्ट होगी और शांति बनाये रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र के कार्यकलापों को अग्रसर करेगी।

(iii) माता–पिता का यह चयन करने का पूर्णाधिकार है कि उनकी संतान को किस प्रकार की शिक्षा दी जाएगी।

अनुच्छेद 27 : **(i)** प्रत्येक व्यक्ति को समुदाय के सांस्कृतिक जीवन में मुक्त रूप से भाग लेने, कलाओं का आनन्द लेने और वैज्ञानिक प्रगति और उसके फायदों में हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार है।

(ii) प्रत्येक व्यक्ति को स्वनिर्मित वैज्ञानिक, साहित्यिक अथवा कलात्मक कृति के फलस्वरूप होने वाले नैतिक और भौतिक हितों के संरक्षण का अधिकार है।

अनुच्छेद 28 : प्रत्येक व्यक्ति ऐसी सामाजिक और अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था का हकदार है, जिसमें इस घोषणा में वर्णित अधिकारों और स्वतंत्रताओं को पूर्ण रूप से प्राप्त किया जा सकता है।

अनुच्छेद 29 : **(i)** समाज के प्रति व्यक्ति के कुछ ऐसे कर्त्तव्य हैं, जिनसे उसके व्यक्तित्व का उन्मुक्त और पूर्ण विकास संभव है।

(ii) प्रत्येक व्यक्ति पर अपने अधिकारों और स्वतंत्रताओं के प्रयोग में वही मर्यादाएँ लगायी जाएंगी जो अन्य व्यक्तियों के अधिकारोंऔर स्वतंत्रताओं की सम्यक मान्यता और सम्मान सुनिश्चित करने और प्रजातंत्रात्मक समाज में नैतिकता, लोक व्यवस्था और साधारण कल्याण की न्यायोचित अपेक्षाओं को पूरा करने के प्रयोजन के लिए विधि द्वारा अवधारित की गई है।

(iii) किसी भी दशा में इन अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं का संयुक्त राष्ट्र के प्रयोजनों और सिद्धान्तों के प्रतिकूल प्रयोग नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 30 : इस घोषणा की किसी बात का यह निर्वचन नहीं किया जाएगा कि उसमें किसी राज्य या समूह या व्यक्ति के लिए कोई ऐसा कार्यकलाप या कोई ऐसा कार्य करने का अधिकार विवक्षित है, जिसका लक्ष्य इसमें उपवर्णित अधिकारों और स्वतंत्रताओं में से किसी का विनाश करना है।

इस प्रकार मानवाधिकारों की यह सार्वभौम घोषणा विश्व के मानव समाज के लिए मानवाधिकारों के संबंध में एक महत्वपूर्ण सुरक्षा कवच है।